इस्लामी सिद्धांतों का दर्शन शास्त्र

—— हिन्दी अनुवाद ——

(इस्लामी उसूल की फ़िलासफ़ी)
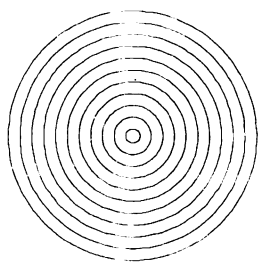
हज़रत मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद क़ादियानी
मसीहे मौऊद व महदी मौऊद अलैहिस्सलातो वस्सलाम

The Philosophy of The Teaching of Islam in Hindi
ISLAMI USOOL KI PHILOSOPHY
by
Hazrat Mirza Ghulam Ahmad
of Qadian
The founder of Ahmadiyya Movement in Islam

ISBN 81-7912-011-2

November 2001

Copies 5000

Published by :
NAZARAT NASHR-O-ISHAAT
Sadr Anjuman Ahmadiyya
Qadian - 143516
Distt. Gurdaspur (Pb.) India
Ph: 0091-(O) 1872-20749, 22870
Fax: 0091-(O) 1872-20105

Printed at
PRINTWELL,
146, Industrial Focal Point,
Amritsar - 143001 (Pb.) India

بسم الله الرحمن الرحيم
نحمده ونصلي على رسوله الكريم

संदेश

हज़रत मिर्ज़ा ताहिर अहमद साहिब, अन्तर्राष्ट्रीय इमाम जमाअत अहमदिया

अन्तर्राष्ट्रीय अहमदिया जमाअत इस महान लेख के प्रकाशन का सौ वर्षीय उत्सव मना रही है । जो कि लाहौर के धर्म महोत्सव सम्मेलन में 26 से 29 दिसम्बर 1896 ई. को पढ़ा गया । यह लेख इलाही समर्थन से लिखा गया। जिसकी सफ़लता की सूचना अल्लाह तआला ने आकाश वाणियों के द्वारा समय से पूर्व दे दी थी । और जिस की प्रसिद्धता सम्मेलन के आयोजन से पूर्व ही कर दी गयी थी । और लाहौर के कई सार्वजनिक स्थानों पर हैण्डबिल्ज़ और इश्तिहार लगा दिये गये थे ।

मोमिनों की जमाअत की शान और शौक़त के अनुसार हमारा धन्यवाद उत्सव उद्देश्य पूर्ण और श्रेष्ठ है । और हर प्रकार के विकारों और दिखावों से पवित्र है । अतएवं हम लोग ज़्यादातर बड़ी-बड़ी भाषाओं में अनुवाद कर के इस पुस्तक का सौ वर्षीय जश्न मना रहे हैं । हम आशा करते हैं कि संसार के अधिकतर देश इस की बरकतों से उच्च स्तर पर हिस्सा पायेंगे ।

केवल अल्लाह तआला के फ़ज़ल से हमने अब तक संसार की बावन* बड़ी भाषाओं में इस पुस्तक का अनुवाद और प्रकाशन पूर्ण कर लिया है । इनके अतिरिक्त कुछ और भाषाओं में भी अनुवाद का काम चल रहा है । और हम आशा करते हैं कि अल्लाह तआला के फ़ज़ल से वर्ष 1996 ई. के अंत तक हम इस कार्य को पूर्ण कर लेंगे ।

अल्लाह तआला उन सब को जिन्हों ने इस नेक कार्य को पूरा करने में अपनी योग्यता और समय दिया और प्रयास किये, अपने पुरस्कार प्रदान करे । आमीन ।

जनवरी *1996* ई.

मिर्ज़ा ताहिर अहमद
ख़लीफ़तउल मसीह राबे (चतुर्थ)

* *2001* ई. तक *54* भाषाओं में अनुवाद हो चुका है ।

सूची

प्रश्न न. 2

प्रश्न न. 3

प्रश्न न. 4

प्रश्न न. 5

लैकचर "इस्लामी उसूल की फ़लासफ़ी की

पृष्ठभूमि तथा टिप्पणी

मौलाना जलाल-उद-दीन साहिब शम्स मरहूम

रूहानी ख़ज़ाऐन जिल्द 10 पृष्ठ 8 से 18

एक सज्जन स्वामी साधू शिवगुण चन्दर नामक जो तीन चार साल तक हिन्दु धर्म के काईस्थ सम्प्रदाय के सुधार एवं सेवा का कार्य करते रहे थे, 1892 ई. में उनको यह विचार आया कि जब तक सभी लोग एकत्र न हों कोई लाभ न होगा । अन्ततः उनको एक धार्मिक सम्मेलन के आयोजन की सूझी । इस प्रकार का प्रथम सम्मेलन अजमेर में हुआ । इसके पश्चात् वह 1896 ई. में दूसरे सम्मेलन के लिए लाहौर के वातावरण को उचित समझ कर उसकी तैयारी में जुट गए ।[1]

स्वामी जी ने इस धार्मिक सम्मेलन के प्रबन्धों के लिए एक कमैटी बनाई जिसके प्रेसीडैंट मास्टर दुर्गा प्रसाद और चीफ़ सैक्रेटरी चीफ़ कोर्ट लाहौर के एक हिन्दु पलीडर लाला धनपत राए बी. ए., एल. एल. बी. थे । सम्मेलन के लिए 26-27-28 दिसम्बर 1896 ई. की तिथियां निश्चित हुईं और सम्मेलन की कारवाई के लिए निम्नलिखित छः मोडरेटर साहिबान नियुक्त किए गए :-

1. राए बहादुर बाबू परतोल चन्द साहिब जज चीफ़ कोर्ट पंजाब ।
2. ख़ान बहादुर शेख़ ख़ुदा बख़्श साहिब जज समाल काज़ कोर्ट लाहौर
3. राए बहादुर पंडित राधा किशन साहिब कोल पलीडर चीफ़ कोर्ट भूतपूर्वक गर्वनर जम्मू ।
4. हज़रत मौलवी हकीम नूर-उद-दीन (रज़ी अल्लाह तआला) साहिब शाही तबीब ।
5. राए भवानी दास साहिब एम.ए. एक्सट्रा इस्टेलमेंट आफ़ीसर जेहलम ।
6. जनाब सरदार जवाहर सिंह साहिब सैकट्री ख़ालसा कमैटी लाहौर ।[2]

1,2 - रिपोर्ट "जलसा आज़म मज़ाहब" पृष्ठ *253:254*, प्रकाशित सिद्दीकी प्रैस लाहौर *1897* ई.. ।

स्वामी शिवगुण चन्द्र साहिब ने कमैटी की ओर से सम्मेलन का विज्ञापन देते हुए मुसलमानों, ईसाईयों और आर्य साहिबों को क़सम दी कि उनके विख्यात ज्ञानी ज़रूर इस सम्मेलन में अपने अपने धर्म की विशेषताओं का बयान करें । और लिखा कि जो धर्म महोस्तव लाहौर टाऊन हाल में होना निश्चित हुआ है इसका उद्देश्य यही है कि सच्चे धर्म की सम्पूर्णताएं एवं गुण शिष्टाचारी लोगों के इकट्ठ में खुल कर उसका प्रेम दिलों में स्थापित हो जाए तथा उसके प्रमाणों और दलीलों को जनता भली भांति समझ ले । तथा इस प्रकार हर धर्म के बुज़ुर्ग प्रचारकों को अवसर प्राप्त हो कि वह अपने धर्म की सच्चाईयां दूसरों के मन में बिठा दें, तथा श्रोताओं को भी यह अवसर प्राप्त हो कि वह इन सब विद्वानों के इकट्ठ में हर भाषण की दूसरे भाषण के साथ तुलना करें तथा जहां सत्य की चमक पावें, ग्रहण करें ।

तथा आजकल धार्मिक झगड़ों के कारण दिलों में सच्चे धर्म को जानने की उत्सुकता भी पाई जाती है और इसके लिए उत्तम विधि यही जान पड़ती है कि वह समस्त धार्मिक आगू जो कि प्रचार करना एवं उपदेश देने का ही कार्य करते हैं वह एक स्थान पर एकत्र हों तथा अपने अपने धर्म के गुणों का पूछे गए विशेष प्रश्नों के उत्तरों के अनुसार बयान करें । अत: इस बहुत बड़े धार्मिक इकट्ठ में जो धर्म सच्चे परमेश्वर की ओर से होगा अवश्य ही अपनी विशेष चमक दिखाएगा । इसी उद्धेश्य से इस सम्मेलन का प्रस्ताव रखा गया है, तथा प्रत्येक सम्प्रदाय के उपदेशक भलीभांति जानते हैं कि अपने धर्म की सच्चाई खोलना उनका कर्त्तव्य है । अत: जिस हालत में इस सम्मेलन का निश्चय किया गया है कि सत्यताएं सामने आएं तो ख़ुदा तआला ने उनको यह उद्देश़्य पूरा करने का विशेष अवसर प्रदान किया है जो प्राय: मानव के वश में नहीं होता ।

फिर उनको प्रेरित करते हुए लिखा :

''क्या मैं मान सकता हूँ कि जो व्यक्ति दूसरों को एक भयानक रोग से ग्रस्त समझता है और विश्वास रखता है कि उसका बचाव मेरी औषधि में है और मानवता से हमदर्दी का दावा भी करता है वह ऐसे समय में जब ग़रीब रोगी उसको इलाज के लिए बुलाते हैं जानते बूझते हुए न आए ? मेरा मन

इस बात के लिए तड़प रहा है कि यह निर्णय हो जाए कि कौनसा धर्म वास्तव में वास्तविकताओं, और सच्चाईयों से भरा हुआ है तथा मेरे पास वह शब्द नहीं जिनके द्वारा मैं अपने इस सच्चे जोश को बयान कर सकूँ ।''

इस धार्मिक सम्मेलन अथवा धर्म महोत्वस लाहौर में सम्मलित होने के लिए विभिन्न धर्मों के प्रतिनिधियों ने स्वामी साहिब का प्रस्ताव स्वीकार किया और दिसम्बर 1896 ई. के बड़े दिन की छुट्टियों में लाहौर में एक महा धार्मिक सम्मेलन आयोजित हुआ जिसमें विभिन्न धर्मों के प्रतिनिधियों ने कमेटी की ओर से निश्चित पांच प्रश्नों पर भाषण दिए जो कि कमेटी की ओर से उत्तर देने के लिए पहले ही प्रकाशित कर दिए गए थे और उनके उत्तरों के लिए कमेटी की ओर से यह शर्त लगाई गई थी कि भाषण कर्ता अपने उत्तर को उस पुस्तक तक सीमित रखे जिसको वह धार्मिक तौर पर पवित्र मान चुका है ।

प्रश्न निम्नलिखित थे :-

1. मानव की शारीरिक, शिष्टाचारिक एवं अध्यात्मिक हालतें ।

2. मानव जीवन के बाद की दशा अर्थात् ''उकबा'' ।

3. संसार में मानव जीवन का वास्तविक उद्देश्य क्या है तथा वह उद्देश्य कैसे पूरा हो सकता है ?

4. कर्म अर्थात् मानव के कार्यों का इस संसार और परलोक में क्या प्रभाव होता है ?

5. ज्ञान और अध्यात्म के साधन क्या-क्या हैं ?

इस सम्मेलन में जो 26 दिसम्बर से 29 दिसम्बर तक हुआ सनातन धर्म, हिन्दु धर्म, आर्य समाज, फिरी थिंकर, ब्रह्मू समाज, थियो सॉफीकल सोसाइटी, रिलीजन ऑफ हारमनी, ईसाईयत, इस्लाम और सिक्ख धर्म के प्रतिनिधियों ने भाषण दिए । परन्तु इन भाषणों में केवल एक ही भाषण पूछे गए प्रश्नों का पूर्ण उत्तर था । जिस समय यह भाषण हज़रत मौलवी अब्दुल करीम (रज़ी अल्लाह तआला अन्हो) सयालकोटी बहुत ही लुभावने तरीके पर पढ़ रहे थे उस समय का उल्लेख नहीं किया जा सकता । किसी धर्म का कोई व्यक्ति ऐसा नहीं था जो कि बरबस प्रंशसा की आवाज़ बुलन्द न कर रहा हो ।

कोई व्यक्ति न था जो मस्त-मग्न न हो गया हो ।

भाषण देने का तरीका बहुत ही रोचक और दिलचस्प था । इससे अधिक इस लेख की विशेषता का और क्या प्रमाण होगा कि विरोधी तक वाह-वाह कर रहे थे । सुप्रसिद्ध अंग्रेज़ी समाचार पत्र ''सिविल ऐंड मिल्टरी गज़ट'' लाहौर ने ईसाई होने पर भी केवल इसी लेख की उच्चतम प्रशंसा लिखी और केवल इसी को उल्लेखनीय समझा ।

यह लेख हज़रत मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद साहिब क़ादियानी (अलैहिस्सलातो वस्सलाम) जमाअते अहमदिय्या के संस्थापक का लिखा हुआ था । इस लेख का निश्चित समय 2 घंटे था, समाप्त न होने के कारण 29 दिसम्बर का दिन बढ़ाया गया । ''पंजाब ऑबज़रवर'' ने इस लेख की प्रशंसा में कालमों के कालम भर दिए । ''पैसा'' समाचार पत्र, चौदहवीं सदी, ''सादिक़-उल-अख़बार'', ''मुख़बरे दकन'' एवं अख़बार ''जनरल व गौहरे आसफ़ी'' कलकत्ता आदि सभी समाचार पत्रों ने समस्त रूप से इसी लेख की प्रशंसा की। दूसरे सम्प्रदायों एवं धर्मों ने इसी लेख को सर्वश्रेष्ठ माना । इस धार्मिक सम्मेलन के सैक्रेट्री धनपत राए बी.ए., एल.एल.बी. पलीडर चीफ़ कोर्ट पंजाब पुस्तक ''रिपोर्ट धर्म महोत्सव'' में इस भाषण के सम्बन्ध में लिखते हैं :-

''पंडित गुरधन दास साहिब के भाषण उपरान्त आधे घंटे का अंतराल था। परन्तु क्योंकि इसके पश्चात् एक प्रसिद्ध इस्लामी वकील की ओर से भाषण दिया जाना था इसी कारण अधिकतर दर्शकों ने अपना अपना स्थान न छोड़ा । डेढ़ बजने में अभी बहुत समय शेष था कि इस्लामिया कॉलिज का विस्तृत मैदान जल्द-जल्द भरने लगा । और कुछ ही मिंटों में सारा स्थान भर गया । इस समय कोई सात और आठ हज़ार के बीच इकट्ठ था । विभिन्न धर्मों, सम्प्रदायों और विभिन्न सोसाईटियों के अधिकतर और उच्च वर्गीय और ज्ञानी व्यक्ति सम्मलित थे । हांलाकि कुर्सियों, मेज़ों तथा दरियों का विस्तृत प्रबन्ध था, फिर भी सैंकड़ों व्यक्तियों को खड़े होने के अतिरिक्त कुछ न बन पड़ा । तथा इन खड़े हुए श्रोतागणों में बड़े-बड़े धनी, पंजाब के नेता ज्ञानी-ध्यानी, बैरिस्टर, वक़ील । प्रोफ़ैसर, ऐक्सट्रा ऐसिस्टैंट, डाक्टर अर्थात् उच्च वर्ग की विभिन्न शाखाओं के हर प्रकार के व्यक्ति सम्मिलित थे तथा इन व्यक्तियों

के इस प्रकार इकट्ठा हो जाने और फ़िर बड़े ही धीरज एवं संयम के साथ जोश से पूरे पांच चार घंटे उस समय एक टांग पर खड़ा रहने से प्रत्यक्ष रूप से दिखाई पड़ता था कि इन समृद्ध व्यक्यिों को इस पवित्र आंदोलन से कितनी हमदर्दी थी । भाषण के लेखक स्वयं तो सम्मेलन में शामिल न थे परन्तु उन्होंने अपने विशेष शिष्य जनाब मौलवी अब्दुल करीम साहिब स्यालकोटी को लेख पढ़ने के लिए भेजा था । इस लेख के लिए कमेटी की ओर से तो केवल 2 घंटे ही थे, परन्तु श्रोताओं को आम तौर पर इस से कुछ ऐसी दिलचस्पी पैदा हो गई कि मौडरेटर साहिबान ने बड़े ही जोश और ख़ुशी के साथ आज्ञा दे दी कि जब तक यह लेख समाप्त न हो तब तक जलसे की कार्य वाही को समाप्त न किया जाए । उनका ऐसा फ़रमाना श्रोतागणों की इच्छा के अनुसार था । क्योंकि जब निश्चित समय समाप्त हो जाने पर मौलवी अबु यूसफ़ मुबारक अली साहिब ने अपना समय भी इसी लेख के पढ़ने के लिए दे दिया तो श्रोताओं और मौडरेटर साहिबान ने एक ख़ुशी का नारा मार कर मौलवी साहिब का धन्यवाद किया । सम्मेलन की कार्य वाही 4:30 बजे समाप्त हो जानी थी परन्तु जनता की इच्छा देखकर कार्यवाही 5:30 बजे के पश्चात तक जारी रखनी पड़ी क्योंकि यह लेख लगभग 4 घंटों में पूर्ण हुआ और आरम्भ से अन्त तक एकसार दिलचस्पी व लोकप्रियता अपने साथ रखता था ।''

अनोखी बात यह है कि जल्से के आयोजन से पहले ही 21 दिसम्बर 1896 ई. को जमाअत अहमदिया के संस्थापक ने अपने लेख के विजयी होने के समबन्ध में अल्लाह तआला से ख़बर पाकर एक विज्ञापन (इश्तिहार) प्रकाशित किया जिसकी नक़ल निम्नलिखित है :-

सत्यता के इच्छुकों के लिए एक महान शुभ समाचार

धर्म* महोत्सव जो लाहौर टाऊन हाल में 26-27-28 दिसम्बर 1896 ई.

* स्वामी शिवगुण चंदर साहिब ने अपने इश्तिहार में मुसलमानों और इसाई साहिबों और आर्या साहिबों को शपथ दी थी कि उन के मशहूर विद्वान इस जलसा में अपने अपने धर्म के गुण अवश्य ब्यान करें अत: हम स्वामी जी को सूचना देते हैं कि हम उस बुज़ुर्ग शपथ की इज़्ज़त के लिए आप की इच्छा

को होगा, उसमें इस सेवक का एक लेख जो कि क़ुरान शरीफ़ के चमत्कारों एवं विशेषताओं के बारे में पढ़ा जायेगा । यह वह लेख है जो कि मानवीय शक्तियों से उच्चतम और ख़ुदा तआला के चमत्कारों में से एक चमत्कार तथा उसकी विशेष सहायता से लिखा गया है । इसमें क़ुरान शरीफ़ की वह वास्तविकताएँ एवं चमत्कार लिखे गए हैं जिनसे सूर्य की भांति यह प्रकट हो जाएगा कि वास्तव में यह (क़ुर्आन शरीफ़) ख़ुदा तआला का कलाम (कथन) और समस्त संसारों के पालनहार (रब्बुल-आलमीन) की पुस्तक है । तथा जो व्यक्ति इस लेख को शुरू से अन्त तक पाचों प्रश्नों के उत्तर सुनेगा, मेरा विश्वास है कि एक नया ईमान (आस्था) उसमें जन्म लेगा तथा एक नया नूर (प्रकाश) उसमें चमक उठेगा, तथा ख़ुदा तआला के पवित्र कलाम की एक सम्पूर्ण व्याख्या (जामे तफ़सीर) उसके हाथ आजाएगी । मेरा भाषण मानवीय बेकार बातों से पवित्र तथा अहंवाद (डींग) के दाग़ से साफ़ है । मुझे केवल इस समय मानवता की हमदर्दी ने इस विज्ञापन के लिखने के लिए विवश किया है ताकि वह क़ुरान शरीफ़ की सुन्दरता का अध्ययन करें और देखें कि हमारे विरोधियों का कितना अत्याचार है कि वह अन्धकार से प्रेम करते हैं और प्रकाश से घृणा करते हैं, मुझे ख़ुदाए-अलीम (सब कुछ जानने वाला) ने आकाशवाणी द्वारा बताया है कि यह वह लेख है जो सब पर विजयी होगा । तथा इसमें सच्चाई, दार्शिनकता एवं मअरिफ़त (ख़ुदा की पहचान) का वह प्रकाश है जो दूसरे सम्प्रदाय इस शर्त पर कि सम्मलित हों और इसको शुरु से अन्त तक सुनें शर्मिंदा हो जाएँगे। तथा वह हरगिज़ ऐसा न कर सकेंगे कि अपनी धार्मिक पुस्तकों से यह चमत्कार दिखा सकें । चाहे वह ईसाई हों, चाहे सनातन धर्म वाले या कोई और क्योंकि ख़ुदा तआला ने यह इरादा फ़रमाया है कि उस दिन उस की पवित्र पुस्तक (क़ुरान शरीफ़) का चमत्कार

को पूरा करने के लिए तय्यार हैं । और इन्शाअल्लाह हमारा मज़मून आप के जलसा में पढ़ा जाएगा इस्लाम वह धर्म है जो ख़ुदा तआला का नाम बीच में आने से सच्चे मुसलमान को सम्पूर्ण आज्ञाकारी की हिदायत फ़रमाता है । परन्तु अब हम देखेंगे कि आप के भाई आर्यों और पादरियों साहिबों को अपने परमेश्वर या यसू की इज़्ज़त का कितना ख़्याल है और वह ऐसी महान परम सत्ता के नाम पर हाज़िर होने के लिए तय्यार हैं या नहीं ?

प्रकट हो । मैंने कशफ़ (स्वप्न की एक उच्च श्रेणी) की दशा में इसके सम्बन्ध में देखा है कि मेरे महल पर परोक्ष (ग़ैब) से एक हाथ मारा गया है, और उस हाथ के स्पर्श से उस महल में से एक नूर (प्रकाश) निकला जो कि आस पास फैल गया और मेरे हाथों पर भी उसकी रोशनी पड़ी, तब एक व्यक्ति जो कि मेरे पास खड़ा था, ऊंची आवाज़ से बोला

अल्लाहो अकबर ख़रिबत ख़ैबर ।

इसका अर्थ यह है कि इस महल से मतलब मेरा दिल है जो ज्योति के उतरने का स्थान है और वह ज्योति क़ुरानी अध्यात्म हैं । और ख़ैबर का अर्थ वह समस्त ख़राब धर्म हैं जिनमें शिरक और बिदअत (ख़ुदा तआला के अतिरिक्त किसी अन्य को पूजा योग्य समझना) की मिलावट है और मानव को ख़ुदा तआला का स्थान दिया गया है । अथवा ख़ुदा तआला की सिफ़ात (गुणों-विशेषताओं) को अपने स्थान से नीचे गिरा दिया है । अतः मुझे बताया गया कि इस लेख के ख़ूब फ़ैलने के पश्चात् झूठे धर्मों का झूठ ख़ुल जाएगा और क़ुरानी सत्य दिन प्रतिदिन धरती पर फैलता जाएगा, जब तक कि अपना समस्त चक्कर पूरा कर ले । फ़िर उसी कश्फ़ की दशा में आकाशवाणी की ओर मेरा ध्यान परिवर्तित किया गया और यह आकाशवाणी हुई

इन्नल्लाहा मअक इन्नल लाहा यक़ूमो ऐनाम क़ुमता ।

अर्थात् ख़ुदा तआला तेरे साथ है और ख़ुदा तआला वहीं ख़ड़ा होता है जहां तू खड़ा हो । यह ख़ुदाइ सहायता की ओर एक संकेत है । अब मैं अधिक लिखना नहीं चाहता । प्रत्येक को यही सूचना देता हूँ कि अपना अपना हर्ज करके भी इन इलाही बातों को सुनने के लिए अवश्य सम्मेलन की तिथियों पर लाहौर पधारें कि उनकी बुद्धि एवं आस्था को इससे वह लाभ होंगे जिसका वह विचार भी नहीं कर सकते । (वस्सलाम अला मनित्तबाअल हुदा)

विनम्र

मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद - क़ादियान ।

21 दिसम्बर 1896 ई.
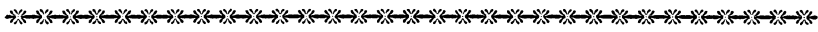
उचित प्रतीत होता है कि नमूने के रूप में दो तीन समाचार पत्रों के विचार लिख दिये जाएँ :-

सिविल ऐंड मिल्टरी गज़ट (लाहौर)

ने लिखा :-

''इस सम्मेलन में श्रोतागणों की विशेष रुचि मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद क़ादियानी के लैकचर के साथ थी, जो कि इस्लाम के पक्ष एवं रक्षा में सर्वश्रेष्ठ हैं । इस लैक्चर के सुनने के लिए दूर व निकट के विभिन्न सम्प्रदायों का एक बहुत बड़ा समूह उमड़ आया था । तथा क्योंकि मिर्ज़ा साहिब स्वंय तशरीफ़ नहीं ला सकते थे, इसलिए यह लैक्चर उनके एक होनहार शिष्य मुंशी अब्दुल करीम साहिब स्यालकोटी ने पढ़ कर सुनाया 27 तारीख़ को यह लैक्चर तीन घंटे तक होता रहा और जनता ने बड़ी ही प्रसन्नता और लगन से उसे सुना । परन्तु अभी केवल एक ही प्रश्न समाप्त हुआ । मौलवी अब्दुल करीम साहिब ने वादा किया कि यदि समय मिला तो शेष भाग भी सुना दूंगा । इसी कारण सम्मेलन आयोजित कर्ताओं और सदर ने यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया कि 29 दिसम्बर का दिन बढ़ा दिया जाए ।'' (अनुवाद)

समाचार पत्र ''चौदहवीं सदी'' (रावल पिंडी)

ने हज़रत अक़दस मसीहे मौऊद अलैहिस्सलाम के इस लैकचर पर निम्नलिखित टिपण्णी की:-

''इन लैकचरों में सर्वश्रेष्ठ लैकचर जो कि सम्मेलन का केन्द्र बिन्दु था मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद क़ादियानी का लैकचर था जिसको सुप्रसिद्ध भाषणकर्ता मौलवी अब्दुल करीम साहिब स्यालकोटी ने बहुत ही रोचक ढंग से पढ़ा । यह लैकचर दो दिन में समाप्त हुआ । 27 दिसम्बर लगभग 4 घंटे तथा 29 दिसम्बर को 2 घंटे तक होता रहा । कुल छ: घंटे में यह लैकचर समाप्त हुआ। जो कि लिखित रूप में 100 पृष्ठ तक का होगा । जब मौलवी अब्दुल करीम साहिब ने यह लैकचर शुरू किया और कैसा शुरू किया कि समस्त श्रोतागण लट्टू हो गए । पंक्ति-पंक्ति पर प्रशंसा के नारे लगाए जा रहे थे,

और बहुत बार एक एक वाक्य को दोबारा पढ़ने के लिए कहा जाता था । सारी आयु में हमारे कानों ने ऐसा लुभावना लैकचर नहीं सुना । दूसरे धर्मों में से जितने लोगों ने लैकचर दिये सच तो यह है कि वह पूछे गए प्रश्नों के उत्तर भी नहीं थे । अधिकतर स्पीकर केवल चौथे प्रश्न तक ही सीमित रहे और शेष प्रश्नों को उन्होंने बहुत कम प्रस्तुत किया और अधिक्तर सज्जन तो ऐसे भी थे जो बोलते तो बहुत थे, परन्तु उसमें जानदार बात कोई नहीं थी । सिवाए मिर्ज़ा साहिब के लैकचर के जो इन प्रश्नों का अलग-अलग विस्तृत तथा पूर्ण उत्तर था, और जिसको श्रोतागणों ने बड़ी ही दिलचस्पी और ध्यान से सुना और बहुत ही बहुमूल्य और क़ीमती समझा ।

हम मिर्ज़ा साहिब के मानने वाले नहीं हैं न ही उनका हमसे कोई समबन्ध है । परन्तु हम कभी न्याय का ख़ून नहीं कर सकते । औ न ही कोई शुद्ध आत्मा और सही विचारों वाला ऐसा कर सकता है । मिर्ज़ा साहिब ने समस्त प्रश्नों (जैसा कि उचित था) के उत्तर क़ुरान शरीफ़ से दिए और समस्त बड़े बड़े इस्लामी असूलों और उनके व्याख्यान को बौद्धिक और दार्शनिक तर्कों से ख़ूब सजाया । पहले बौद्धिक दलीलों से अल्लाह से सम्बोधित विषयों को प्रमाणित करना और उसके पश्चात् कलामे इलाही (ईश्वरीयवाणी) को प्रंसग के रूप में पढ़ना अनूठी शान दिखाता था ।

मिर्ज़ा साहिब ने न केवल क़ुरानी गुथ्थियों की फ़लासफ़ी प्रस्तुत की बल्कि क़ुर्आन के शब्दों की फ़लालौजी और फ़लासफ़ी का भी साथ-साथ वर्णन किया । अर्थात् मिर्ज़ा साहिब का समस्त लैकचर एक सम्पूर्ण और सब पर भारी लैकचर था । जिसमें अध्यात्म तत्व ज्ञान और हिकमतों के रहस्य मय असंख्य मोती चमक रहे थे । और इलाही फ़लसफ़ा को ऐसे ढंग से वर्णित किया गया था कि समस्त धर्मों के मानने वाले आश्चर्यचकित रह गए थे । किसी व्यक्ति के लैकचर के समय इतने व्यक्ति जमा नहीं थे जितने कि मिर्ज़ा साहिब के लैकचर के समय । सारा हाल ऊपर से नीचे तक भर रहा था और श्रोतागण सुनने में लीन हो रहे थे । मिर्ज़ा साहिब के लैकचर के समय और दूसरे वक्ताओं के लेकचरों की तुलना में इतना कहना क़ाफ़ी है कि मिर्ज़ा साहिब के लैकचर के समय जनता इस प्रकार आ-आ कर गिरी जैसे मधु पर

मक्खियां । परन्तु दूसरे लैक्चरों के समय बहुत से लोग दिलचस्पी न होने के कारण बैठे-बैठे उठ जाते थे । मौलवी मुहम्मद हुसैन बटालवी का लैकचर बिल्कुल मामूली था, वही मुल्लाई विचार थे जिनको हम लोग प्रतिदिन सुनते हैं । इसमें कोई अनोखी बात न थी । और मौलवी साहिब के दूसरे लैकचर के समय कई व्यक्ति उठ कर चले गए थे । मौलवी साहिब को अपना लैकचर पूरा करने के लिए कुछ मिन्टों का भी अधिक समय न दिया गया ।''

(समाचार पत्र ''चौदहवीं सदी'' रावलपिंडी अनुसार *1* फ़रवरी *1897* ई.)

समाचार पत्र ''जरनल व गौहर आसफ़ी'' कोलकाता

ने २४ जनवरी १८९७ ई. के प्रकाशन में ''धर्म महौत्सव'' और ''इस्लामी विजय'' के दौहरे सिरलैख से लिखा :-

''इससे पूर्व कि हम जलसे की कार्यवाही के बारे में बात करें, हमें यह अवश्य बता देना चाहिए कि हमारे समाचार पत्र के कालमों में जैसा कि उसके श्रोतागणों पर खुल चुका होगा कि यह बहस हो चुकी है कि धर्म महोत्सव में इस्लामी वक़ालत के लिए सबसे अधिक कौन अनुकूल था हमारे एक प्रसिद्ध संवाददाता ने सर्वप्रथम ख़ाली दिमाग़ होकर और सत्य को ध्यान में रख कर हज़रम मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद साहिब रईस क़ादियान को अपनी राय में नियुक्त किया था । जिनका एक और सज्जन ने भी पक्ष लिया था । जनाब मौलवी सैय्यद मोहम्मद फ़खरउद-दीन साहिब फ़ख़र ने बड़े ज़ोर के साथ इस चुनाव के बारे में जो अपनी स्वतन्त्र और बहुमुल्य राय प्रस्तुत की थी उसमें हज़रत मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद साहिब रईस क़ादियान-जनाब सर सैय्यद अहमद साहिब आफ़ अलीगढ़ का चुनाव किया था । और साथ ही इस्लामी वक़ालत के लिए निम्नलिखित नाम प्रस्तुतत किए थे । जनाब मौलवी अबु सईद मुहम्मद हुसैन बटालवी, जनाब मौलवी सैय्यद मुहम्मद अली कानपुरी, और मौलवी अहमद हुसैन साहिब अज़ीम आबादी, यहां यह बता देना भी अनुचित न होगा कि हमारे एक लोकल समाचार पत्र के एक संवाद दाता ने जनाब मौलवी अब्दुल हक़ साबिह देहलवी लेखक तफ़सीरे हक़्क़ानी को इस कार्य के लिए नियुक्त किया था ।''

इसके पश्चात् स्वामी शिवगुण चन्दर के विज्ञापन से उस भाग की नक़ल करके जिसमें उन्होंने विभिन्न भारतीय धार्मिक विद्वानों को बहुत लाज दिला दिला कर अपने अपने धर्म के जौहर दिखलाने के लिए प्रेरित किया था, यह समाचार पत्र लिखता है :-

''इस समारोह के विज्ञापनों आदि के देखने और आमन्त्रणों के पहुंचने पर भारत के किन-किन आलमों के आत्म सम्मान ने पवित्र धर्म इस्लाम की वकालत के लिए जोश दिखाया । और कहां तक उन्होंने इस्लाम का पक्ष लेने का बीड़ा उठा कर प्रमाणों एवं दलीलों द्वारा क़ुर्आन मजीद की धाक (फ़ुर्क़ानी हैबत) का सिक्का दूसरे धर्मों के दिन पर बिठाने की कोशिश की है ।

हमें ठोस प्रमाणों द्वारा पता चला है कि सम्मेलन कर्त्ताओं ने विशेष रूप से हज़रत मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद साहिब और सर सैय्यद अहमद साहिब को जलसे में सम्मिलित होने के लिए पत्र लिखा था । हज़रत मिर्ज़ा साहिब तो बीमारी के कारण स्वयं सम्मिलित न हो सके । परन्तु अपना लेख भेज कर अपने एक विशेष शिष्य जनाब मौलवी अब्दुल करीम साहिब स्यालकोटी को इसके पढ़ने के लिए नियुक्त फ़रमाया । परन्तु जनाब सर सैय्यद न सम्मिलित हुए न ही लेख आदि भेजा । इसका कारण यह न था कि वह बूढ़े हो चुके हैं, और ऐसे समारोहों में सम्मिलित होने के योग्य नहीं रहे, और न ही इसका कारण यह था कि उन्हीं दिनों में ऐजूक़ेशनल कान्फ्रैंस मेरठ निश्चित हो चुकी थी बल्कि इसका कारण यह था कि धार्मिक सम्मेलन उनके लिए रुचिपूर्ण नहीं रहे थे, क्योंकि उन्होंने अपनी चिट्ठी जिसको हम इनशा-अल्लाह-तआला अपने समाचार पत्र में किसी और समय संकलित करेंगे, स्पष्ट लिख दिया है कि वह कोई मौलवी नहीं । यह काम उपदेशकों और प्रचारकों का है । सम्मेलन के प्रोग्रामों को देखने और जांचने पर पता चला है कि जनाब मौलवी सैय्यद मुहम्मद अली साहिब कानपुरी, जनाब मौलवी अब्दुल हक़ साहिब दिहलवी और जनाब मौलवी अहमद हुसैन साहिब अज़ीम आबादी ने इस सम्मेलन के प्रति कोई जोशीली रुचि नहीं दिखाई । और न ही हमारे पवित्र धार्मिक विद्वानों में से किसी और उचित व्यक्ति ने अपना लेख पढ़ने या पढ़वाने का उद्देश्य प्रकट किया । हां एक-दो सज्जनों ने बड़ी हिम्मत करके इस मैदान में कदम रखा

परन्तु विपरीत, इसलिए उन्होंने या तो निश्चित प्रसंग पर कोई बात न की, या बे सिर-पैर के कुछ हांक दिया । जैसा कि हमारी अगली रिपोर्ट से स्पष्ट होगा । अंततः समारोह की कार्यवाही से यही प्रमाणित होता है कि केवल हज़रत मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद साहिब रईसे क़ादियान थे जिन्होंने इस मुक़ाबले के मैदान में इस्लामी पहलवानी का पूरा पक्ष लिया और उस चुनाव को सत्य प्रमाणित किया जो कि विशेषकर आपको इस्लामी वक़ील नियुक्त करने के लिए, पिशावर, रावलपिंडी जेहलम, शाहपुर, भैरा, ख़ौशाब, स्यालकोट, जम्मू, वज़ीराबाद, लाहौर, अमृतसर, गुरदासपुर, लुधियाना, शिमला, देहली, अम्बाला, रियासत पटियाला, देहरादून, इलाहाबाद, मदरास, बम्बई, हैदराबाद दकन, बैंगलौर आदि भारतीय शहरों के विभिन्न इस्लामी सम्प्रदायों से वकालत नामों द्वारा हस्ताक्षरों से सुसज्जित हो कर आया था । सत्य तो यह प्रमाणित होता है कि यदि इस समारोह में हज़रत मिर्ज़ा साहिब का लेख न होता तो इस्लामियों की दूसरे धर्मों के सामने ख़ूब हेटी होती, परन्तु ख़ुदा तआला के शक्तिशाली हाथ ने पवित्र इस्लाम को गिरने से बचा लिया । बल्कि उसको इस लेख द्वारा ऐसी विजय दिलाई कि समर्थक तो समर्थक, विरोधी भी प्राकृतिक जोश से कह उठे कि यह लेख सब पर विजयी है - विजयी है । बल्कि इस लेख के अंत पर इस्लाम के विरोधियों की ज़ुबानें यह कह उठीं कि इस्लाम की वास्तविकता अब खुली, और इस्लाम को विजय मिली । और जो चुनाव निशाने पर लगने वाले तीर की तरह ठीक निकला । अब इसका विरोध करने की बिल्कुल गुंजाईश ही नहीं, बल्कि वह हमारे गर्व व सम्मान को बढ़ाने वाला है । इसलिये इसमें इस्लामी श्रेष्ठता है और इसी में इस्लामी महानता और सत्यता है ।

यद्यपि भारत में यह दूसरा धर्म महोत्सव था, परन्तु इसने अपनी अद्भुत शान और सर्वश्रेष्ठा से सारे भारतीय सम्मेलनों और कान्फ्रेंसों को मात कर दिया है । भारतीय शहरों के विभिन्न सज्जन पुरुष इसमें सम्मलित हुए । और हम बड़ी प्रसन्नता के साथ यह प्रकट करते हैं कि हमारे मदरास ने भी इसमें भाग लिया है । सम्मेलन में रुचि इतनी बढ़ी कि निश्चित तीन दिनों पर एक दिन बढ़ाना पड़ा । सम्मेलन की कार्यवाही के लिए सम्मेलन कर्त्ताओं ने लाहौर
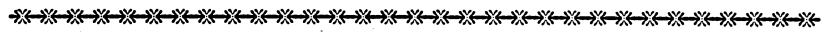
में सबसे बड़े भवन इस्लामिया कॉलिज को नियुक्त किया, परन्तु जनता इतनी अधिक थी कि भवन छोटा पड़ गया । समारोह की श्रेष्ठता का यह प्रमाण पर्याप्त है कि समस्त पंजाब के उच्च वर्ग के अतिरिक्त चीफ़ कोर्ट और हाई कोर्ट इलाहाबाद के ऑनरऐबल जज बाबू प्रतौल चन्द्रा साहिब और मिस्टर बैनर जी बड़ी ख़ुशी से सम्मिलित हुए ।''

यह लेख पहले ''रिपोर्ट धर्म महोत्सव'' लाहौर में बिल्कुल उसी प्रकार प्रकाशित हुआ । और जमाअते अहमदिया की ओर से यह लेख ''इस्लामी असूल की फ़लासफ़ी'' के सिरलेख से पुस्तक के रूप में प्रकाशित हुआ, और इसके कई ऐडीशन उर्दू और अंग्रेज़ी में प्रकाशित हो चुके है । इसके अतिरिक्त इसका अनुवाद फ्रांसीसी, डच, स्पैनिश, अरबी, जर्मन आदि भाषाओं में भी प्रकाशित हो चुका है । इस पर बड़े-बड़े दार्शनिकों और विदेशी समाचार पत्रों और पत्रिकाओं के सम्पादकों ने भी बड़े उत्तम रिवियु (टिप्पणियां) लिखे । और पश्चिमी दार्शिनकों ने इसकी बहुत प्रशंसा की । उदाहरणार्थ :-

1. ''ब्रस्टल टाईमज़ ऐंड मिरर'' ने लिखा :-

''निश्चित रूप से वह व्यक्ति जो इस प्रकार यूरोप और अमेरिका को सम्बोधित करता है, वह कोई साधारण व्यक्ति नहीं हो सकता ।''

2. ''सुपरीचुअल जरनल'' बौस्टन ने लिखा :-

''यह पुस्तक मानवता के लिए एक शुद्ध शुभ समाचार है ।''

3. ''थयोसौफ़ीकल बुक नौटस'' ने लिखा :-

''यह पुस्तक मुहम्मद (सल्लल्लाहो अलैहि वसल्लम) के धर्म की सर्वश्रेष्ठ और सुन्दरतम चित्र है ।''

4. ''इंडियन रिवियु'' ने लिखा :-

''इस पुस्तक के विचार प्रकाशपूर्ण, श्रेष्ठ और बुद्धिमता से परिपूर्ण हैं और पढ़ने वाले के मुख से बरबस इसकी प्रशंसा निकलती है ।''

5. ''मुस्लिम रिवियु'' ने लिखा :-

''इस पुस्तक का अध्ययन करने वाला इसमें बहुत से सच्चे, गहरे और आत्मा को नव जीवन प्रदान करने वाले विचार पाएगा ।''

(प्रंसग ''सिलसिला अहमदिया'' लेखक हज़रत साहिबज़ादा मिर्ज़ा बशीर

अहमद साहिब रज़ियल्लाहो अन्हो ।)

इस लेख की यह विशेषता है कि इसमें किसी दूसरे धर्म पर आक्रमण नहीं किया गया, बल्कि केवल इस्लाम के गुण बताए गए हैं । और प्रश्नों के उत्तर क़ुर्आन मजीद ही से दिए गए हैं । और इस प्रकार दिए गए हैं कि जिनसे इस्लाम का समस्त धर्मों से सर्वश्रेष्ठ और पूर्ण होना प्रमाणित होता है ।

***

*

इस्लाम

मान्यता और तर्क इलहामी किताब पर आधारित होना ज़रूरी है

आज इस परमशुभ सर्वधर्म सम्मेलन में - जिस का उद्देश्य यह है कि प्रत्येक आमन्त्रित सज्जन निश्चित घोषित प्रश्नों के अनुसार अपने अपने धर्म की विशेषतायें वर्णन करें - मैं इस्लाम धर्म की विशेषताओं पर प्रकाश डालूंगा ।

अपने वास्तविक विषय को प्रारम्भ करने से पूर्व यह बता देना अनिवार्य समझता हूँ कि मैं ने इस बात का विशेष रूप से ध्यान रखा है कि जो कुछ उपस्थित करूं ख़ुदा तआला की पवित्र कलाम क़ुर्आन शरीफ़ से उपस्थित करूं क्योंकि मेरे निकट यह आवश्यक है कि प्रत्येक व्यक्ति जो किसी धर्मग्रन्थ का अनुयायी हो और वह उस धर्मग्रन्थ को इलाही किताब समझता हो, वह उक्त प्रश्नों से सम्बन्धित प्रत्येक विषय का समाधान उसी इलाही किताब के उदाहरणों और हवालों द्वारा करे तथा अपने व्याख्यान को इतना न फैलाए कि जैसे वह एक नवीन इलाही किताब की रचना कर रहा है ।

अस्तु, आज हमें पवित्र क़ुर्आन के गुणोंको सिद्ध करना है तथा उसकी पूर्णता को प्रदर्शित करना है । इसलिए आवश्यक हैं कि हम किसी बात के उपस्थित करने में उस (क़ुर्आन शरीफ़) के अपने तथ्य से इधर उधर न जाएं तथा उसी के संकेत या व्याख्या के अनुसार और उसी की आयतों के हवाला से हर एक उद्देश्य को लिखें ताकि श्रोताओं को विभिन्न विचारों की तुलना करने में आसानी हो ।

चूंकि प्रत्येक सज्जन जो अपनी इलाही किताब के अनुयायी हैं अपनी अपनी इल्हामी किताब[1] के कथन की सीमा के अन्दर रहते हुए प्रमाण के लिए

---

[1] इल्हाम : ख़ुदा का कलाम जो किसी बंदे पर उतरे ।

उसी के उद्धरणों को उपस्थित करेंगे । अतएवं हमने यहाँ पर हदीसों[1] के कथन को स्थान नहीं दिया, चाहे समस्त शुद्ध हदीसें पवित्र क़ुर्आन से ही ली गई हैं और वह पूर्ण पुस्तक है जिस पर सब (धार्मिक) पुस्तकों का अन्त है । आज उसी पवित्र क़ुर्आन शरीफ़ की महानता के प्रकट होने का दिन है और हम ख़ुदा से दुआ मांगते हैं कि वह इस काम में हमारा सहायक हो । आमीन !

प्रथम प्रश्न का उत्तर

मानव की शारीरिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक अवस्थाएं

मान्यवर श्रोताओं को इस बात का ध्यान रहे कि इस विषय के प्रारम्भिक पृष्ठों में प्राक्कथन के रूप में कुछ ऐसे विचारों का उल्लेख हुआ है जो वैसे तो अनावश्यक दिखाई देती हैं किन्तु वास्तविक उत्तर समझने के लिये पहले उनका समझना अत्यावशयक है । अतएवं अपने व्याख्यान को स्पष्ट करने के लिए इन विचारों का उल्लेख किया गया है ताकि वास्तविक विषय समझने में कोई कठिनाई न हो ।

मनुष्य की तीन अवस्थाऐं

स्पष्ट हो कि, प्रथम प्रश्न मानव की शारीरिक, नैतिक एवं आत्मिक अवस्थाओं के विषय में है । इस सम्बन्ध में ज्ञात होना चाहिए कि ख़ुदा तआला के पवित्र कलाम क़ुर्आन शरीफ़ ने इन तीन अवस्थाओं को इस प्रकार विभाजन किया है कि इन तीनों के लिए पृथक्-पृथक् तीन स्रोत या तीन उद्‌गम स्थान निश्चित किए हैं जिन से यह विभिन्न-विभिन्न अवस्थाऐं निकलती हैं ।

प्रथम स्रोत - नफ़से अम्मारा

प्रथम स्रोत जो समस्त शारीरिक और प्रकृतिक अवस्थाओं का मूल और

---

[1] हदीस : हज़रत मुहम्मद स.अ.व. के पवित्र कथन अथवा उन के क्रिया कलाप जो लिखित रूप में सुरक्षित हैं हदीस कहलाते हैं (अनूवादक)

इकाई है । उसका नाम क़ुर्आन शरीफ़ ने नफ़से अम्मारा (तामसिक वृत्ति - बुराई की ओर उकसाने वाली वृत्ति) रखा है । जैसा कि वह फ़र्माता है :-

إِنَّ النَّفْسَ لَأَمَّارَةٌ بِالسُّوءِ ۱

इन्नन्नफ़्सा ल अम्मारतुन बिस्सूए ।

अर्थात् तामसिक वृत्ति की यह विशेशता है कि वह मनुष्य को बुराई की ओर जो उसकी पूर्णता के विरुद्ध और उसकी नैतिक अवस्थाओं के विपरीत है झुकाती है और अनुचित बुरे मार्गों पर चलाना चाहती है । सारांश यह कि पतन और गिरावट की ओर जाना मनुष्य की एक ऐसी अवस्था है जो उसकी नैतिक और चारित्रिक अवस्था से पूर्व स्वभाविक तौर पर उस पर छायी रहती है । और यह अवस्था उस समय तक स्वाभाविक और प्राकृतिक कहलाती है जब तक मनुष्य बुद्धि और मअरिफ़त (ख़ुदाई ज्ञान) की छत्रछाया में नहीं चलता अपितु पशुओं के समान खाने पीने, सोने, जागने या क्रोध होने, और जोश दिखलाने आदि विषयों में प्राकृतिक भावनाओं का अनुयायी रहता है और जब मानव, बुद्धि और आत्मिक बल के परामर्श से प्रकृति भावनाओं का अनुयायी रहता है और मध्यवर्ती मार्ग का धियान रखता है । उस समय इन तीनों दिशाओं का नाम प्राकृतिक अवस्थाएं नहीं रहता अपितु उस समय यह नैतिक अवस्थाएं कहलाती हैं । जैसा कि आगे भी कुछ वर्णन इसका आऐगा ।

द्वितीय अवस्था राजसिक वृत्ति - (नफ़से लव्वामा) मनुष्य को उस के गुनाहों पर मलामत करने वाला नफ़स

चारित्रिक अवस्थाओं के दूसरे स्रोत का नाम पवित्र क़ुर्आन में राजसिक वृत्ति (नफसे लव्वामा है) है जैसा कि पवित्र क़ुर्आन में अल्लाह तआला फ़र्माता है कि :

وَلَآ أُقْسِمُ بِالنَّفْسِ اللَّوَّامَةِ ۝ ۲

---

۱ يوسف: ۵۴ ۲ القيامة: ۳

वला उक़्सिमो बिन्नफ़्सिल्लव्वामते ।

अर्थात् (अल्लाह का कथन है कि) मैं उस वृत्ति की शपथ खाता हूँ जो असत्कर्मों और कुकर्मों की प्रत्येक दशा में अपने को आप धिक्कारती है । यह मनकी दूसरी अवस्था अर्थात् राजसिक अवस्थाओं का स्रोत है जिस से नैतिक हालतें पैदा होती हैं और इस स्तर पर पहुँच कर मनुष्य अन्य पाशविक वृत्तियों से मुक्ति पाता है । इस स्थान पर राजसिक वृत्ति की शपथ खाना उसको मान, प्रतिष्ठा और महानता प्रदान करने के लिए हैं । तात्पर्य यह है कि उसकी आत्मा तामसिक वृत्ति (नफ़से अम्मारा) से राजसिक वृत्ति (नफ़से लव्वामा) बन कर इस उन्नति के कारण अल्लाह के दरबार में सम्मान प्राप्त करने के योग्य हो गई मन की इस अवस्था का नाम राजसिक वृत्ति इसलिए रखा कि यह मनुष्य को कुमार्ग से रोकती और अपने स्वयं को धिक्कारती है और इस पर कदापि सहमत नहीं होती कि मनुष्य अपने प्राकृतिक छिछले स्वभावों में निरंकुश चले तथा पशुओं के समान जीवन यापन करे । अपितु उसे इस बात की चाहत रहती है कि उस से महान् चरित्र एवं उच्चादर्श का प्रदर्शन हो तथा जीवन के क्षेत्रों में कोई भी अनुचित कार्य न होने पाये एवं प्राकृतिक मनोभाव तथा स्वाभाविक इच्छाएं बुद्धि के अंकुश के नीचे तथा उसी के परामर्श से प्रगट हों । क्योंकि वह वृत्ति अनैतिक चञ्चलता पर धिक्कारती है अतः मनकी उस वृत्ति का नाम राजसिक वृत्ति अर्थात् बहुत धिक्कारने वाली वृत्ति रखा है और राजसिक प्राकृतिक मनोभाव को पसन्द नहीं करती अपितु अपने आप को धिक्कारती रहती है, किन्तु पुण्यों और सत्कर्मों को पूर्ण रूप से करने में असमर्थ रहती है और कभी ना कभी प्राकृतिक मनोभाव उस पर छा जाते हैं । तब उसका पतन हो जाता है और ठोकर खाता है । सारांश यह कि उस समय वह एक ऐसे कोमल शिशु के समान होती है जो गिरना नहीं चाहता किन्तु अपनी दुर्बलता के कारण गिर पड़ता है । पुनः अपनी दुर्बलता पर प्रायश्चित करता है। कहने का तात्पर्य यह है कि यह मन की वह अवस्था है कि जब मन महान चरित्र को अपने भीतर एकत्र करता है और चञ्चलताओं तथा शरारतों से तंग

आकर उनको तिलाञ्जलि देने का निर्णय करता है परन्तु पूर्ण रूप से उनपर विजय प्राप्त नहीं कर सकता ।

तीसरी अवस्था सात्विक वृत्ति (नफ़से मुतमइन्ना) अल्लाह से संतुष्टी प्राप्त कर लेने वाली आत्मा

इसके पश्चात् एक तीसरा स्रोत है जिसको आध्यात्मिक अवस्थाओं का उद्गम स्थान कहना चाहिए उसका नाम पवित्र क़ुर्आन मजीद ने सात्विक वृत्ति रखा है । जैसा कि उसका कथन है :-

يٰۤاَيَّتُهَا النَّفۡسُ الۡمُطۡمَئِنَّةُ ۙ ارۡجِعِىۡۤ اِلٰى رَبِّكِ رَاضِيَةً
مَّرۡضِيَّةً ۚ فَادۡخُلِىۡ فِىۡ عِبٰدِىۡ ۙ وَادۡخُلِىۡ جَنَّتِىۡ ۝ ـه

या अय्यतो हन् नफ़्सुल् मुत्मइन्नातुर्जेई एला रब्बे के राज़ियतम्म ज़ेय: फ़द्ख़ोली फ़ी एबादी वद्ख़ोली जन्नती ।

अर्थात् हे पूर्ण शांतिमय और सन्तोष-युक्त आत्मा जो ख़ुदा से शान्ति और सन्तोष प्राप्त कर चुकी है अपने अल्लाह की ओर वापस चली आ । तू उससे प्रसन्न तथा वह तुझ से प्रसन्न है । अत: तू मेरे भक्तों में शामिल हो जा और मेरी जन्नत में प्रविष्ट हो जा । यह वह स्थिति हैं जिस में मन और आत्मा समस्त दुर्बलताओं से मुक्ति पाने के पश्चात् आध्यात्मिक (रोहानी) बल से भर जाती है और अल्लाह से घनिष्ठ और अटूट सम्बन्ध स्थापित कर लेती है क्योंकि उसके बिना वह एक क्षण जीवित नहीं रह सकती । जिस प्रकार जल का स्वभाव ऊपर से नीचे गिरने का है और अपनी अधिकता और रोकों के दूर होने के कारण उसका प्रवाह अति तीव्र गति से होता है उसी प्रकार वह आत्मा भी अल्लाह की ओ बहती चली जाती है । पवित्र क़ुर्आन में अल्लाह का उक्त संकेत इसी ओर है कि वह आत्मा जिसे अपने अल्लाह की ओर से पूर्ण सन्तोष और शान्ति मिल गई उसी (अपने ख़ुदा) की ओर वापस चली आ । तात्पर्य यह कि वह आत्मा मरने के पश्चात् नहीं, अपितु इसी जीवन में एक महान

ـه الفجر: ٢٨-٣١

परिवर्तन लाती है; और मृत्योपरान्त नहीं, अपितु इसी जीवन में उसे एक जन्नत मिलती है । जैसा कि पवित्र क़ुर्आन का यह कथन है कि अपने पालनहार अल्लाह की ओर आ जा । ऐसा ही उस समय उसका अल्लाह की ओर से लालन पालन होता है और अल्लाह के प्रति प्रेम और श्रद्धा उसका भोजन बन जाता है और उसी जीवनदाता स्रोत से जलपान करती है । इसलिए उसे मृत्यु से मुक्ति मिल जाती है । जैसा कि एक अन्य स्थान पर अल्लाह का कथन है कि :-

قَدْ اَفْلَحَ مَنْ زَكّٰىهَا ۝ وَقَدْ خَابَ مَنْ دَسّٰىهَا ۝ [1]

क़द् अफ़्लह मन ज़क्काहा व क़द् ख़ाबा मन दस्साहा ।

अर्थात् जिसने सांसारिक उद्वेगों से अपने मन और अपनी आत्मा को शुद्ध रखा, वह मुक्ति पा गया और वह बरबाद नहीं होगा । परन्तु जिसने सांसारिक भावनाओं में सवंय को छुपा दिया वह जीवन से निराश हो गया ।

सारांश यह कि यह तीन अवस्थाएं हैं जिनको दूसरे शब्दों में स्वाभाविक, चारित्रिक और आत्मिक अवस्थाएं कह सकते हैं । चूँकि स्वाभाविक इच्छाएं अपनी चरम सीमा पर पहुँचकर अति भयानक रूप धारण कर लेती हैं तथा चरित्र और आध्यात्मिकता का विनाश कर देती हैं । अतः ख़ुदा तआला की पवित्र पुस्तक (क़ुर्आन शरीफ़) में उनका नाम तामसिक वृत्ति की अवस्थाएं रखा जाता है ।

यदि यह प्रश्न हो कि मानव की प्राकृतिक अवस्थाओं पर पवित्र क़ुर्आन का क्या प्रभाव है ? और इस विषय में उसका क्या आदेश है ? और क्रियात्मक रूप में किस सीमा तक उसको रखना चाहता है ? इसका उत्तर यह है कि पवित्र क़ुर्आन के अनुसार मानव की प्रकृतिक अवस्थाओं का उसकी चरित्रगत और आध्यात्मिक अवस्थाओं से अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध है, यहाँ तक मनुष्य के खाने पीने के ढंग भी मानव की चारित्रिक और आत्मिक अवस्थाओं पर प्रभाव डालते हैं और यदि इन प्राकृतिक अवस्थाओं से शरीअत आदेशानुसार अर्थात् पवित्र क़ुर्आन के नियमानुसार काम लिया जाए तो जिस प्रकार नमक की खान

---

[1] الشمس : ۱۰ ـ ۱۱

में पड़ कर प्रत्येक वस्तु लवण ही बन जाती है उसी प्रकार ये सभी अवस्थाएं चरित्र का रूप धारण कर लेती हैं और आध्यात्मिकता पर गहरा प्रभाव डालती हैं । इसीलिए पवित्र क़ुर्आन ने सर्व प्रकार की उपासनाओं और आन्तरिक शुद्धताओं के उद्देश्यों और ख़ुदा की ओर झुकने के लिए शारीरिक पवित्रता, शिष्टता एवं शारीरिक सन्तुलन को महान् स्थान दिया है । विचार करने के पश्चात् यही फ़िलासफ़ी उपयुक्त मालूम होती है कि शारीरिक नियमों का मन और आत्मा पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है । जैसा कि हम देखते हैं कि हमारी स्वाभाविक क्रियाएं यद्यपि बाह्यरूप से शारीरिक हैं किन्तु हमारी आध्यात्मिक अवस्थाओं पर अवश्य ही उनका प्रभाव है । उदाहारणतया जब हमारे नेत्र रोना प्रारम्भ करें, चाहे वे बनावटी रूप से ही रोएँ, परन्तु तत्क्षण उन अश्रुओं की एक धारा हृदय पर जा कर गिरती है तब हृदय भी नेत्रों का अनुसरण करके दुःखित हो जाता है । इसी प्रकार जब हम बनावटी रूप से ही हंसना प्रारम्भ करें तो हृदय में भी एक प्रकार की प्रसन्नता उत्पन्न हो जाती है । यह भी देखा जाता है कि शारीरिक सज्दा (ख़ुदा के आगे सर झुकाना) भी आत्मा में नम्रता और विनय की अवस्था उत्पन्न कर देता है । इसके विपरीत हम यह भी देखते हैं कि जब हम गर्दन को ऊपर खींचकर और वक्ष को उभार कर चलें तो यह अवस्था हमारे मन में एक गर्व और अहंभाव उत्पन्न कर देती है । इस प्रकार इन उदाहरणों से भली भांति स्पष्ट हो जाता है कि शारीरिक गतिविधियों का रूहानी हालतों पर प्रभाव पड़ता है ।

ठीक इसी प्रकार नाना अनुभवों से यह स्पष्ट हो गया है कि भांति-भांति के भोजनों का भी बुद्धि, आत्मा और मन पर अवश्य प्रभाव पड़ता है । उदाहारणतया तनिक विचार कीजिए कि जो लोग कभी मांस नहीं खाते, शनैः-शनैः उनकी वीर-भावना का ह्रास हो जाता हैं, यहाँ तक कि वे हृदय के अति दुर्बल हो जाते हैं और ख़ुदा की दी हुई श्लाघनीय शक्ति को खो बैठते हैं । इसका प्रमाण ख़ुदा के प्राकृतिक विधान से इस प्रकार मिल सकता है कि पशुओं में जितने घास खाने वाले पशु हैं कोई भी उन में से वह वीरता नहीं

रखता जो एक मांसाहारी में होती है । यही प्राकृतिक विधान पक्षियों में भी देखा जाता है । अतः इस में क्या शक है कि चरित्र पर भोजन और खाद्य-पदार्थों का प्रभाव अवश्य है । परन्तु जो लोग दिन रात मांस खाने पर बल देते हैं तथा शाक और भाजियों का प्रयोग बहुत कम करते हैं उनमें दया और नम्रता आदि चरित्र की विशेषताएं न्यून मात्रा में होती हैं जबकि मध्य मार्ग का अनुसरण करने वाले दोनों प्रकार की चारित्रिक विशेषताओं के स्वामी बनते हैं। इसी तथ्य के उपलक्ष्य ख़ुदा तआला ने पवित्र क़ुर्आन मेंफरमाया है :-

كُلُوْا وَاشْرَبُوْا وَلَا تُسْرِفُوْا ؕ ⁸

क़ुलू व श्रबू व ला तुस्रेफ़ू

अर्थात् मांस भी खाओ और अन्य शाक भाजी भी खाओ परन्तु किसी चीज़ का हद से ज़्यादा सेवन ना करो ताकि उसका चारित्रिक अवस्था पर कुप्रभाव न पड़े तथा यह ज़ियादती स्वास्थ्य के लिए भी हानिकारक न हो ।

जिस प्रकार शारीरिक क्रिया-कलापों का मन और आत्मा पर प्रभाव पड़ता है । उसी प्रकार मन और आत्मा का प्रभाव भी शरीर पर पड़ता है । जिस व्यक्ति को कोई दुःख या कष्ट पहुँचे तो उस के नेत्र आंसुओं से भर जाते हैं और जिस को प्रसन्नता हो तो वह मुस्कराता है । हमारा खाना पीना, जागना, शयन करना, विश्राम करना, स्नान करना अथवा अन्य कोई क्रिया करना इत्यादि जितनी भी स्वाभाविक क्रियाएं हैं, यह सभी आवश्यक क्रियाएं हमारी मानसिक और आत्मिक अवस्थाओं पर प्रभाव डालती हैं । हमारी शारीरिक बनावट का हमारी मानवता से गहरा संबन्ध है । मस्तिष्क के एक विशेष स्थान पर प्रहार होने से स्मरण शक्ति का सर्वथा विनाश हो जाता है और दूसरे स्थान पर प्रहार होने से होश और चेतना समाप्त हो जाती है । रोग की विभीषिका की एक विषैली वायु शरीर पर कितनी शीघ्र प्रभाव डाल कर पुनः हृदय को प्रभावित करती है और क्षणामात्र में वह आन्तरिक व्यवस्था जिस से चरित्र की सम्पूर्ण व्यवस्था सम्बन्धित है, अस्त व्यस्त होने लगती है यहां तक कि मनुष्य पागल सा हो कर कुछ ही क्षणों में मर जाता है । सारांश

---

8 الاعراف : ٣٢

यह कि शारीरिक कष्ट या रोग भी आश्चर्यजनक प्रतिक्रिया दिखलाते हैं, जिन से सिद्ध होता है कि आत्मा और शरीर का एक ऐसा सम्बन्ध है कि इस भेद को खोलना मनुष्य का कार्य नहीं । इसके अतिरिक्त इस अटूट सम्बन्ध के प्रमाण में यह उक्ति दे सकते हैं कि विचार करने पर विदित होता है कि जीवात्मा की जननी शरीर ही है । गर्भवती महिला के गर्भ में जीवनात्मा कभी ऊपर से नहीं गिरती अपितु वह एक प्रकार की ज्योति है जो वीर्य में ही गुप्त रूप में छुपी रहती है और शरीर के विकास के साथ वह भी विकसित होती जाती है । ख़ुदा तआला का पवित्र कलाम हमें समझाता है कि आत्मा उस शरीर में से ही उत्पन्न हो जाती है जो वीर्य द्वारा गर्भ में तैयार होता है । जैसा कि अल्लाह तआला का क़ुर्आन शरीफ़ में कथन है :-

ثُمَّ أَنْشَأْنٰهُ خَلْقًا اٰخَرَ فَتَبٰرَكَ اللّٰهُ أَحْسَنُ الْخٰلِقِيْنَ ؁ ۱

सुम्मा अनशानाहो ख़्लक़न आख़रा । फ़तबारकल्लाहो अहसनुल ख़ालेक़ीन ।

अर्थात् पुन: हम उस शरीर को जो गर्भ में तैयार हुआ था एक और जन्म के रंग में लाते हैं और एक नवीन सृष्टि का रूप उसे प्रदान करते हैं जिसे जीवात्मा का नाम दिया जाता है । और ख़ुदा असीम वरदानों का स्रोत है और ऐसा पैदा करने वाला है कि उस जैसा अन्य कोई नहीं । ख़ुदा ने यह जो कहा है कि हम उसी शरीर में से एक अन्य सृष्टि का निर्माण करते हैं, यह एक गहरा रहस्य जीवात्मा की वास्तविकता को दिखला रहा है और उन अति घनिष्ठ सम्बन्धों की ओर संकेत कर रहा है जो आत्मा और शरीर के मध्य स्थित हैं और यह संकेत हमें इस बात की भी शिक्षा देता है कि मनुष्य की समस्त शारीरिक एवं प्राकृतिक और स्वाभाविक क्रियाएं और कथन जब ख़ुदा तआला के लिये और उसी के मार्ग में प्रदर्शित होने लगें तो उन में से भी यही इलाही फ़िलास्फ़ी सम्बन्धित है । अर्थात् उन हार्दिक क्रियाओं में भी प्रारम्भ ही से एक आत्मा छुपी होती है जैसे कि वीर्य में छुपी थी; और जैसे जैसे इन क्रियाओं का ढांचा तैयार होता जाता है, वह आत्मा चमकती जाती है और जब वह शरीर

---

۱ المومنون:۱۵

पूर्ण रूप से तैयार हो चुकता है तो एक दम वह आत्मा अपनी पूर्ण ज्योति के साथ चमक उठती है । और अपने जीवात्मीय रूप से अपने अस्तित्व को दिखा देती है और जीवन के स्पष्ट चिन्ह प्रारम्भ हो जाते हैं । अस्तु, जैसे ही क्रियाओं का सम्पूर्ण ढांचा तैयार हो जाता है वैसे ही तुरन्त विद्युत के समान एक वस्तु भीतर से अपनी खुली खुली चमक दिखलाना प्रारम्भ कर देती है । यह वही समय होता है जिस के विषय में अल्लाह तआला ने अपने पवित्र ग्रन्थ क़ुर्आन शरीफ़ में उदाहरण के रूप में फ़रमाया है :-

فَاِذَا سَوَّيْتُهٗ وَنَفَخْتُ فِيْهِ مِنْ رُّوْحِيْ فَقَعُوْا لَهٗ سٰجِدِيْنَ ۝ ـه

फ़इज़ा सव्वैतोहू व नफ़ख़्तो फ़ीहे, मिर्रूही फ़ा क़ऊलहू साजेदीन ।

अर्थात् जब मैंने उसका ढांचा बना लिया और सभी आवश्यक शक्तियां और गुण प्रदान किए और अपनी रूह उस में दी तो तुम सब लोग उसके लिए पृथ्वी पर सजदा (दण्डवत) करते हुए गिर जाओ । इस आयत (क़ुर्आन शरीफ़ के पवित्र कथन) में यही संकेत है कि जब कर्मों का पूर्ण ढांचा तैयार हो जाता है तो उस ढांचे में वह आत्मा चमक उठती है जिस को ख़ुदा तआला अपने से सम्बन्धित बतलाता है क्योंकि संसारिक जीवन के विनाश के पश्चात् वह ढाँचा निर्मित होता है । अतएवं इलाही ज्योति जो पहले धीमी थी एक बार भड़क उठती है और यह अनिवार्य हो जाता है कि ख़ुदा की ऐसी शान को देख कर प्रत्येक सजदा करे और उस की ओर खैंचा जाए । अत: प्रत्येक उस नूर को देख कर सजदा करता है और स्वाभावतया उसकी ओर आता है । इब्लीस (शैतान) के अतिरिक्त जो अंधेरे से दोसती रखता है ।

जीवात्मा अल्लाह की सृष्टि है-

फिर मैं अपनी पिछली बात की ओर आता हूँ । यह बात ठीक है कि जीवात्मा एक सूक्ष्म ज्योति है जिसकी उत्पत्ति शरीर के भीतर से ही होती है और जिस का गर्भ में पोषण होता रहता है । उत्पत्ति से तात्पर्य यह है कि

ـه الحجر: ٣٠
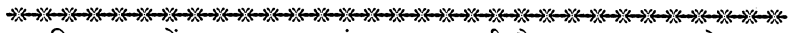
उसकी प्रारम्भ में वह अस्पष्ट एवं अव्यक्त रहती है पुनः स्पष्ट रूप से उस का रूप व्यक्त हो जाता है और प्रारम्भ में बीज रूप में वह वीर्य में ही विद्यमान होती है और यह बात निर्णीत है कि जगत स्रष्टा अल्लाह की इच्छा, आज्ञा और आदेशानुसार उसका सम्बन्ध एक अज्ञात रूपांतर द्वार वीर्य से है । वह वीर्य का एक उज्ज्वल और नूरानी जौहर है । नहीं कह सकते वह वीर्य का ऐसा ही अभिन्न अंश है जैसे शरीर शरीर का अंश होता है । किन्तु यह भी नहीं कह सकते कि वह कहीं बाहर से आता है अथवा पृथ्वी पर गिर कर वीर्य के तत्व से मिला हुआ है । अपितु वह वीर्य में उसी प्रकार छुपा हुआ होता है जैसा कि आग पत्थर के अन्दर होती है ।

ख़ुदा की किताब (क़ुर्आन मजीद) का यह मत नहीं कि जीवात्मा पृथक् रूप से आकाश से अथवा वायु-मण्डल से पृथ्वी पर गिरती है और फिर सहसा किसी घटना से वीर्य के साथ मिलकर गर्भ के भीतर चली जाती है । यह मत और यह विचार कभी किसी भी प्रकार ठीक नहीं हो सकता यदि हम ऐसा मान लें तो प्राकृतिक विधान हमें झूठ पर ठहराता है । हम नित्य देखते हैं कि बासी और विकृत भोजन तथा सड़े हुए घावों में सहस्रों कीड़े पड़जाते हैं । मैले वस्त्रों में सैंकड़ों जुएं पड़ जाती हैं । मनुष्य के पेट के भीतर भी कद्दूदाने इत्यादि कीटाणु उत्पन्न हो जाते हैं । अब क्या हम कह सकते हैं कि वे बाहर से आते हैं अथवा आकाश से उतरते किसी को दिखाई देते हैं । परन्तु वास्तविकता यह है कि जीवात्मा शरीर के भीतर से ही निकलती है और इसी तर्क से उस का सृष्टि होना भी सिद्ध होता है ।

जीवात्मा का दूसरा जन्म

अब इस समय हमारे वक्तव्य का यह तात्पर्य है कि जिस सर्वशक्तिमान अल्लाह ने जीवात्मा को पूर्ण शक्तियों के साथ शरीर में से ही निकाला है । उसकी यही इच्छा मालूम होती है कि जीवात्मा के दूसरे जन्म को भी शरीर द्वारा ही व्यक्त करे । जीवात्मा की क्रियाएं हमारे शरीर की क्रियाओं पर

आधारित हैं । जिस ओर हम शरीर को खींचते हैं, जीवात्मा भी आवश्यमेव अनुसरण करती है । अत: एंव मनुष्य की प्राकृतिक अवस्थाओं की ओर विशेष ध्यान देना अल्लाह की पवित्र वाणी क़ुर्आन मजीद का कार्य है । यही कारण है कि पवित्र क़ुर्आन ने मनुष्य की प्राकृतिक अवस्थाओं के सुधार की ओर बहुत ध्यान दिया है और मानव का हंसना, रोना, खाना-पीना, पहनना, शयन करना, बोलना मौन रहना, विवाह करना, अविवाहित रहना, चलना-ठहरना, बाह्यस्वच्छता और स्नानादि के नियमों पर चलना और रोग व निरोग की अवस्था, में विशिष्ट नियमों का पालन करना इन सभी विषयों पर आदेशों का उल्लेख किया है और मानव की शारीरिक अवस्थओं को आध्यात्मिक अवस्थाओं पर प्रभावशाली ठहराया है । यदि इन आदेशों की पूर्ण व्याख्या की जाए तो मेरा विचार है कि इस वक्तव्य को सुनाने के लिए कोई यथेष्ठ समय उपलब्द नहीं हो सकेगा ।

मनुष्य का क्रमिक विकास

मैं जब अल्लाह की पवित्र वाणी क़ुर्आन पर विचार करता हूँ और देखता हूँ कि उस ने किस प्रकार अपनी शिक्षाओं में मनुष्य को उस की प्राकृतिक अवस्थाओं के सुधार के नियम प्रदान करके पुन: शनै: शनै: विकास की ओर अग्रसर किया है और आध्यात्मिक अवस्था के महान् स्तर तक पहुँचाना चाहा है तो मुझे यह गुढ़ रहस्य इस प्रकार विदित होता है कि पहले अल्लाह ने यह चाहा कि मनुष्य को बैठने-उठने और खाने-पीने तथा बातचीत इत्यादि समस्त प्रकार का व्यावहारिक ज्ञान प्रदान करके उस को वहशीयाना (असभ्य) रीति-रिवाजों से मुक्ति देवे और जानवर पन से अलग कर के एक साधारण स्तर की चारित्रिक अवस्था जिसको शिष्टाचार और विनय का नाम दे सकते हैं, सिखलावे, फिर मनुष्य की प्राकृतिक आदतों को जिन को दूसरे शब्दों में दुराचार कह सकते हैं, साधारण माध्यमिक स्तर पर लावे ताकि वे जीवन की माध्यमिकताओं को पा कर सदाचार का रूप धारण करें । परन्तु यह दोनों

विधियां वास्तव में एक ही है क्योंकि प्राकृतिक अवस्थाओं के सुधार से सम्बन्धित हैं । केवल उच्च और निम्न के अन्तर ने उनको दो भागों में विभक्त कर दिया है और उस परम विधाता सर्वशक्तिमान ख़ुदा ने चरित्र के विधान को इस ढंग से उपस्थित किया है जिससे मानव, चरित्र के निम्नस्तर से उठकर सर्वोच्च शिखर पर पहुँच सके ।

इस के अतिरिक्त तृतीय स्तर उन्नति और विकास का यह रखा है कि मनुष्य अपने वास्तविक स्रष्टा अल्लाह के प्रेम और उस की इच्छा में अपने को लीन कर ले और उसका पूर्ण व्यक्तित्व अल्लाह के लिए हो जाये । यह वह अवस्था है जिस को स्मरण कराने के लिए मुसलमानों के धर्म का नाम इस्लाम रखा गया है क्योंकि इस्लाम इस बात को कहते हैं कि अपने को इस प्रकार अल्लाह के सुपुर्द कर दे कि अपना कुछ भी शेष न रहे जैसा कि अल्लाह का कथन है :-

بَلٰى مَنْ اَسْلَمَ وَجْهَهٗ لِلّٰهِ وَهُوَ مُحْسِنٌ فَلَهٗۤ اَجْرُهٗ عِنْدَ رَبِّهٖ
وَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُوْنَ ۝ [1]
قُلْ اِنَّ صَلَاتِيْ وَ نُسُكِيْ وَ مَحْيَايَ وَمَمَاتِيْ لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ ۝
لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَ بِذٰلِكَ اُمِرْتُ وَاَنَا اَوَّلُ الْمُسْلِمِيْنَ ۝ [2]
وَاَنَّ هٰذَا صِرَاطِيْ مُسْتَقِيْمًا فَاتَّبِعُوْهُ وَلَا تَتَّبِعُوا السُّبُلَ فَتَفَرَّقَ بِكُمْ عَنْ
سَبِيْلِهٖ [3] قُلْ اِنْ كُنْتُمْ تُحِبُّوْنَ اللّٰهَ فَاتَّبِعُوْنِيْ يُحْبِبْكُمُ اللّٰهُ وَيَغْفِرْ لَكُمْ
ذُنُوْبَكُمْ وَاللّٰهُ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۝ [4]

बला मन असलमा वज्हहू लिल्लाहे व होवा मोहसेनुन फ़ लहू अजरोहू इंदा रब्बेही व ला ख़ौफ़ुन अलैहिम व ला हुम यहज़नून ।[1] क़ुल इन्ना सलाती व नोसोकी व मह्याय व ममाती

---

[1] अल् बक़रह : 113 ।

[1] البقرة: ١١٣ [2] الانعام: ١٦٣ و ١٦٤ [3] الانعام: ١٥٤ [4] آل عمران: ٣٢

लिल्लाहे रब्बिल आलमीन। ला शरीक लहू व बे ज़ालिका उमिरतो व अना अव्वलुल मुस्लेमीन।[1] व अन्ना हाज़ा सिराती मुस्तक़ीमन फ़त्तबेऊहो व ला तत्तबेउस्सोबोला फ़ तफ़र्रका बे कुम अन सबीलेही ।[2] क़ुल इन् कुन् तुम् तोहेब्बूनल्लाह फ़त्तबेऊनी योहबिबकोमुल्लाहो व यग़फ़िरलकुम् ज़ोनूबकुम वल्लाहो ग़फ़ूरुर्रहीम ।[3]

अर्थात् मुक्ति पाने वाला वह व्यक्ति है जो ख़ुदा की इच्छानुसार उसके मार्ग में अपने को तन-मन-धन से समर्पित कर दे । केवल मौखिक रूप से नहीं अपितु अपने सत्कर्मों से अपनी सत्यता और पवित्रता का प्रदर्शन करे । ऐसे आचरणों के स्वामी निश्चय ही अल्लाह के यहां सम्मानित होंगे और उन के लिए अल्लाह के दरबार में पुरस्कार सुरक्षित हो चुका है । ऐसे व्यक्तियों को किसी प्रकार का कोई भय नहीं और न ही वे उदासीन और शोकयुक्त होंगे । आप इन लोगों से कह दे कि मेरी उपासना और मेरे बलिदान और मेरी भेंटें, मेरा जीवित रहना अथवा मेरा मरना उस अल्लाह के लिए है जो समस्त ब्रह्मांड का पालनहार है । कोई वस्तु और कोई व्यक्ति उस की समानता नहीं कर सकती और न ही सृष्टि का कोई अंश अथवा सम्पूर्ण सृष्टि उस के समकक्ष हो सकती है । इस मत पर विश्वास रखने और इस पर आचरण करने का मुझे ख़ुदा की ओर से आदेश मिला है । अतएवं इस्लाम का सच्चा अनुयायी और उस पर अपना सर्वस्व न्यौछावर करने वाला तथा अपना सम्पूर्ण अस्तित्व उस पर समर्पित करने वाला सर्वप्रथम मैं हूँ । यह मेरा मार्ग है अत: आओ ! और मेरे इस पथ का अनुसरण करो और इस के विरुद्ध कोई अन्य मार्ग मत अपनाओ अन्यथा ख़ुदा से दूर जा पड़ोगे । आप इन लोगों को कह दें कि यदि ख़ुदा से

---

[1] अल इनआम : 163-164 ।
[2] अल इनआम : 154 ।
[3] आले इम्रान : 32 ।

श्रद्धा और प्रेम है तो आओ और मेरा अनुसरण करो तथा मेरे बताये मार्ग पर चलो ताकि ख़ुदा भी तुम से प्रेम करे और तुम्हारे पापों को क्षमा करे । वह बहुत ही क्षमा करने वाला तथा बार बार दया करने वाला है ।

प्राकृतिक अवस्थाओं और चरित्र में अंतर और जीव हतिया का खंडन

अब हम मनुष्य की उक्त तीनों अवस्थाओं का पृथक्-पृथक् उल्लेख करेंगे परन्तु सर्वप्रथम यह स्मरण कराना आवश्यक है कि प्राकृतिक अवस्थाएं जिन का स्रोत तामसिक वृत्ति एवं तमोगुण है । ख़ुदा तआला की पवित्र वाणी में दर्शाए गए संकेत के अनुसार चारित्रिक अवस्थाओं से कोई वस्तु पृथक् नहीं है क्योंकि अल्लाह के पवित्र कथन ने समस्त प्राकृतिक शक्तियां और शारीरिक इच्छाओं आकांशओं को प्राकृतिक अवस्थाओं के अन्तर्गत रखा है । यह वही प्राकृतिक अवस्थाएं हैं जिन्हें सुन्दर कर्म देने और अवसर के अनुकूल उन्हें प्रयोग में लाने के उपरांत वे आचरण और चरित्र का रूप धारण कर लेती है । ठीक इसी प्रकार चारित्रिक अवस्थायें आत्मिक अवस्थाओं से भिन्न नहीं हैं अपितु यही चारित्रिक अवस्थाएं अल्लाह के प्रेम में पूर्ण रूप से खोए जाने से, आत्मा की पूर्ण परिशुद्धि से और इस जगत में रहते हुए इस से निर्लिप्त होकर अल्लाह से नाता जोड़ने से तथा उसीके प्रति असीम श्रद्धा, आत्मविलय और तत्परता से, चित्तवृत्ति की पूर्ण स्थिरता से शांति और आत्मा-तुष्टि से और उसी की इच्छा के आगे शीश झुकाने से आध्यात्मिकता का रूप धारण कर लेती हैं । प्राकृतिक अवस्थाएं जब तक चरित्र में रूपांतरित न हो जाएं किसी प्रकार मानव को प्रशंसनीय नहीं बनातीं क्योंकि वे अन्य जीवों अपितु ठोस पदार्थों में पाई जाती हैं । ऐसा ही केवल सदाचार की उपलब्धि भी मानव को आध्यात्मिक जीवन प्रदान नहीं कर सकती । बल्कि एक व्यक्ति ख़ुदा तआला के अस्तित्व का इनकारी और नास्तिक रह कर भी अच्छे चरित्र का प्रदर्शन कर सकता है । दीनता, विशाल हृयदयता, मैत्रीभाव रखना अथवा कलह को

त्यागना तथा झगड़ालू और दुष्ट मनुष्यों के मुकाबले में न आना यह सभी प्राकृतिक अवस्थाएं हैं और ऐसी बातें हैं जो ऐसे आयोग्य व्यक्ति को भी प्राप्त हो सकती हैं जो मुक्ति के वास्तविक द्वार से बे नसीब और अपरिचित रहता है। कई पशु भी दीन स्वाभाव के होते हैं तथा अपने स्वामी से घुल-मिल जाने और सिधाए जाने से मैत्री-भाव दिखलाते हैं और सोटा पर सोटे मारने पर भी कोई मुकाबला नहीं करते । उन्हें महान मानव की पदवी देना तो दूर की बात उन्हें एक आम इन्सान भी नहीं कहा जा सकता ठीक इसी प्रकार एक बिल्कुल निराधार अशुद्ध विश्वास रखने वाला, यहां तक कि एक व्यभिचारी और कुकर्मी भी इन बातों पर चल सकता है ।

सम्भव है कि मनुष्य इतना दयालु बन जाए कि यदि उस के अपने ही शरीर के घाव में कीड़े पड़ जाएं तो उन्हें भी मारना उचित न समझे और जीव-जन्तुओं का इतना हितैषी हो कि जुएं जो सिर में पड़ती हैं अथवा वे कीड़े जो आमाशय और अन्तड़ियों में पड़ जाते हैं अथवा मस्तिष्क में पैदा होते हैं उन को भी कष्ट पहुँचाना उचित न समझे अपितु यहां तक स्वीकार किया जा सकता है कि किसी की दया इस सीमा तक पहुँच जाए कि वह मधु (शहद) खाना त्याग दे क्योंकि वह बहुत से प्राणियों की हत्या करने और निरपराध मधु-मक्खियों को उन के अधिकार से वंचित करने के पश्चात् प्राप्त होता है । इसी प्रकार यह भी मान सकता हूँ कि कोई व्यक्ति कस्तूरी का भी सेवन करना छोड़ दे क्योंकि वह ग़रीब हिरण का रक्त है जो उस बेचारे का वध करने और उस के बच्चों को अनाथ बनाने से उपलब्ध होता है । इसी प्रकार मैं यह भी स्वीकार कर सकता हूँ कि कोई महाशय मोतियों के प्रयोग को भी छोड़ दे, वह रेशम को भी पहनना त्याग दे क्योंकि यह दोनों वस्तुएं निरीह कीड़ों का हनन करने से ही प्राप्त होती हैं । अपितु मैं यहां तक स्वीकार कर सकता हूँ कि कोई व्यक्ति कष्ट के समय जोंकों के लगाने से भी संकोच करे और स्वयं दु:ख उठा ले और निरीह जोंकों के प्राणों का घातक न बने । कोई स्वीकार करे या न करे, मैं तो यहां तक स्वीकार करता हूँ कि कोई व्यक्ति अपनी दयालुता को

इतना बढ़ा दे कि जल पीना त्याग दे और इस प्रकार जल में निहित कीटाणुओं को बचाने के लिए अपने आपको समाप्त कर ले । मैं यह सब कुछ स्वीकार करता हूँ परन्तु यह कभी भी स्वीकार नहीं कर सकता कि ये सभी स्वभाविक हालतें चरित्र कहला सकती हैं, या केवल इन्हीं से वह भीतरी गंद धोये जा सकते हैं जो ख़ुदा के मिलने में रोक हैं । यह बात मेरी कल्पना में भी नहीं आ सकती कि इस प्रकार का अहिंसा-प्रिय बन जाना जिसमें कुछ पशु और पक्षी मानव की अपेक्षा अधिक अहिंसा प्रिय हैं उच्च मानवता की प्राप्ति का कारण बन सकता है । बल्कि मेरे निकट यह प्राकृतिक विधान से लड़ाई है । और अल्लाह की रज़ा के ख़िलाफ़ और उस वरदान को ठुकरा देना है जो कुदरत की ओर से हमको मिली है बल्कि वह रूहानीयत हर एक उच्च आचरण को उचित अवसर पर काम में लाने तथा ख़ुदा की राहों में वफ़ादारी के साथ कदम मारने से और उसी का हो जाने से मिलती है । जो उस का हो जाता है उस के चिन्ह ये हैं कि वह उस के बिना जीवित नहीं रह सकता । ब्रह्मज्ञानी आरिफ़ (ख़ुदा की पहचान रखने वाला) एक मच्छली है जो ख़ुदा के हाथ से हलाल की गई और उसका जल ख़ुदा का प्रेम है।

सुधार के तीन ढंग और सुधार की अतिआवश्यकता पर आंहज़रत सल्लल्लाहो अलैहि वसल्लम को भेजा जाना

अब मैं अपने पहले विषय की ओर लौटता हूँ । मैं अभी बता चुका हूँ कि मानव की विभिन्न अवस्थाओं के स्रोत तीन हैं अर्थात् तामसिक-वृत्ति (तमोगुण) राजसिक वृत्ति (रजोगुण) तथा सात्विक वृत्ति (सतोगुण) । इसी प्रकार सुधार की भी तीन विधियां हैं ।

प्रथम :- यह कि असभ्य और वहशी लोगों को जो भले बुरे में कोई अन्तर नहीं कर सकते, उन्हें इस साधारण प्रकार के आचरण की शिक्षा दी जाए कि वे खाने पीने तथा विवाह आदि सामाजिक बातों में मानवता के नियमों पर चलें । वे न तो शरीर को नग्न रखें और न ही कुत्तों के समान मृतक शरीर को

खाने वाले हों और न कोई अन्य नीच व्यवहार का प्रदर्शन करें । यह प्राकृतिक अवस्थाओं के सुधार में से निम्नस्तर का सुधार है । यह इस प्रकार का सुधार है कि यदि पोर्टब्लेयर के जंगली मनुष्यों में से किसी मनुष्य को मानवता की शिक्षा देनी हो तो सर्वप्रथम मनुष्यता के प्रारम्भिक छोटे-छोटे आचरणों और शिष्टाचार के ढंगों की उन्हें शिक्षा दी जाएगी ।

दूसरा ढंग सुधार का :- यह है कि जब कोई मानवता के बाह्य शिष्टाचार ग्रहण कर ले तो उस को मावनता के महान् आचरण सिखलाए जाऐं उचित समय और उचित अवसर पर प्रयोग में लाने की शिक्षा दी जाए ।

तीसरा साधन सुधार का यह है कि जो व्यक्ति सदाचार और आदर्श चरित्र से विभूषित हो चुके हैं, ऐसे शुष्क उपदेशकों को प्रेम के शरबत और ख़ुदा के मधुर मिलन का मज़ा चखाया जाए ।

सुधार के ये तीन साधन हैं जिनका निर्देश क़ुर्आन शरीफ़ में है और हमारे सय्यदो मौला नबी सल्लल्लाहो अलैहि वसल्लम ऐसे समय में भेजे गए थे जब कि संसार में हर प्रकार के विकार, पतन और विनाश की विभीषिकाएं प्रज्वलित हो चुकी थीं । जैसा कि अल्लाह् तआला फ़रमाता है :-

ظَهَرَ الْفَسَادُ فِي الْبَرِّ وَالْبَحْرِ [1]

ज़हरल फ़सादो फ़िल बर्रे वल् बहरे ।

अर्थ - समस्त ख़ुश्की और तरी अर्थात् सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड बिगड़ गए । यह इस बात की ओर संकेत है कि जो जातियां अहले किताब अर्थात् जिन्हें अल्लाह की ओर से धार्मिक पुस्तकें (शरीअतें) दी गई हैं वे भी पथभ्रष्ट हो गईं। और जो दूसरे लोग हैं जिन को इल्हाम का पानी नहीं मिला वह भी बिगड़ गए हैं ।

अतः पवित्र क़ुर्आन का कार्य वास्तव में मृतकों को जीवनदान देना था । जैसा कि उस का कथन है कि :-

اِعْلَمُوْٓا اَنَّ اللّٰهَ يُحْيِ الْاَرْضَ بَعْدَ مَوْتِهَا [2]

एलमू अन्नल्लाहा योहयिल् अर्ज़ा बादा मौतेहा ।

अर्थात् यह तुम्हें भली प्रकार विदित हो जाना चाहिये कि अब अल्लाह

---

[1] الروم : ۴۲ [2] الحديد : ۱۸

तआला जब कि समस्त पृथ्वी की जीवन शक्ति का ह्रास हो चुका था, उस पृथ्वी को पुन: जीवित करने लगा है ।

उस समय अरब देश की दशा पशुता के स्तर पर पहुँच चुकी थी और मनुष्यता का कोई अंश शेष न रहा था । हर प्रकार के पाप और दुराचार उनकी दृष्टि में गौरव का स्थान रखते थे । एक-एक व्यक्ति सैंकड़ों स्त्रियों से विवाह कर लेता था । हर प्रकार की निषिद्ध कमाई तथा हर प्रकार का निषिद्ध भोजन उनके लिए शिकार की तरह था । माताओं के साथ विवाह कर लेना हलाल समझते थे । इसी लिए अल्लाह तआला को कहना पड़ा :-

حُرِّمَتْ عَلَيْكُمْ اُمَّهٰتُكُمْ ١

होर्रेमत अलैकुम उम्महातोकुम ।

आज माएं तुम्हारी तुम पर हराम हो गईं ।

इसी प्रकार वे लोग मरे हुए पशुओं का मांस भी खा जाते थे । यही नहीं अपितु मनुष्य का मांस भी खा जाते थे । संसार का कोई भी पाप ऐसा नहीं जो वे नहीं करते थे । उनमें से अधिकांश मआद (मरने के पश्चात् ख़ुदा के हज़ूर लौटना) पर विश्वास नहीं रखते थे । बहुत से उनमें से ख़ुदा के अस्तित्व को भी नहीं मानते थे कन्याओं का अपने हाथ से वध करे देते थे । अनाथों को मार कर उनका धन खा जाते थे । बाह्य दृष्टि से तो वे मानव थे परन्तु बुद्धिबल से वे सर्वथा वंचित थे । न उनमें लज्ञा थी, न संकोच । जल के समान शराब पीते थे। व्यभिचार में जिसका नाम प्रथम श्रेणी में होता था, वही जाति का सरदार कहलाता था । अज्ञानता इतनी बढ़ी हुई थी कि आस पड़ोस की समस्त जातियों ने उनका नाम "उम्मी" (अर्थात् नितान्त अज्ञानी) रख दिया था । ऐसे समय में और ऐसी जातियों के सुधार के लिए हमारे परम प्रिय पैग़म्बरे इस्लाम हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहो अलैहि वसल्लम का मक्का की पवित्र भूमि में आगमन हुआ ।

अत: वे तीन प्रकार के सुधार जिनका हम अभी उल्लेख कर चुके हैं, उनका वास्तव में यही समय था । यही कारण है कि क़ुर्आन शरीफ़ संसार के

---

١ النساء : ٢٤

समस्त धर्म-ग्रन्थों की अपेक्षा प्रत्येक प्रकार से सम्पूर्ण और उत्तम होने का दावा करता है । क्योंकि संसार की और पुस्तकों को इन तीन प्रकार के सुधारों का अवसर नहीं मिला और क़ुर्आन शरीफ़ को मिला और क़ुर्आन शरीफ़का यह उद्देश्य था कि मनुष्य जो पशुता की सीमा तक पहुँच चुका था उसे अमानुषिकता से निकाल कर पुन: मनुष्य बनावे, फ़िर मनुष्य से महान् चरित्रवान मानव बनावे तदनन्तर ख़ुदा वाला मानव बनावे । यही कारण है कि पवित्र क़ुर्आन के मूल में यही तीन उद्देश्य शामिल हैं ।

पवित्र क़ुर्आन का मूल उद्देश्य तीन प्रकार के सुधार प्राकृतिक अवस्थाएं विकसित होकर चरित्र का रूप धारण कर लेती हैं

उक्त तीनों प्रकार के सुधारों का विस्तार पूर्वक वर्णन करने से पूर्व यह बता देना आवश्यक समझता हूँ कि पवित्र क़ुर्आन में कोई ऐसी शिक्षा नहीं जिसको गृहण करने में बल-प्रयोग की आवश्यकता पड़े अपितुसम्पूर्ण क़ुर्आन शरीफ़ का उद्देश्य यही तीन सुधार हैं और उसकी समस्त शिक्षाओं का सार यही तीन सुधार हैं, शेष सभी नियम और उपनियम इन सुधारों के लिए साधन मात्र हैं । जिस प्रकार एक रोगी के स्वास्थ्य को ठीक करने के लिए डाक्टर को कभी चीड़-फाड़ करने और कभी शीतल मरहम (विलेपन) लगाने की आवश्यकता पड़ती है । इसी प्रकार पवित्र क़ुर्आन की शिक्षा ने भी मानवीय सहानुभूति के लिए इन उपसाधनों को अपने अवसरों पर प्रयुक्त किया है और उसके सम्पूर्ण गूढ़ तत्वों अर्थात् ज्ञानकी बातों और उपदेशों-निर्देशों और साधनों का वास्तविक अर्थ यह है कि मनुष्यों को उनकी प्राकृतिक अवस्थाओं से जिनमें निश्चय ही अमानुषिकता का स्वरूप होता है । ऊपर उठा कर चरित्र के उच्च स्तर पर पहुँचाए तत्पश्चात् चारित्रिक अवस्था का विकास करके उसे आध्यात्मिकता के असीम सागर तक पहुँचाए ।

अभी हम इस बात का उल्लेख कर चुके हैं कि प्राकृतिक अवस्थाएं और चरित्र परस्पर विरोधी और भिन्न नहीं हैं अपितु वही हालतें हैं जो और इससे

पहले कि वह बुद्धि और ज्ञान के परामर्श से काम में लाइ जाएं चारित्रिक हालतों का रंग पकड़ लेते हैं और इस से पहले कि वह बुद्धि और ज्ञान की सलह और मश्वरे से व्यक्त हों चाहे वह कैसे ही चरित्र से समरूप हों वास्तविक में चरित्र नहीं होते बल्कि स्वभाव की एक बे इख़्तियार रफ़तार होती है । उदाहरणतया यदि एक कुत्ते या बकरी से अपने स्वामी के प्रति प्रेम और नम्रता का प्रदर्शन होता है तो उस कुत्ते को चरित्रवान नहीं कहेंगे और न ही उस बकरी को चरित्रवान कहा जाएगा । इसी प्रकार एक भेड़िये या शेर को उसकी हिंसावृत्ति के कारण असभ्य और दुराचारी नहीं कहा जा सकता अपितु जैसा कि हम ऊपर कह आए हैंकि चारित्रिक अवस्था समय और स्थिति तथा अवसर के पहचानने और गम्भीर चिन्तन के पश्चात् ही प्रारम्भ होती है और एक ऐसा मनुष्य जो बुद्धि और उपाय से काम नहीं लेता वह उन दुध पीते बच्चों के समान हैं जिनके हृदय और मस्तिष्क को अभी बौद्धिक बल का वरदान नहीं मिला अथवा उन पागलों के समान जो बुद्धि और विचार शक्ति को खो बैठे हैं। स्पष्ट है कि जो व्यक्ति दुधमुहाँ शिशु औरपागल हो वह कभी कभी ऐसी क्रियाओं का प्रदर्शन करता है जो चरित्र के अनुरुप होती हैं परन्तु कोई बुद्धिमान उनका मान चरित्र नहीं रख सकता क्योंकि वे क्रियाएँ निर्णायक-शक्ति और अवसरवादिता के स्रोत से नहीं निकलतीं अपितु स्वाभाविक और प्राकृतिक याचनाओं के समय स्वयं ही व्यक्त हो जाती है । जैसा कि मनुष्य का बच्चा जन्म लेते ही माता के स्तनों की ओर झुकने लगता है और एक मुर्गी का बच्चा पैदा होते ही दाना चुगने के लिए दौड़ता है । जोंक का बच्चा जोंक की आदतें अपने अंदर रखता है और सर्प के बच्चे से सर्प के आचरण प्रगट होने लगते हैं । इसी प्रकार सिंह के बच्चे से सिंह के स्वभाव अभिव्यक्त होते हैं । विशेष कर मनुष्य के बच्चे को ध्यानपूर्वक देखना चाहिए कि वह किस प्रकार जन्म लेते ही मानवीय स्वभाव प्रदर्शित करने लगता है और जब वह वर्ष डेढ़ वर्ष का हो जाता है तो वे स्वाभाविक और प्राकृतिक आदतें पर्याप्त मात्रा में ज़ाहिर हो जाती हैं । उदाहरणार्थ पहले जैसे रोता था, अब रोना पहले की

अपेक्षा उच्च स्वर में हो जाता है । इसी प्रकार हँसना ठहाके की सीमा तक पहुँच जाता है और नेत्रों में भी उत्सुकता के चिन्ह दिखाई देने लगते हैं । और इस आयु में एक प्राकृतिक क्रिया उत्पन्न हो जाती है, और वह यह कि बच्चा अपनी रुचि-अरुचि, सहमति असहमति का प्रदर्शन अपनी क्रियाओं द्वारा करने लगता है । कभी किसी को मारना और कभी किसी को कुछ देना चाहता है परन्तु यह सभी क्रियाएँ वास्तव में प्राकृतिक ही होती हैं । अस्तु, ऐसे बच्चे की तरह एक जंगली या असभ्य मनुष्य भी जिसे मानवता का लेशमात्र भी प्राप्त नहीं हो सका वह भी अपने प्रत्येक कथनी और करनी और हरकत और स्थिरता में स्वभाविक ढंग ही दिखलाता है और अपनी भावनाओं के ही अधीन होता है । कोई बात उसके आन्तरिक विचार और विमर्श से नहीं निकलती । अपितु जो कुछ प्रकृति की ओर से उसके अंदर उत्पन्न हुआ है वह बाह्य चेष्टाओं के अनुसार निकलता चला जाता है । यह सम्भव है कि उस के प्राकृतिक संवेग जो किसी विशेष प्रतिक्रिया से भीतर से बाहर निकल आते हैं। सबके सब बुरे न हों अपितु कुछेक उनके सदाचार के अनुरूप हों परन्तु गम्भीर चिन्तन और सूक्ष्म विचार के साथ उनका कोई सम्बन्ध नहीं होता । यदि कुछ होता भी है तो स्वाभाविक भावनाओं की अधिकता के कारण स्वीकार करने योग्य नहीं होता कि उस पर विश्वास किया जाए अपितु जिस ओर अधिकता है उसी और विश्वास का पात्र समझा जाएगा।

वास्तविक चरित्र

अस्तु, ऐसे व्यक्ति के साथ शुद्ध और वास्तविक चरित्र का सम्बन्ध नहीं जोड़ सकते जिस पर प्राकृतिक संवेग पशुओं, बच्चों और पागलों की तरह आतंक जमा लेते हैं; और जो अपना जीवन लगभग वन्य पशुओं के समान बिताता है । वास्तव में नेक या बुरे आचरण का काल उस समय प्रारम्भ होता है जबकि मनुष्य को ख़ुदा की दी हुई प्रदत्त बुद्धि परिपक्व हो कर उसके द्वारा भलाई और बुराई अथवा दो भलाइयों और दो बुराइयों की श्रेणियों में अन्तर

कर सके । फिर सत्य मार्ग के छोड़ देने से अपने अन्त: करण में एक प्रकार का खेद का अनुभव करे । और दुष्कर्म करने से अपने अन्तकर्ण में ग्लानि का अनुभव करे यह मनुष्य के जीवन का दूसरा काल है जिस को ख़ुदा की पवित्रवाणी **क़ुर्आन करीम ने नफ़्से लव्वामा** अर्थात् राजसिक वृत्ति का नाम दिया है ।

किन्तु स्मरण रहे कि एक नीच मनुष्य को राजसिक अवस्था तक पहुँचाने के लिये केवल साधारण उपदेश पर्याप्त नहीं होते अपितु आवश्यक है कि उसको ख़ुदा की पहचान का इतना हिस्सा मिले जिस से वह अपने जन्म को व्यर्थ और निरूद्देश्य न समझे ताकि ख़ुदाई ज्ञान से उसके अन्दर शुद्ध आचरणों का प्रादुर्भाव हो । यही कारण है कि ख़ुदा तआला ने साथ ही साथ सच्चे ख़ुदा की पहचान के शुद्ध ज्ञान के लिए सचेत किया है और विश्वास दिलाया है कि प्रत्येक कर्म और आचरण का एक परिणाम होता है जो इस जीवन में आध्यात्मिक सुख या प्रकोप (अभिशाप) का कारण बनता है और इस जीवन के पश्चात् दूसरी दुनिया में स्पष्ट रूप से अपना प्रभाव दिखाएगा ।

कहने का तात्पर्य यह है कि राजसिक स्तर पर मानव का बौद्धिक ज्ञान और पवित्र आत्मीयता से इतना सम्बन्ध होता है कि उसे बुरे कर्म पर ग्लानि होती हैऔर अपने आप को धिक्कारता है तथा सत्कर्म करने का आकांक्षी रहता है । यह वही श्रेणी है जिस में मानव महान चरित्र प्राप्त करता है ।

ख़ल्क़ और ख़ुल्क़

इस स्थान पर मैं उचित समझता हूँ कि 'ख़ुल्क़' (अर्थात् चरित्र) शब्द की कुछ व्याख्या कर दूँ । सो जानना चाहिए कि ''ख़ल्क़'' (अरबी अक्षर) ख़ा की फ़तह (अरबी अक्षरों पर 'अ' की मात्रा) से शरीरिक पैदाइश का नाम है और ''ख़ुल्क़'' (अरबी अक्षर) 'ख़ु' की ज़म्मा (अरबी अक्षरों पर 'उ' की मात्रा) से आध्यात्मिक पैदाइश का नाम है । चूंकि आध्यात्मिक (सूक्ष्म) उत्पत्ति चरित्र से ही विकसित होती है न केवल स्वभाविक उद्वेगों से । इसलिये इस शब्द

का चरित्र के अर्थों में ही प्रयोग हुआ है, प्राकृतिक संवेगों पर नहीं बोला गया और फिर यह बात भी स्पष्ट कर देने के योग्य है कि जिस प्रकार जनसाधारण का विचार है कि 'ख़ुल्क़' (अर्थात् चरित्र) केवल सहृदयता, नम्रता और विनय का ही नाम है; यह उनकी भूल है । अपितु बाह्य शारीरिक कुशलता के समानान्तर मानव के भीतर गुप्त रूप में जो व्यवस्था और मानवीय शक्तियाँ निहित हैं उन सभी शक्तियों की प्रेरणाओं और अवस्थाओं का नाम 'ख़ुल्क़' अर्थात् चरित्र है। उदाहरणतया मनुष्य नेत्र से रोता है इसका प्रेरक उस के हृदय में एक करुणा का स्थायीभाव है । जब वह शक्ति ख़ुदा की ओर से दी गई बुद्धि के द्वारा अपने अवसर पर प्रयुक्त होती है तो उसे एक 'ख़ुल्क़' अर्थात् आचरण का नाम दिया जाएगा । इसी प्रकार मनुष्य हाथों से शत्रु का मुक़ाबला करता है तो उस क्रिया के पीछे हृदय में एक विशेष प्रकार का बल है जिस को वीरता कहते हैं । जब मनुष्य समय और स्थिति के अनुसार उस शक्ति का प्रयोग करता है तो उसका नाम भी 'ख़ुल्क़' (आचरण) है । ठीक इस प्रकार मनुष्य कभी हाथों के द्वारा अत्चायारों से पीड़ित जनता को अत्याचारियों से बचाना चाहता है अथवा निर्धनों और भूखों को कुछ देना चाहता है । अथवा किसी और प्रकार से मानव समाज की सेवा करना चाहता है । तो इस क्रिया के पीछे हृदय में एक शक्ति है जिस को दया कहते हैं । इसी प्रकार मनुष्य कभी अपने हाथों से अत्याचारी को दण्ड देता है तो इस क्रिया के पीछे हृदय में एक शक्ति है जिसे प्रतिहिंसा और प्रतिशोध कहते हैं । कभी मनुष्य आक्रमण का प्रत्युत्तर आक्रमण द्वारा नहीं देना चाहता और अत्याचारी को क्षमा करना चाहता है तो इस क्रिया के पीछे हृदय में एक शक्ति है जिसको क्षमा और सहिष्णुता कहते हैं। कभी कोई व्यक्ति मानव को लाभ पहुँचाने के लिये अपने हाथों से काम लेता है या पैरों से या हृदय और मस्तिष्क से और उनके कल्याण के लिये धन व्यय करता है तो इस क्रिया और संवेग के पीछे दिल में एक शक्ति होती है जिसे दान कहते हैं । अस्तु, जब मनुष्य इन समस्त शक्तियों को समय और स्थिति और अवसर के अनुसार प्रयोग में लाता है तो उस समय उनको 'ख़ुल्क़'

अर्थात् चरित्र की संज्ञा दी जाएगी । अल्लाह जल्ला शानाहू हमारे नबी सल्लल्लाहो अलैहि वसल्लम को फ़रमाता है :-

إِنَّكَ لَعَلَىٰ خُلُقٍ عَظِيمٍ ¹

इन्नका ल अला ख़ोलोक़िन अज़ीम ।

अर्थात् हे हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहो अलैहि वसल्लम ! आप महान् आचरण पर स्थित हैं । उक्त व्याख्या के अनुसार इसका अर्थ यही है कि महान् चरित्र की सभी विधाएं अर्थात् सत्य, दया, धैर्य, न्याय, वीरता, दान, उपकार तथा अनुग्रह इत्यादि सभी आप में एकत्र हैं । कहने का तात्पर्य यह है कि मनुष्य के भीतर जितनी शक्तियाँ निहित हैं जैसे शिष्टता, संकोच, ईमानदारी, प्रेम, लज्जा, दृढ़ प्रतिज्ञा, मर्यादापालन, बुद्धिमत्ता, मध्यमिकता, सहृदयता और सहानुभूति तथा इसी प्रकार वीर भावना, दान, क्षमा, सहिष्णुता और धैर्य, अनुग्रह, सत्य एवं आज्ञापालन इत्यादि ये जब सभी प्राकृतिक प्रवृत्तियाँ बुद्धि और ज्ञान के अंकुश और उसी के निर्देश के अनुसार अपने-अपने समय और स्थिति तथा अवसर पर व्यक्त की जाएंगी तो सब का नाम आचरण होगा। यह सभी आचरण वास्तव में मनुष्य की प्राकृतिक अवस्थाएं और प्राकृतिक भावनाएं हैं । ये केवल उस समय आचरण के नाम से अभिहित होते हैं जब स्थिति अवसर के अनुसार दृढ़ सङ्कल्प हो कर उनका प्रयोग किया जाए । चूंकि मनुष्य की प्राकृतिक विशेषताओं में से एक यह भी विशेशता है कि वह उन्नतिशील प्राणी है यही कारण है कि वह सत्य धर्म का अनुसरण करने और सत्संगों तथा उत्तम शिक्षा द्वारा ऐसे प्राकृतिक संवेगों को आचरण के रूप में रूपान्तरित कर देता है और यह कला मानव के अतिरिक्त किसी अन्य प्राणी के भाग्य में नहीं है ।

प्रथम सुधार : प्राकृतिक अवस्थाएं

अब हम क़ुर्आन शरीफ़ के तीन प्रकार के सुधारों में से प्रथम प्रकार के सुधार का जो निम्नकोटि की प्राकृतिक अवस्थाओं से सम्बन्धित है- उल्लेख

¹ القلم : ٥

करते हैं और यह सुधार चरित्र के विभिन्न क्षेत्रों में से वह क्षेत्र है जिसे शिष्टचार कहा जाता है, अर्थात् वह शिष्टता जो पूर्ण रूप से जीवन में अपनाई जा कर असभ्य लोगों को, उनकी प्राकृतिक अवस्थाओं, खाने-पीने, विवाह आदि का सम्बन्ध जोड़ने के समाजिक कार्य क्षेत्रों में जीवन के माध्यमिक केन्द्र पर ले आती है और उस निकृष्ट जीवन से मुक्ति दिलाती है जो राक्षसों, पशुओं या अन्य हिंस्र पशुओं इत्यादि के समान होता है । जैसा कि इन समस्त शिष्टाचारों के विषय में अल्लाह तआला की पवित्र वाणी क़ुर्आन शरीफ़ में कथन है :-

حُرِّمَتْ عَلَيْكُمْ اُمَّهٰتُكُمْ وَبَنٰتُكُمْ وَاَخَوٰتُكُمْ وَعَمّٰتُكُمْ وَخٰلٰتُكُمْ وَبَنٰتُ الْاَخِ وَبَنٰتُ الْاُخْتِ وَاُمَّهٰتُكُمُ الّٰتِيْٓ اَرْضَعْنَكُمْ وَاَخَوٰتُكُمْ مِّنَ الرَّضَاعَةِ وَاُمَّهٰتُ نِسَآئِكُمْ وَرَبَآئِبُكُمُ الّٰتِيْ فِيْ حُجُوْرِكُمْ مِّنْ نِّسَآئِكُمُ الّٰتِيْ دَخَلْتُمْ بِهِنَّ فَاِنْ لَّمْ تَكُوْنُوْا دَخَلْتُمْ بِهِنَّ فَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ وَحَلَآئِلُ اَبْنَآئِكُمُ الَّذِيْنَ مِنْ اَصْلَابِكُمْ وَاَنْ تَجْمَعُوْا بَيْنَ الْاُخْتَيْنِ اِلَّا مَا قَدْ سَلَفَ [1] لَا يَحِلُّ لَكُمْ اَنْ تَرِثُوا النِّسَآءَ كَرْهًا [2]

وَلَا تَنْكِحُوْا مَا نَكَحَ اٰبَآؤُكُمْ مِّنَ النِّسَآءِ اِلَّا مَا قَدْ سَلَفَ [3]

اُحِلَّ لَكُمُ الطَّيِّبٰتُ [4] وَالْمُحْصَنٰتُ مِنَ الْمُؤْمِنٰتِ وَالْمُحْصَنٰتُ مِنَ الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ مِنْ قَبْلِكُمْ اِذَآ اٰتَيْتُمُوْهُنَّ اُجُوْرَهُنَّ مُحْصِنِيْنَ غَيْرَ مُسٰفِحِيْنَ وَلَا مُتَّخِذِيْٓ اَخْدَانٍ [5]

وَلَا تَقْتُلُوْٓا اَنْفُسَكُمْ [6] وَلَا تَقْتُلُوْٓا اَوْلَادَكُمْ [7] لَا تَدْخُلُوْا بُيُوْتًا غَيْرَ بُيُوْتِكُمْ حَتّٰى تَسْتَاْنِسُوْا وَتُسَلِّمُوْا عَلٰٓى اَهْلِهَا [8] فَاِنْ لَّمْ تَجِدُوْا فِيْهَآ اَحَدًا فَلَا تَدْخُلُوْهَا حَتّٰى يُؤْذَنَ لَكُمْ وَاِنْ قِيْلَ لَكُمُ ارْجِعُوْا فَارْجِعُوْا هُوَ اَزْكٰى لَكُمْ [9] وَاْتُوا الْبُيُوْتَ مِنْ اَبْوَابِهَا [10]

وَاِذَا حُيِّيْتُمْ بِتَحِيَّةٍ فَحَيُّوْا بِاَحْسَنَ مِنْهَآ اَوْ رُدُّوْهَا [11] اِنَّمَا الْخَمْرُ وَالْمَيْسِرُ وَالْاَنْصَابُ وَالْاَزْلَامُ رِجْسٌ مِّنْ عَمَلِ الشَّيْطٰنِ فَاجْتَنِبُوْهُ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُوْنَ [12]

---

[1] النساء : ٢٤ [2] النساء : ٢٠ [3] النساء : ٢٣ [4] المائدة : ٦ [5] النساء : ٣٠
[6] الانعام : ١٥٢ [7] النور : ٢٨ [8] النور : ٢٩ [9] البقرة : ١٩٠ [10] النساء : ٨٧
[11] المائدة : ٩١

حُرِّمَتْ عَلَيْكُمُ الْمَيْتَةُ وَالدَّمُ وَلَحْمُ الْخِنْزِيْرِ وَمَآ اُهِلَّ لِغَيْرِ اللّٰهِ بِهٖ وَالْمُنْخَنِقَةُ
وَالْمَوْقُوْذَةُ وَ الْمُتَرَدِّيَةُ وَالنَّطِيْحَةُ وَمَآ اَكَلَ السَّبُعُ.....وَمَا ذُبِحَ عَلَى النُّصُبِ [1]
يَسْـَٔلُوْنَكَ مَاذَآ اُحِلَّ لَهُمْ قُلْ اُحِلَّ لَكُمُ الطَّيِّبٰتُ [2] اِذَا قِيْلَ لَكُمْ تَفَسَّحُوْا فِى الْمَجٰلِسِ
فَافْسَحُوْا ...... وَاِذَا قِيْلَ انْشُزُوْا فَانْشُزُوْا [3] كُلُوْا وَاشْرَبُوْا
وَلَا تُسْرِفُوْا [4] وَقُوْلُوْا قَوْلًا سَدِيْدًا [5] وَثِيَابَكَ فَطَهِّرْ
وَالرُّجْزَ فَاهْجُرْ [6] وَاغْضُضْ مِنْ صَوْتِكَ [7] وَاقْصِدْ فِيْ مَشْيِكَ [8]
تَزَوَّدُوْا فَاِنَّ خَيْرَ الزَّادِ التَّقْوٰى [9] وَاِنْ كُنْتُمْ جُنُبًا فَاطَّهَّرُوْا [10]
وَفِيْٓ اَمْوَالِهِمْ حَقٌّ لِّلسَّآئِلِ وَالْمَحْرُوْمِ [11]
وَاِنْ خِفْتُمْ اَلَّا تُقْسِطُوْا فِى الْيَتٰمٰى فَانْكِحُوْا مَا طَابَ لَكُمْ
مِّنَ النِّسَآءِ مَثْنٰى وَثُلٰثَ وَرُبٰعَ فَاِنْ خِفْتُمْ اَلَّا تَعْدِلُوْا
فَوَاحِدَةً اَوْ مَا مَلَكَتْ اَيْمَانُكُمْ ذٰلِكَ اَدْنٰٓى اَلَّا تَعُوْلُوْا
وَاٰتُوا النِّسَآءَ صَدُقٰتِهِنَّ نِحْلَةً [12]

''होर्रेमत अलैकुम उम्महातोकुम व बनातोकुम् व अख़वातोकुम् व अम्मातोकुम व ख़ालातोकुम् व बनातुल अख़े व बनातुल-उख़्ते व उम्महातोकोमोल्लाती अर्ज़आना कुम् व अख़वातोकुम् मिनर्रज़ाअते व उम्माहातो निसाएकुम् व राबाएबोकोमोल्लातीफ़ी होजूरेकुम् मिन्निसाएकोमोल्लाती दख़लतुम बेहिन्ना फ़ इल्लम तकूनू दख़लतुम् बेहिन्ना फ़ला जुनाहा अलैकुम् व हलाएलो अबनाएकोमोल्लाज़ीना मिन अस्लाबेकुम् व अन तज्मऊ बैनल उख़तैने इल्ला मा क़द् सलफ़।

---

 [1] المائدة : ۳ [2] المائدة : ۵ [3] المجادلة : ۱۲ [4] الاعراف : ۳۲ [5] الاحزاب ۷۱
[6] المدثر ۵،۶ [7] لقمٰن : ۲۰ [8] البقرة : ۱۹۸ [9] المائدة : ۷ [10] الذّٰريٰت : ۲۰
[11] النسآء : ۳،۵

ला यहिल्लो लकुम् अन तरैसुन्निसाअ कर्हन । व ला तनकेहू मा नकहा आबाओकुम् मिनन्निसाए इल्ला मा क़द् सलफ़ । ओहिल्ला लकोमुत्तय्येबातो । वल मुहसनातो मिनल् मोमिनाते वल मुहसनातो मिनल्लज़ीना ऊतुल्किताबा मिन क़ब्लेकुम् इज़ा आतैतोमूहुन्ना ओजूरहुन्ना मुहसेनीना ग़ैरा मुसाफ़ेहीना वला मुत्तख़ेज़ी अख़दान। व ला तक़्तोलू अनफ़ोसाकुम व ला तक़्तोलू औलादकुम् । ला तद्ख़ोलू बोयूतन ग़ैरा बोयूतेकुम् हत्ता तस्तानेसू । व तोसल्लेमू अला अहलेहा। फ़ इल्लम् तजेदू फ़ीहा अहदन फ़ला तद्ख़ोलूहा हत्ता योऽज़ना लकुम् व इन क़ीला लकोमुर्जेऊ फ़र्जेऊ होवा अज़कालकुम । वअतुलबोयूता मिन् अबवाबेहा। व इज़ा हुय्यीतुम् बि तहय्यतिन फ़ हय्यू बे अहसना मिनहा औ रुद्दूहा । इन्नमल् ख़मरो वल् मैसेरो वल् अन्साबो वल् अज़्लामो । रिज़्सुन मिन अमलिश्शैताने फ़जतनेबूहो लअल्लकुम् तुफ़्लेहून । हुर्रेमत अलैकोमुल्मैततो वद्दमो व लहमुल् ख़िन्ज़ीरे व मा ओहिल्ला लेग़ैरिल्लाहे बेही वल मुनख़नेक़तो वल् मौक़ूज़तो वल मुतरद्दियतो वन्नतीहतो वमा आकालस्साबोओ वमा ज़ोबेहा अलन्नोसोबे । यस्अलूनका मा ज़ा ओहेल्ला लहुम । कुल ओहेल्ला ल कोमुत्तैय्येबातो । इज़ा कीलालकुम तफस्साहू फ़िल मजालेसे फफसाहू । व इज़ा क़ीलन्शोज़ू फ़न्शोज़ू । कुलूवश्रबू वला तुस्रेफ़ू व क़ूलू क़ौलन सदीदा । व सियाबका फ़तहहिर वर्रुज़्ज़ा फ़हजुर । वग़्ज़ुज़ मिन सौतेका वक़्सिद फ़ी मशयेका । तज़व्वदू फ़ इन्ना ख़ैरज़्ज़ादित्तक़्वा । व इन् कुन् तुम् जोनोबन

फ़त्तह्हरू । व फ़ी अमवालेहिम हक़्क़ुन लिस्साएले वल महरूमे ।
व इन ख़िफ़तुम अल्ला तुक़्सेतू फ़िल् यतामा फ़नकेहू मा ताबा
लकुम्मिनन्निसाए मस्ना ब सुलासा व रुबाअ फ़ इन ख़िफ़तुम
अल्ला तअदेलू फ़वाहिदतन औ मा मलकत एमानोकुम ।
ज़ालेका अद्ना अल्ला तऊलू । व आतुन्निसाअ सदोक़ातेहिन्ना
नेह्लतन ।''

अर्थात् तुम पर तुम्हारी माताएँ हराम की गईं । इसी प्रकार तुम्हारी पुत्रियाँ, तुम्हारी बहनें, तुम्हारी फूफियाँ, तुम्हारी मासियाँ, तुम्हारी भतीजियाँ, तुम्हारी भांजियाँ, तुम्हारी वे माताएँ जिन्होंने तुम्हें दूध पिलाया, तुम्हारी दूध की सम्बन्धित बहनें, तुम्हारी सासें, तुम्हारी पत्नियों से पहले पति से लड़कियाँ जबकि उन पत्नियों से तुम सम्भोग कर चुके हो, और यदि तुमने उन पत्नियों से संभोग नहीं किया तो (उनके पहले पति से उत्पन्न हुई पुत्रियों से विवाह कर लेने में) कोई दोष नहीं । इसी प्रकार तुम्हारे सगे पुत्रों की पत्नियों तथा दो सगी बहनों से एक ही समय में विवाह करना हराम किया गया । यह सब काम पहले जो होते थे, आज तुम्हारे लिए हराम किए गए हैं । यह भी तुम्हारे लिए उचित न होगा कि ज़बर दस्ती स्त्रियों के स्वामी बन जाओ। यह भी उचित नहीं कि तुम उन स्त्रियों से विवाह करो जो तुम्हारे बापों की पत्नियां थीं । इस विधान के आने से पहले पहले जो हो चुका सो हो चुका।

पावन और चरित्रवान स्त्रियां तुम में से या पहले अहले किताब में से (अर्थात् जिन को शरीअत की किताब दी गई) तुम्हारे लिए हलाल हैं उनसे शादी कर लो परन्तु जब महर नियुक्त कर के निकाह हो जाए । याद रखो बदकारी और अनुचित सम्बन्ध स्थापित करने की कदापि आज्ञा नहीं ।

इस्लाम से पूर्व अरब के अज्ञानियों में जिस व्यक्ति के सन्तान नहीं होती थी उनमें से कुछ लोगों में यह प्रथा प्रचलित थी कि उनकी पत्नी सन्तान के लिए दूसरे पूरुष से सम्भोग कराती थी । पवित्र क़ुर्आन ने इस प्रथा को हराम

घोषित कर दिया । "मुसाफिहत" इस कुप्रथा का नाम है ।

फ़िर फ़रमाया कि तुम आत्महत्या न करो । अपनी सन्तान का वध मत करो । दूसरे के घरों में पशुओं की तरह बिना आज्ञा के न चले जाओ । आज्ञा प्राप्त करना आवश्यक है । जब तुम दूसरों के घरों में जाअे तो प्रवेश करने से पहले अस्सलाम अलैकुम कहो । यदि उन घरो में कोई न हो तो उनमें मत दाख़िल हो जब तक कोई घर का स्वामी तुम्हें आज्ञा न दे, उस समय तक उन घरों में मत जाओ । यदि घर का स्वामी यह कहे कि तुम वापस चले जाओ, तो तुम वापस चले जाओ और घरों में दीवारों पर से कूद कर न जाया करो अपितु घरों में उनके नियत द्वार से जाओ । यदि तुम्हें कोई 'सलाम' कहे तो उस से बढ़कर और उत्तम विधि से उसको 'सलाम' कहो । मदिरा-पान, जुआ खेलना, मूर्ति-पूजा और महूर्त-शकुनादिक यह सब अपवित्र और शैतानी कर्म हैं, इनसे बचो । मृतक पशु का मांस मत ख़ाओ, सुअर का मांस मत खाओ, मूर्तियों के चढ़ावे मत ख़ाओ, लाठी-डण्डे से मारा हुआ शिकार मत ख़ाओ, गिरकर या ठोकर लगाकर स्वयं मरे हुए पशु का मांस मत ख़ाओ, सींग लगने से मरे हुए का मांस मत खाओ, हिंस्र पशु द्वारा फाड़ा हुआ मांस मत खाओ, मूर्ति पर चढ़ा हुआ मत खाओ; क्योंकि ये सब मृतक और मुर्दारका हुक्म रखते हैं और यदि लोग प्रश्न करें कि फिर खाएँ क्या ? तो इसका उत्तर यह दे कि संसार की सभी पवित्र वस्तुएँ खाओ । केवल मुर्दार, मृतक और मृतक रूप और अपवित्र वस्तुएं मत खाओ ।

यदि सभाओं में तुम्हें खुल कर और बिखर कर बैठने के लिए आदेश दिया जाए अर्थात् दूसरों को बैठने के लिए स्थान देने के लिए कहा जाए तो शीघ्र उन्हें स्थान दे दो ताकि दूसरे बैठ सकें । यदि तुम्हें कहा जाये कि तुम उठ जाओ तो कुछ कहे बिना चुप चाप उठकर चले जाओ । मांस दालें, इत्यादि सब वस्तुएँ जो पवित्र हों बेशक खाओ परन्तु एक ही ओर झुक जाना निषेध है । आवश्यकता से अधिक खाने तथा अपव्यय से अपने आप को बचाओ । व्यर्थ और असभ्य बातें न करो । समय और स्थिति के अनुकूल बात किया करो ।
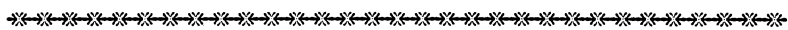
अपने वस्त्र स्वच्छ और पवित्र रखो । शरीर को और घर को और गली को तथा प्रत्येक वह स्थान जहाँ तुम्हारा बैठना उठना हो, गन्दगी और मैल कुचैल और दुर्गन्ध से बचाओ अर्थात् स्नान करते रहो और घरों को स्वच्छ रखने की आदत डालो । न ही अधिक उच्च स्वर से बोले और न ही धीमे स्वर में । सिवाए किसी खास ज़रूरत के समय के दरमियान को निगाह रखो चलने में भी न अधिक तेज़ चलो और न बहुत आहिस्ता । मध्यमता को ध्यान में रखो । जब यात्रा करो तो सर्व प्रथम यात्रा का पूर्ण प्रबन्ध कर लिया करो तथा यात्रा-सम्बन्धी सामग्री पर्याप्त मात्रा में ले लिया करो ताकि भिक्षा वृत्ति से बचो । पत्नि से भोग करने के उपरान्त स्नान कर लिया करो । जब भोजन करने लगो तो भिखारी को भी कुछ भोजन दे दिया करो और कुत्ते को भी डाल दिया करो और पक्षियों इत्यादि को भी यदि सम्भव हो।अनाथ कन्नयाऐं जिनका तुम पालन-पोषण करो, उनसे विवाह करने में कुछ हरज नहीं परन्तु यदि तुम देखो कि चूंकि वह लावारिस है शायद तुम्हारा जी उन पर ज़ियादती करे तो माता पिता और सम्बन्धियों वाली स्त्रियों से विवाह करो जो तुम्हारा मान करें और उनका तुम्हें भय रहे । एक, दो, तीन, चार तक कर सकते हो । परन्तु शर्त यह है कि न्याय करो । यदि तुम न्याय नहीं कर सकते तो एक ही करो चाहे तुम्हें आवश्यकता ही क्यों न हो । चार की संख्या जो निश्चित कर दी गई है वह इसलिए कि तुम पुरानी बुरी आदतों के वशीभूत होकर सीमा का उल्लंघन न कर सको अर्थात् सैकड़ों स्त्रियों से विवाह न करने लग जाओ अथवा व्यभिचार की ओर तुम्हारी वृत्ति न चली जाए । और जिन स्त्रियों से तुम विवाह करो उन्हें महर दे दिया करो ।

अस्तु, पवित्र क़ुर्आन की शिक्षा के अनुसार यह पहला सुधार है । जिसमें मनुष्य को प्राकृतिक अवस्थाओं को राक्षसीय वृत्तियों से हटा कर मानवीय सभ्यता की ओर प्रवृत्त किया गया है । इस शिक्षा में महान् आचरणों के किसी अंश का उल्लेख नहीं हुआ अपितु ये केवल मानवीय शिष्टचार हैं । अभी हम ऊपर लिख चुके हैं कि इस शिक्षा की अनिवार्यता इसलिए अनुभव की गई थी

कि हमारे नबी सल्लल्लाहो अलैहि वसल्लम जिस जाति की सुधार के लिए आए थे वह अमानुषिकता में समस्त जगत से बढ़ी हुई थी । उनमें किसी प्रकार से मानवता का कोई भी चिन्ह शेष नहीं रहा था । अत: यह आवश्यक था कि सर्व प्रथम उसे मावनता के बाह्य शिष्टाचार सिखाए जाते ।

सुअर का निषेध

यहाँ पर एक विशेष बात याद रखना चाहिए कि सुअर का मांस खाने का जो निषेध किया गया है, अल्लाह ने प्रारम्भ से इसके नाम में ही हराम और निषेध की ओर संकेत कर दिया है । अरबी भाषा मैं 'सुअर' को ख़िन्ज़ीर कहते हैं । 'ख़िन्ज़ीर' का शब्द 'ख़िन्ज़' और 'अर' की सन्धि (अरबी भाषा की सन्धि) से बना है जिसके अर्थ यह हैं कि मैं इसको विकृत, नीच और पतित देखता हूँ । 'ख़िन्ज़' के अर्थ ''बहुत गंदा'' और 'अर' के अर्थ ''देखता हूँ'' है। अत: इस पशु को आदिकाल से ख़ुदा तआला की ओर से जो संज्ञा दी गई है वही इस की अपवित्रता और विकृति का प्रमाण है; और यह आश्चर्य की बात है कि हिन्दी भाषा में इस पशु को ''सुअर'' कहा जाता है । यह शब्द भी ''सू'' तथा ''अर'' इन दो शब्दों की सन्धि से बना है । अरबी शब्दकोष के अनुसार इसका अर्थ यह है कि इसको अत्यधिक अपवित्र और विकृत दिखता हूँ।

इस से आश्चर्य नहीं करना चाहिए कि ''सू'' शब्द अरबी भाषा का हिन्दी में कैसे प्रयुक्त हो सकता है । सो विदित होना चाहिए कि हमने अपनी पुस्तक 'मिननुर्रहमान' में सिद्ध किया है कि संसार की समस्त भाषाओं की माता अरबी भाषा है । और अरबी भाषा के शब्द प्रत्येक भाषा में एक दो नहीं अपितु सहस्रों सम्मिलित हैं । अस्तु '''सू'' अरबी भाषा का शब्द है अतएव हिन्दी में ''सुअर'' का अनुवाद 'बद' है, अत: इस पशु को 'बद' भी कहते हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि उस युग में जब कि समस्त संसार की भाषा अरबी थी, इस देश में इस पशु का यह नाम अरबी में प्रसिद्ध था जो ''ख़िन्ज़ीर'' का

समानार्थक है । तत्पश्चात् आधुनिक युग तक वह नाम चला आया । हाँ, सम्भव है कि संस्कृत में इस का निकटवर्ती लगभग यही शब्द परिवर्तित हो कर कुछ और बन गया हो । परन्तु शुद्ध शब्द यही है क्योंकि अपने 'नाम' रखने का कारण साथ ही बताता है जिस पर 'ख़िञ्ज़ीर' का शब्द उज्ज्वल प्रमाण और साक्षी है । इस शब्द के नीच, अपवित्र और अशुद्ध आदि जो अर्थ किए हैं, इन की व्याख्या की आवश्यकता नहीं है । इस बात की किस को जानकारी नहीं कि यह पशु प्रथम कोटि का गंदगी खाने वाला निर्लज्ज और बेगैरत है । अब इस के निषेध का कारण स्पष्ट है कि प्राकृतिक विधान यही चाहता है कि ऐसे अपवित्र, निर्लज्ज और दूषित पशु के मांस का प्रभाव भी शरीर और आत्मा पर अपवित्र और दोषपूर्ण ही हो क्योंकि हम सिद्ध कर चुके हैं कि भोजन का भी मनुष्य की आत्मा पर अवश्य प्रभाव पड़ता है । अतएवं यह बात असन्दिग्ध है कि ऐसे दुष्ट का प्रभाव भी बुरा ही पड़ेगा । उदाहरणतया यूनानी वैद्यों ने इस्लाम से पूर्व ही अपना मत दिया था कि इस पशु का मांस विशेष रूप से मानव की लज्जा को कम करके निर्लज्जता और नीचता को बढ़ाता है । इसी प्रकार मृतक पशु को खाने का भी इसीलिए इस इस्लामी शरीअत में निषेध है कि मृतक पशु भी खाने वाले को अपने रूप में लाता है और इस के अतिरिक्त स्वास्थ्य के लिये भी हानिकारक है । इसी प्रकार जिन पशुओं का रक्त पूर्ण रूप से नहीं निकल पाता और उन के शरीर में ही रहता है जैसे गला घोंटा हुआ या लाठी से मारा हुआ यह सभी पशु वास्तव में मुर्दार मृतकों के विधान के अन्तर्गत आ जाते हैं । क्या मृतक का रक्त भीतर रहने से अपनी दशा में रह सकता है? नहीं, अपितु आर्द्र (नम) होने से शीघ्र ही दूषित हो जाएगा और अपनी दुर्गन्ध से संपूर्ण मांस को विकृत करेगा। इस के अतिरिक्त रक्त के कीटाणु जो नवीन खोज से सिद्ध हुए हैं मर कर विषैली दुर्गन्ध शरीर में फैला देंगे ।

मानव की चारित्रिक अवस्थाएं

दूसरा भाग सुधार का पवित्र क़ुर्आन की शिक्षानुसार यह है कि प्राकृतिक

अवस्थाओं को उचित शर्तों के द्वारा प्रतिबन्ध लगाकर चरित्र के उच्चस्तर तक पहुँचाया जाए । अत: स्मरण रहे कि यह भाग बहुत बड़ा है यदि हम इस भाग का विस्तारपूर्वक वर्णन करें अर्थात् समस्त उन आचरणों का इस स्थान पर उल्लेख करना चाहें जो पवित्र क़ुर्आन में वर्णन किए हैं तो यह लेख इतना विशाल हो जाएगा कि समय इस के दसवें भाग तक के लिए भी पर्याप्त न होगा, अतएवं उच्चारणों की विभिन्न विधाओं में से कुछेक का उदाहरण के रूप में यहाँ उल्लेख किया जायेगा ।

अब जानना चाहिए कि आचरण दो प्रकार के हैं । प्रथम वे आचरण जिन के द्वारा मनुष्य बुराई को छोड़ने के समर्थ हो जाता है दुसरे वह आचरण जिनके द्वारा मनुष्य दूसरों को भलाई पहुँचाने की ताकत रखता है । बुराई त्यागने के अन्तर्गत वे आचरण आ जाते हैं जिन के द्वारा मनुष्य प्रयत्न करता है कि अपनी ज़बान या अपने हाथ या अपनी आंख या अपने किसी और अंग से दूसरे के धन या मान या प्राणों को हानि पहुँचानेऔर अपमान करने का विचार न कर सके। इसी प्रकार सुविचार और भलाई पहुँचाने के अन्तर्गत वे आचरण आते हैं जिन के द्वारा मनुष्य प्रयत्न करता है कि अपनी ज़बान या अपने हाथ या अपने ज्ञान या किसी अन्य साधन से किसी दूसरे के धन या मान को लाभ पहुँचा सके, अथवा उस के प्रभुत्व और मान को प्रतिष्ठापित करने का निश्चय कर सके, अथवा यदि किसी ने उस पर कोई अत्याचार किया था तो वह अपराधी जो दण्ड का भागी था उस से उसे क्षमा कर सके, और इस प्रकार उस को दु:ख, क्लेश, शारीरिक अथवा आर्थिक दण्ड से उसकी सुरक्षा करके उसे लाभ पहुँचा सके, अथवा उसको ऐसा दण्ड दे सके जो वास्तव में उस के लिए अत्यन्त वरदान सिद्ध हो ।

बुराई को त्यागने के सम्बंध में आचरण

स्मरण रहे कि वे आचरण जो बुराई त्यागने के लिए विधाता ने नियत किए हैं, वे अरबी भाषा में । जिस में समस्त मानवीय विचार, नियम और

आचरण इत्यादि की अभिव्यक्ति के लिये पृथक्-पृथक् एक-एक शब्द विद्यमान है- चार संज्ञाओं से अभिहित हैं । अत: प्रथम आचरण **'एहसान'** (वासना का त्याग) है । ''एहसान'' (वासना का त्याग) का विशेष अर्थ वह पवित्रता है जो स्त्री पुरुष की प्रजनन शक्ति से सम्बन्ध रखती है ।

''मोहसिन या मोहसिना'' उस पुरुष या स्त्री को कहा जाएगा जो कि व्यभिचार अथवा उस की निकटवर्ती क्रियाओं से दूर रह कर उस व्यभिचार से अपने आप को नियन्त्रण में रखे जिसका परिणाम दोनों के लिये इस संसार में बेइज़्ज़ती लअनत तथा दूसरे संसार में प्रकोप (अज़ाब) तथा अन्य सम्बन्धियों के लिये मानहानि और अप्रतिष्ठा जैसी भयानक हानियां हैं । उदाहरणतय: जो व्यक्ति किसी की पत्नी से यह अनुचित कर्म करे अथवा व्यभिचार तो नहीं अपितु उस की निकटवर्ती क्रियाएं उस स्त्री-पुरुष दोनों से प्रकट हो जायें तो इस में कोई सन्देह नहीं कि उस लज्ञावान सताए हुए पुरुष की ऐसी पत्नि को जो व्यभिचार कराने पर सहमत हो गई थी अथवा व्यभिचार भी हो चुका था तलाक देनी पड़ेगी और यदि उस स्त्री के गर्भ से कोई सन्तान है तो उन बच्चों के कारण भी भारी कलह का सामना होगा और घर का स्वामी उस नीच और पतित के कारण यह सब हानि सहन करेगा ।

इस स्थान पर स्मरण रखना चाहिए कि यह आचरण जिस का नाम ''एहसान'' अथवा इफ़्फ़त है । अर्थात् पवित्र जीवन रहना । यह उसी अवस्था में आचरण कहलाएगा जब कि ऐसा व्यक्ति जो कुदृष्टि या व्यभिचार करने की शक्ति रखता हो, प्रकृति ने यह शक्तियां उसे प्रदान की हों जिन के द्वारा यह अपराध किया जा सकता है, इस दुष्कर्म से अपने को बचाए । यदि बाल्यवस्था होने या नपुंसक और नामर्द होने अथवा वृद्ध और जरठ होने के कारण जिस में यह शक्ति विद्यमान न हो तो ऐसी दशा में हम उस को इस आचरण की संज्ञा नहीं दे सकते जिस का नाम ''एहसान'' अथवा इफ़्फ़त है । उस में इतना अवश्यक है कि ''इफ़्फ़त'' और ''एहसान'' की इस में प्राकृतिक अवस्था है किन्तु हम बार बार लिख चुके हैं कि प्राकृतिक और स्वभाविक प्रवृत्तियां

आचरण और चरित्र की संज्ञा नहीं पा सकतीं अपितु उस समय चरित्र की सीमा में प्रवेश कर जाएंगी जब कि बुद्धि के नियन्त्रण और उसी की छात्रछाया में आकर अपने समय और स्थिति पर प्रकट हों अथवा अभिव्यक्ति की सामर्थ्य उत्पन्न कर लें । अतएवं जैसा कि मैं लिख चुका हूँ बच्चे और नपुंसक और ऐसे लोग जो अपने आप को किसी प्रकार नामर्द और नपुंसक बना लें इस आचरण के स्वामी कदापि नहीं कहला सकते । चाहे वह संयमी के रूप में अपना जीवनयापन करें परन्तु उन समस्त अवस्थाओं में इन के संयम और नियन्त्रण को प्राकृतिक स्वाभाविक अवस्था के नाम से ही अभिहित किया जाएगा इसके अतिरिक्त कुछ नहीं । चूंकि यह घृणित कार्य तथा इस से मिलती जुलती निकटवर्ती क्रियाएं जिस प्रकार पुरुष से हो सकती है वैसे ही स्त्री से भी हो सकती हैं । अतः ख़ुदा की पवित्र वाणी क़ुर्आन शरीफ़ में स्त्री और पुरुष दोनों के लिए ही शिक्षा दी गई है :-

قُلْ لِّلْمُؤْمِنِيْنَ يَغُضُّوْا مِنْ اَبْصَارِهِمْ وَيَحْفَظُوْا فُرُوْجَهُمْ ذٰلِكَ اَزْكٰى لَهُمْ [1] وَقُلْ لِّلْمُؤْمِنٰتِ يَغْضُضْنَ مِنْ اَبْصَارِهِنَّ وَيَحْفَظْنَ فُرُوْجَهُنَّ وَلَا يُبْدِيْنَ زِيْنَتَهُنَّ اِلَّا مَا ظَهَرَ مِنْهَا وَلْيَضْرِبْنَ بِخُمُرِهِنَّ عَلٰى جُيُوْبِهِنَّ [2] وَلَا يَضْرِبْنَ بِاَرْجُلِهِنَّ لِيُعْلَمَ مَا يُخْفِيْنَ مِنْ زِيْنَتِهِنَّ وَتُوْبُوْا اِلَى اللّٰهِ جَمِيْعًا اَيُّهَ الْمُؤْمِنُوْنَ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُوْنَ [3] وَلَا تَقْرَبُوا الزِّنٰى اِنَّهٗ كَانَ فَاحِشَةً وَّسَآءَ سَبِيْلًا [4] وَلْيَسْتَعْفِفِ الَّذِيْنَ لَا يَجِدُوْنَ نِكَاحًا [5] وَرَهْبَانِيَّةَ اِبْتَدَعُوْهَا مَا كَتَبْنٰهَا عَلَيْهِمْ [6] فَمَا رَعَوْهَا حَقَّ رِعَايَتِهَا

''क़ुललिल्मोऽमिनीना यग़ुज़्ज़ू मिन अबसारे हिम व यहफ़ज़ू फ़ुरूजहुम ज़ालिका अज़कालहुम । व क़ुललिल् मोऽमिनाते

 ١ النور: ٣١ ٢ النور: ٣٢ ٣ النور: ٣٢ ٤ بنی اسرائیل: ٣٣ ٥ النور: ٣٤ ٦ الحدید: ٢٨

यग़ज़ुज़न मिनअबसारेहिन्ना व यहफ़ज़्ना फ़ुरुजहुन्ना व ला युबदीना ज़ीनतहुन्ना इल्ला मा ज़हरा मिनहा । वल् यज़रिबना बे ख़ोमोरेहिन्ना अला जोयूबैहिन्ना व ला यज़रिबना बे अर्जुलेहिन्ना ले यो5लमा मा युख़फ़ीना मिन ज़ीनतेहिन्ना व तूबू इलल्लाहे जमीअन अय्योहलमो5मिनूना लअल्लकुम तुफ़्लेहून । वला तक़रबुज़्ज़िना इन्नहू काना फ़ाहिशतन व साआ सबीला । वल यस्तअफ़िफ़िल्लाज़ीना ला यजेदूना निकाहन व रहबानियता निबतदऊहा मा कतब्नाहा अलैहिम फ़मा रऊहा हक़्क़ा रेआयतेहा ।''

अर्थात् ईमान लाने वाले पुरुषों को कह दो कि अपने नेत्रों को पराई स्त्रियों को देखने से बचाए रखें और ऐसी स्त्रियों को बेपर्दे की दशा में न देखें जो कामवासना को उत्तेजित करने का कारण बन सकती हों और ऐसे अवसरों पर अपनी दृष्टि को इस प्रकार झुका लें मानों नेत्रों में निद्रा आ गई हो और अपने लज्जा के विशेष अंगों को विशेष कर प्रजोत्पादक अंगों को जैसे भी हो सके बचाएं । इसी प्रकार कानों को भी पराई स्त्रियों के स्वरों से सुरक्षित रखें । अर्थात् पराई स्त्रियों के गाने बजाने और मनमोहक स्वरों को न सुनें । और उन की सुन्दरता की कहानियां न सुनें दृष्टि और हृदय की पवित्रता के लिए यह सिद्धान्त अत्युत्तम है । इसी प्रकार ईमानदार और मोमिन स्त्रियों को कह दो कि वे भी अपनी आंखों को पराए पुरुषों को देखने से बचाएं अर्थात् काम वासना को उत्तेजित करने वाले स्वरों को न सुने और अपने लज्जा के अंगों को ढांक कर रखें एवं अपने अलंकृत अवयवों को किसी नामहरम के सामने न खोलें तथा अपनी ओढ़नी को इस प्रकार ओढ़ें कि ग्रीवा से होती हुई शीश को भली प्रकार ढांक ले अर्थात् ग्रीवा और दोनों कान तथा शीश और कनपटियां सब चादर के पर्दे में रहें और अपने पैरों को भूमि पर नर्तकियों की तरह न मारें । यह वह उपाय है कि जिस की पाबंदी करने से मनुष्य ठोकर से बच सकता है।

इसी प्रकार सुरक्षित रहने का **दूसरा ढंग** यह भी है कि ख़ुदा तआला की ओर ध्यान दें और उस से दुआ करें ताकि ठोकर से बचावे और क़दम के फिसलने से मुक्ति दे । व्यभिचार के निकट मत जाओ अर्थात् ऐसी बैठकों और सभाओं से दूर रहो जिस से यह विचार हृदय में उत्पन्न हो सकता है और उन ढंगों का प्रयोग न करो जिस से इस प्रकार का पाप या अपराध होने की सम्भावना हो । जो व्यभिचार करता है वह बुराई को उस की पराकाष्ठा (इन्तिहा) तक पहुँचा देता है । व्यभिचार का मार्ग बहुत दूषित मार्ग है अर्थात् उद्देश्य प्राप्ति में बाधक है और तुम्हारे अन्तिम लक्ष्य प्राप्ति के लिये भयानक अवरोध है । जो विवाह न कर सके तो वह अपनी पवित्रता को दूसरे ढगों से बचावे उदाहरणतय रोज़ा (व्रत) रखे या भोजन कम करे अथवा अपनी शक्तियों के लिए कष्टदायक काम करे । और लोगों ने यह भी ढंग निकाले हैं कि वह सदैव जानबूझ कर अविवाहित रहें अथवा नपुंसक बनें या किसी प्रकार से वैराग्य या संन्यास धारण कर लें । किन्तु ख़ुदा ने मानव के लिए ऐसे नियम कदापि नहीं बनाए । तभी तो वे इन कुरीतियों और कुप्रथाओं को जीवन में पूर्णरूप से निबाह नहीं सके ।

ख़ुदा का यह कथन कि हमारा यह आदेश नहीं कि लोग नपुंसक बनें । यह इस बात की ओर संकेत है कि यह यदि ख़ुदा की आज्ञा होती तो सभी लोग इसी आज्ञा पर चलने में समर्थ होते । ऐसी अवस्था में मानव जाति की सन्तान की समाप्ति होकर आजसे बहुत पहले संसार का अन्त हो गया होता । यदि इसी प्रकार संयमी और पवित्रात्मी बनना हो कि मनुष्य अपना लिंग काट दे तो अपरोक्ष रूप में उस जगत स्रष्टा पर आक्षेप आता है जिसने वह लिंग बनाया । इसके अतिरिक्त जबकि पुण्य का आधार इस बात पर है कि एक शक्ति विद्यमान हो और फिर मनुष्य ख़ुदा तआला का भय हृदय में धारण करके उस शक्ति की अनुचित उत्तेजनाओं का सामना करता रहे और उससे उचित लाभ प्राप्त करके द्विगुणित पुण्य प्राप्त करे । अत: स्पष्ट है कि ऐसे अंग के नष्ट कर देने से दोनों पुण्यों से वंचित रहना पड़ा । पुण्य तो विरोधी शक्ति के होते हुए

और फिर उस के विपरीत संघर्ष करने से मिलता है । किन्तु जिसमें बच्चे के प्रकार वह शक्ति ही नहीं रही, उसे क्या पुण्य मिलेगा ? क्या बच्चे को अपने संयम का पुण्य मिल सकता है ।

सच्चरित्र (पाक दामन) रहने के लिए पांच इलाज

इन आयतों में ख़ुदा तआला ने सच्चरित्रता और शुद्धाचारण की प्राप्ति के लिए केवल उत्कृष्ट उपदेशों द्वार ही हमारा पथप्रदर्शन नहीं किया अपितु हमें संयमी और सच्चरित्र (पाक दामन) बनाने के लिए पाँच उपचार भी बताए हैं वे यह हैं :-

1. अपने नेत्रों को पराई स्त्रियों पर दृष्टि डालने से बचाना ।

2. कानों को पराई स्त्रियों के स्वर सुनने से बचाना ।

3. नामहरमों (पराई स्त्रियों) की कहानियां न सुनना ।

4. ऐसी समस्त बैठकों और सभाओं से जिन में इस कुकर्म के होने की सम्भावना हो अपने आप को बचाना ।

5. यदि विवाह न हो तो व्रत रखना आदि ।

इस स्थान पर हम यह बात पूर्ण निश्चय से कहते हैं कि यह सुन्दर शिक्षा उन सभी साधनों सहित जो पवित्र क़ुर्आन ने वर्णन किए हैं केवल मात्र इस्लाम से ही विशिष्ट है । इस स्थान पर यह बात स्मरण रखने योग्य है कि चूँकि मनुष्य की वह प्राकृतिक अवस्था जे काम वासना का केन्द्र और उसका स्रोत है जिससे मनुष्य किसी महान् क्रांति और आमूल परिवर्तन के बिना अलग नहीं हो सकता, यही है कि इस की कामोत्तेजना और वासना, समय और स्थिति को अपने अनुकूल पाकर अपना नियन्त्रण रख नहीं सकती । अथवा यूँ कहो कि वह उत्तेजना के भयंकर आवेग के आवर्तन में फंस जाती है । इस लिए ख़ुदा तआला ने हमें यह शिक्षा नहीं दी कि हम पराई (नामहरम) स्त्रियों को निस्संकोच देख तो लिया करें, तथा उनके सभी अलंकारों और सौन्दर्य के भी दर्शन कर लिया करें तथा उनके नृत्य आदि सभी उत्तेजक क्रियाकलापों को भी देख लिया करें,

परन्तु पवित्र दृष्टि से देखें ! इसी प्रकार न ही हमें यह शिक्षा दी कि हम उन पराई स्त्रियों के संगीत नृत्यादि सुन या देख लें । अपितु हमें यह आदेश दिया गया है कि हम नामहरम स्त्रियों को और उन के अलंकारों व सुन्दरता के स्थानों को बिल्कुल न देखें; न पवित्र हृदय से और न अपवित्र हृदय से । उनके मनमोहक स्वरों और उनके किस्से कहानियों को न सुनें। न पवित्र हृदय से और न ही अपवित्र हृदय से । अपितु हमें चाहिए कि न उन्हें, देखें, न सुनें, और देखने सुनने से सदैव घृणा करें । उसी प्रकार जैसे मृतक पशु का मांस खाने से घृणा रखते हैं ताकि पथभ्रष्ट न होवें क्योंकि अनियन्त्रित दृष्टि से पतन की सम्भावना सदैव अनिवार्य रूप से बनी रहती है । अत: चूँकि ख़ुदा तआला चाहता है कि हमारा मन, हमारे नेत्र हमारा हृदय और हमारी भावनाएँ पवित्र रहें इसीलिए उसने यह सर्वोत्तम शिक्षा दी है । इसमें कोई सन्देह नहीं कि निरंकुशता ठोकर का कारण बन जाती है । यदि हम एक भूखे कुत्ते के आगे नर्म-नर्म और कोमल-कोमल रोटियां रख दें और फिर आशा यह रखें कि उस कुत्ते के मन में उन रोटियों को खाने के लिए विचार तक उत्पन्न न होगा तो हमारा वह विचार और मत अनुचित् होगा । अत: ख़ुदा तआला की यही शुभेच्छा थी कि कामेन्द्रियों को लुक छिपकर कुकर्म और व्यभिचार करने का कोई अवसर न दिया जाए और ऐसी कोई स्थिति ही पैदा न होने दी जाय जिससे इस प्रकार का भय उत्पन्न हो सके ।

इस्लामी पर्दा के भीतर यही तत्व छिपा हुआ है और ख़ुदा की पवित्र वाणी क़ुर्आन का भी यही आदेश है । पवित्र क़ुर्आन में पर्दे का अर्थ यह कदापि नहीं कि केवल स्त्रियों को बन्दियों की तरह बन्दी-गृह में रखा जाए । यह उन मूर्खो और अज्ञानियों का मत है जिनको इस्लामी सिद्धांतों का ज्ञान नहीं । अपितु पर्दे का वास्तविक उद्देश्य यह है कि स्त्री, पुरुष दोनों को बिल्कुल स्वेच्छाचारी आँखें मिलाने और अपने सौंदर्य को दिखाने से रोका जाए क्योंकि इसमें स्त्री पुरुष दोनों की भलाई है । अत: यह भी स्मरण रखना चाहिए कि नीची निगाहों के द्वारा पराई स्त्रियों पर कुदृष्टि डालने से अपने को बचा लेना

तथा उचित दर्शनीय वस्तुओं को देखना, इस विधि को अरबी भाषा में "ग़ज़्ज़ेबसर" कहते हैं गुनाहों से परहेज़ करने वाला (सदाचारी) प्रत्येक वह व्यक्ति जो अपने मन और हृदय को पवित्र रखना चाहता है उसके लिए यह उचित नहीं कि पशुओं के समान जिस ओर चाहे निरंकुश होकर दृष्टि उठा उठा कर देखता फिरे अपितु इसके लिए इस सामाजिक जीवन में नेत्रों को झुकाए रखने की आदत डालना ज़रूरी है । यह वह मुबारक आदत है जिससे उसकी यह प्राकृतिक प्रवृत्ति एक उच्च और महान् चरित्र के रूप में रूपान्तरित हो जाएगी और उसकी सामाजिक अनिवार्यताओं में भी अन्तर नहीं पड़ेगा । यह वह आचरण है जिसको संयम और सच्चरित्रता कहते हैं ।

दूसरी किस्म बुराई को त्यागने की किसमों में से वह आचरण है जिस को अमानत-दयानत (उपनिधि की रक्षा, ईमानदारी एवं सत्यव्रत आदि) कहते हैं। अर्थात् दूसरे के धन पर शरारत और बुरी नियत से कबज़ा कर के उसे दुःख देने पर राज़ी न होना ।

स्मरण रहे कि अमानत दार और सत्यव्रती होना मनुष्य की प्राकृतिक अवस्थाओं में से एक अवस्था है । इसीलिए एक दुधमुँहा शिशु जो अपनी छोटी आयु के कारण अपनी प्राकृतिक और स्वाभाविक सादगी पर होता है और इसी तरह अपनी अल्पायु होने के कारण उसमें अभी बुरी अदतें नहीं होतीं । दूसरे की वस्तु से उसे इतनी घृणा होती है कि वह दूसरी औरत का दूध भी बड़ी कठिनाई से पीता है और यदि उस समय जब कि उसे होश न हो कोई दाई नियुक्त न की जा सके तो सूझ बूझ के समय उसे किसी दूसरे का दूध पिलाना कठिन हो जाता है वह अपने प्राणों को घोर संकट में डाल लेता है और सम्भव है कि उस कष्ट से मृत्यु के निकट पहुँच जाए । किन्तु दूसरी स्त्री के दूध से स्वाभावतया घृणा करता है । इस घृणा का क्या कारण है ? बस यही, कि वह माता को छोड़कर दूसरे की वस्तु की ओर ध्यान देने और उसमें रुचि लेने में स्वाभावता घृणा करता है । अब हम जब एक गम्भीर दृष्टि से बच्चे के इस स्वभाव को देखते हैं और इस पर विचार करते है, और विचार करते-करते

उसकी इस आदत की तह तक चले जाते हैं तो हम पर यह बात स्पष्ट हो जाती है कि यह स्वभाव कि पराई वस्तु से बच्चा इतनी घृणा करता है यहां तक कि अपने प्राणों को खतरे में डाल लेता है, यही जड़ दयानत और अमानत की है ।

और अमानत और दयानत अर्थात् ईमानदारी और सत्यव्रत आदि चरित्र के क्षेत्र में कोई व्यक्ति उस समय तक सत्यव्रत नहीं ठहर सकता जब तक बच्चे की तरह पराए धन के विषय में भी वास्तविक घृणा उसके हृदय में उत्पन्न न हो जाए । परन्तु शिशु इस प्रवृत्ति का अपने उचित समय और स्थिति पर प्रयोग नहीं करता और अपनी अज्ञानता के कारण कई प्रकार के कष्ट भोगता है । अत: उसकी यह आदत केवल प्राकृतिक अवस्था है जिसको वह मजबूर हो कर प्रदर्शित करता है । अतएवं वह क्रिया उस के आचरण का अंग नहीं बन सकती। यद्यपि मानवीय नेचर में अमानत और दयानत, ईमानदारी और सत्यव्रती के आचरण का मूल वही है जैसे एक शिशु इस अनुचित क्रिया से ईमानदार और सत्यव्रती नहीं कहला सकता उसी प्रकार वह व्यक्ति भी इस आचरण से विभूषित नहीं हो सकता जो इस प्राकृतिक मूलप्रवृत्ति को उचित अवसर पर प्रयुक्त नहीं करता । दयानतदार (सत्यव्रती) तथा अमीन (धोरहर को पूर्णरूप से यथाविधि रखने वाला) बनना अति कठिन है । जब तक मनुष्य इसके सब पहलुओं कर्त्तव्यों का पालन न करे तब तक दयानतदार तथा ईमानदार नहीं बन सकता । इस विषय में अल्लाह तआला ने उदाहरण के रूप में निम्नलिखित आयतों में अमानत का ढंग समझाया है और वह विधि यह है:-

وَلَا تُؤْتُوا السُّفَهَآءَ اَمْوَالَكُمُ الَّتِیْ جَعَلَ اللّٰهُ لَكُمْ قِيٰمًا وَّ ارْزُقُوْهُمْ
فِيْهَا وَاكْسُوْهُمْ وَقُوْلُوْا لَهُمْ قَوْلًا مَّعْرُوْفًا ○ وَ ابْتَلُوا
الْيَتٰمٰى حَتّٰۤى اِذَا بَلَغُوا النِّكَاحَ ۚ فَاِنْ اٰنَسْتُمْ مِّنْهُمْ رُشْدًا فَادْفَعُوْۤا
اِلَيْهِمْ اَمْوَالَهُمْ ۚ وَلَا تَاْكُلُوْهَاۤ اِسْرَافًا وَّ بِدَارًا اَنْ يَّكْبَرُوْا ؕ
وَمَنْ كَانَ غَنِيًّا فَلْيَسْتَعْفِفْ ۚ وَ مَنْ كَانَ فَقِيْرًا فَلْيَاْكُلْ
بِالْمَعْرُوْفِ ؕ فَاِذَا دَفَعْتُمْ اِلَيْهِمْ اَمْوَالَهُمْ فَاَشْهِدُوْا عَلَيْهِمْ ؕ

وَكَفٰى بِاللّٰهِ حَسِيْبًا ۝ [1]
وَلْيَخْشَ الَّذِيْنَ لَوْ تَرَكُوْا مِنْ خَلْفِهِمْ ذُرِّيَّةً ضِعٰفًا
خَافُوْا عَلَيْهِمْ ۖ فَلْيَتَّقُوا اللّٰهَ وَلْيَقُوْلُوْا قَوْلًا سَدِيْدًا ۝
اِنَّ الَّذِيْنَ يَاْكُلُوْنَ اَمْوَالَ الْيَتٰمٰى ظُلْمًا اِنَّمَا يَاْكُلُوْنَ فِيْ
بُطُوْنِهِمْ نَارًا ۖ وَسَيَصْلَوْنَ سَعِيْرًا ۝ [2]

''व ला तोऽतुस्सुफ़हाअ अमवालकोमोल्लती जअलल्लाहो लकुम् क़ियामौं वर्ज़ाक़ूहुमफ़ीहावकसूहुम व क़ूलू लहुम् क़ौलम्मअरूफ़ा। वब्तलुल्यतामा हत्ता इज़ा बलग़ुन्निकाहा। फ़ इन आनस्तुम् मिनहुम् रुश्दन फ़द्फ़ऊ इलैहिम् अमवालहुम् वला तअकोलूहा इस्राफ़ौं व बिदारन अँय्यक्बोरू। व मन काना ग़नीय्यन फ़ल्यस्तअफ़िफ़ वमन काना फ़क़ीरन फ़लयऽकुल बिल् मऽरूफ़े । फ़ इज़ा दफ़ऽतुम इलैहिम अमवालहुम फ़ अशहेदू अलैहिम । व कफ़ा बिल्लाहे हसीबा । वल् यख़शल्लज़ीन लौ तरकूमिन ख़ल्फ़ेहिम् ज़ु रींयतन ज़ियाफ़न ख़ाफ़ूअलैहिम् फ़ल् यत्तक़ुल्लाहा वल् यक़ूलू क़ौलन सदीदा। इन्नल्लज़ीना याऽकोलूना अमवालल्यतामा ज़ुल्मन् इन्नमा याऽकोलूना फ़ी बुतूनेहिम् नारा वसयस्लौना सईरा।''

अर्थात् :- यदि तुम में से कोई ऐसा धनवान हो जो अपने उस धन को सम्भालने और उसे उचित रीति से व्यय करने की बुद्धि न रखता हो, उदाहरणतया अनाथ अथवा नाबालिग़ हो और सम्भावना यह हो कि वह अपनी मूर्खता से अपने धन को विनष्ट कर देगा तो तुम (कोर्ट आफ़वार्ड्स के रूप में) वह समस्त धन अपने को उसका ट्रस्टी और रक्षक समझकर अधिकार में ले लो और वह सम्पूर्ण धन जो व्यापर और रोज़गार धन्धे में लगाया जाता

[1] النساء : ٦-٧ [2] النساء : ١٠-١١

हो उन बुद्धिहीनों को मत दो । और इस माल में से आवश्यकतानुसार उनके भोजन और वस्त्रों के लिए कुछ धन दे दिया करो तथा उन्हें शिक्षा के रूप में भली बातें विधिपूर्वक समझाते रहो अर्थात् ऐसी बातें जिन से उन की बुद्धि और उन की ज्ञानवृद्धि होती हो और एक प्रकार उनके स्थिति के अनुरूप यथावश्यक उनकी दीक्षा पूर्ण हो जाए तथा अबोध, अज्ञानी और अनुभव-हीन न रहें । यदि वे व्यापारी के पुत्र हैं तो व्यापार के ढंग उन को बताते रहो । यदि कोई अन्य पेशा रखते हैं तो उस पेशे के अनुसार उनको प्रशिक्षित करते रहो । इस प्रकार उनकी स्थिति के अनुकूल उन्हें साथ-साथ शिक्षा देते जाओ और अपनी दी हुई शिक्षा की कभी-कभी परीक्षा भी लेते जाओ ताकि पता लगता रहे कि जो कुछ तुम ने शिक्षा दी है उसको उन्होंने समझा भी है अथवा नहीं । तत्पश्चात् जब वे विवाह के योग्य हो जावें अर्थात् उनकी आयु लगभग 18 वर्ष हो जावे और तुम यह अनुमान कर लो कि उनमें अपने धन को सम्भालने की बौद्धिक शक्ति उत्पन्न हो गई है तो उनका धन उनके सपुर्द कर दो । स्मरण रहे कि उनके धन का तुम से अपव्यय न होने पाए और न ही इस भय से जल्दी-जल्दी धन को खर्च करो कि यदि वे बड़े हो जाएंगे तो अपना माल ले लेंगे । जो व्यक्ति दौलतमंद हो उसके लिए यह उचित नहीं कि उन अनाथों के धन से सेवा की मज़दूरी ले परन्तु एक निर्धन व्यक्ति उचित मज़दूरी ले सकता है ।

अरब में इस प्रकार के अमानतदारों और धरोहरों के संरक्षकों के लिए यह रीति प्रचलित थी कि यदि अनाथों के स्वामी और मालिक उनके धन में से ले लेना चाहते तो प्राय: यह नियम रखते कि जो कुछ अनाथ के धन को व्यापार से लाभ होता उस में से स्वयं भी लेलेते । मूलधन को हानि नहीं पहुँचाते । अत: यह उसी विधि की ओर संकेत है कि तुम भी ऐसा करो और फ़िर फ़रमाया कि जब तुम अनाथों को धन वापिस करने लगो तो गवाहों की साक्षी लेकर उन्हें उनका धन वापिस करो । जो व्यक्ति ऐसी अवस्था में मृत्यु को प्राप्त हो जबकि उसके बच्चे कोमल, दुर्बल और अल्पायु के हों तो उसके लिए यह उचित नहीं कि कोई ऐसी वसीयत करे जिससे बच्चों के अधिकारों को

हानि पहुंचे । जो लोग इस प्रकार अनाथों का धन खाते हैं जिससे अनाथों पर अत्याचार होता हो वह धन नहीं अपितु अग्नि खाते हैं और अन्ततः भस्म कर देने वाली भयंकर अग्नि में डाले जाएंगे ।

अब देखो ख़ुदा तआला ने दयानत और अमानत की कितनी विधियां बतलाई हैं । अतः वास्तविक अर्थों में अमानत और दयानत वही है जो इन सभी विधियों के अनुसार हो और यदि बौद्धिक अंकुश के पूर्ण नियन्त्रण से ईमानदारी और सत्यव्रत में उक्त सभी विधियों को दृष्टि में न रखा गया हो तो ऐसी दयानत और अमानत में नाना रूप से बेईमानी का अंश छिपा होगा । इसी प्रकार दूसरे स्थान पर फ़रमाया :-

وَلَا تَأْكُلُوٓا أَمْوَالَكُم بَيْنَكُم بِالْبَاطِلِ وَتُدْلُوا بِهَآ
إِلَى الْحُكَّامِ لِتَأْكُلُوا فَرِيقًا مِّنْ أَمْوَالِ النَّاسِ
بِالْإِثْمِ وَأَنتُمْ تَعْلَمُونَ ۝ ١

إِنَّ اللّٰهَ يَأْمُرُكُمْ أَن تُؤَدُّوا الْأَمَانَاتِ إِلَىٰٓ أَهْلِهَا ٢
إِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ الْخَائِنِينَ ۝ ٣ وَأَوْفُوا الْكَيْلَ إِذَا كِلْتُمْ
وَزِنُوا بِالْقِسْطَاسِ الْمُسْتَقِيمِ ٤ وَلَا تَبْخَسُوا النَّاسَ
أَشْيَاءَهُمْ وَلَا تَعْثَوْا فِي الْأَرْضِ مُفْسِدِينَ ۝ ٥
وَلَا تَتَبَدَّلُوا الْخَبِيثَ بِالطَّيِّبِ ٦

''वला ताऽकोलू अमवालकुम बैनकुम बिल् बातिले व तुद्लू बेहा इलल हुक्कामे लेताऽकोलू फ़रीक़म् मिन अमवालिन्नासे बिलइस्मेव अन्तुम् ताऽलमूना । इन्नल्लाहा यामोरोकुम अन तुअद्दुल अमानाते इला अहलेहा । इन्नल्लाहा ला योहिब्बुलखायनीन । व औफ़ुल कैला इज़ाकिल तुम वज़िनू

---

١ البقرة: ١٨٩ ٢ النساء: ٥٩ ٣ الانفال: ٥٩ ٤ بنی اسرائیل: ٣٦ ٥ الشعراء: ١٨٤، ٦ النساء: ٣

बिलकिस्तासिल मुस्तक़ीम । वला तब्ख़सुन्नासा अशयाअहुम् व लातऽसौ फ़िलअर्ज़े मुफ़्सेदीना । वला ततबद्दलुल्ख़बीसा बित्तैयेबे ।''

अर्थात् परस्पर एक दूसरे के धन को अनुचित ढंग से मत खाया करो और न ही अपने धन को घूंस के रूप में पदाधिकारियों तथा अधिकारी वर्ग को दिया करो ताकि उसके बल पर उन अधिकारियों की सहायता से दूसरे के धन को दबा लो । धरोहरों और अमानतों को उनके स्वामियों को वापिस दे दिया करो। ख़ुदा बेईमानी करने वालों से मैत्री नहीं रखता । जब तुम मापो तो पूरा मापो और जब तोलो तो शुद्ध तराज़ू से और पूरा तोलो और किसी प्रकार से लोगों को उनके धन आदि की हानि न पहुंचाओ तथा कलह के उद्देश्य से पृथ्वी पर मत चला करो अर्थात् इस उद्देश्य से कि चोरी करें या डाका डालें अथवा किसी की जेब कतरें या किसी और अनुचित ढंग से पराए धन पर अधिकार कर लें । तत्पश्चात् फ़रमाया कि श्रेष्ठ वस्तुओं के बदले में रद्दी और अपवित्र वस्तुएं न दिया करो अर्थात् जिस प्रकार दूसरों का धन दबा लेना निषिद्ध है उसी प्रकार दूषित और विकृत वस्तुओं का विक्रय अथवा उत्तम वस्तु के बदले निकृष्ट वस्तु देना भी वर्जित है ।

इन समस्त आयतों में ख़ुदा तआला ने बेईमानी और मिथ्या के सभी रूपों का उल्लेख कर दिया है । अल्लाह का कथन प्रत्येक दृष्टि से ऐसा सम्पूर्ण है कि उस में बेईमानी और धोखे का कोई अंश शेष नहीं रहा । केवल यह नहीं कहा कि तू चोरी न कर । ताकि एक मूर्ख यह न समझ बैठे कि मेरे लिए केवल चोरी का निषेध है शेष सभी दुष्कर्म करने की खुली आज्ञा है । इस सर्वरूप संपूर्ण वाक्य में यह सूक्ष्म तत्व निहित है जिस के द्वारा समस्त अनुचित कर्मों और अनुचित गतिविधियों का निषेध कर दिया गया है। सारांश यह कि यदि किसी व्यक्ति में इस प्रकार शुद्ध रूप से दयानत और अमानत का विशिष्ट आचरण पाया नहीं जाता उस के सभी नियमों की पालना नहीं करता तो ऐसा व्यक्ति यदि दयानत और अमानत के कुछेक नियमों का प्रदर्शन भी करे तो उसकी वह

क्रिया दयानत के अन्तर्गत नहीं आ सकती, प्रत्युत वह एक प्राकृतिक अवस्था पर आधारित स्वाभाविक क्रिया होगी जो बुद्धि तत्व तथा रूहानी रौशनी से ख़ाली होगी ।

चरित्र के क्षेत्र में बुराई को त्यागने में **तीसरा रूप** वह है जिसको अरबी में ''हुद्ना'' और ''हौनुन'' कहते हैं । अर्थात् दूसरों को अत्याचार के द्वारा शारीरिक कष्ट न पहुंचाना और किसी को हानी पहुँचाने वाला न होना तथा मैत्री भाव से जीवन व्यतीत करना । निस्संदेह मैत्री भाव एक उच्चकोटि का आचरण है जो मानवता के लिए अत्यावश्यक है । इस आचरण के अनुरूप जो प्राकृतिक शक्ति बच्चा में होती है, जो विकसित होकर आचरण की संज्ञा पाता है, वह प्रेम तथा अनुराग है । यह स्पष्ट है कि मनुष्य केवल अपनी जन्मजात अवस्था में अर्थात् उस अवस्था में जबकि मनुष्य में बुद्धिगत विशेष ज्ञान नहीं होता मैत्री के विषय को समझ नहीं सकता और न युद्ध के तत्व को समझ सकता है । अत: उस सम्य जो एक वृत्ति उस में मेल जोल की पाई जाती है वही मैत्री भाव की जननी है किन्तु चूंकि वह बुद्धि और सोच विचार और विशेश इरादा से अपनाई नहीं जाती इस लिएउसे चरित्र नहीं कहा जा सकता । चरित्र तो तब कहलाएगा जबकि मनुष्य अपनी इच्छा से अपने आप को सरल स्वभाव बनाकर, मैत्री भाव के पवित्राचारण को उचित अवसर पर प्रयोग करे और स्थिति के विरुद्ध प्रयुक्त करने से बचे इस विषय में अल्लाह जल्ला शानोहू यह शिक्षा देता है :-

وَاَصْلِحُوْا ذَاتَ بَیْنِكُمْ [1] اَلصُّلْحُ خَیْرٌ [2] وَاِنْ جَنَحُوْا
لِلسَّلْمِ فَاجْنَحْ لَهَا [3] وَعِبَادُ الرَّحْمٰنِ الَّذِیْنَ یَمْشُوْنَ عَلَی
الْاَرْضِ هَوْنًا [4] اِذَا مَرُّوْا بِاللَّغْوِ مَرُّوْا كِرَامًا ○ [5] اِدْفَعْ بِالَّتِیْ
هِیَ اَحْسَنُ فَاِذَا الَّذِیْ بَیْنَكَ وَبَیْنَهٗ عَدَاوَةٌ كَاَنَّهٗ وَلِیٌّ
حَمِیْمٌ ○ [6]

---

[1] الانفال : ۲ [2] النسآء : ۱۲۹ [3] الانفال : ۶۲ [4] الفرقان : ۶۴ [5] الفرقان : ۷۳ [6] حٰمٓ السجدة : ۳۵

''वअस्लेहू ज़ाता बैनेकुम । अस्सुलहो खैर । वइन जनहूलिस्सल्मे फ़ज्नह ल हा । व इबादुर्रहमानिल्लज़ीना यमशूना अलल्अर्ज़े हौनन इज़ा मर्रु बिल्लग़्वे मर्रु किरामा । इद्फ़अ बिल्लती हेया अहसनो । फ़इज़ल्लज़ीना बैनका न बैनहू अदावतुन कअन्नहु वलीय्युन हमीम ।''

अर्थात् परस्पर मैत्री भाव रखो । मित्रता और सहयोग के पीछे बुहत बड़ा पुंण्य और वरदान् छिपा हुआ है। जब वह (विपक्षी) सन्धि करना चाहें और मित्रता के लिए आगे बढ़ें तो तुम भी झुक जाओ । ख़ुदा के नेक बन्दे मैत्री भाव के साथ पृथ्वी पर चलते हैं । यदि वे कोई ऐसी अनुचित बात सुनें जो युद्ध का कारण अथवा उस की भूमिका हो तो महात्माओं की तरह उस की अनदेखी करते हुये चले जाते हैं, और छोटी-छोटी बातों पर लड़ना प्रारम्भ नहीं कर देते। अर्थात् जब तक कोई महान कष्ट न पहुंचे उस समय तक हंगामा करने को अच्छा नहीं समझते । मैत्री भाव के अवसर को पहचानने का यही नियम है कि छोटी-छोटी बातों का विचार न करें और सहिष्णु बनते हुए उन्हें क्षमा कर दें । इस आयत में ''लग़्व'' का जो शब्द आया है उसके विषय में विदित होना चाहिए कि अरबी भाषा में 'लग़्व' उस क्रिया को कहते हैं । जैसे एक व्यक्ति शरारत से ऐसे अपशब्द कहे अथवा दुःख देने की इच्छा से उस से ऐसी क्रिया प्रकट हो कि वास्तव में उस से कोई हानि नहीं पहुंचती । ऐसे अवसर पर मैत्रीभाव का यह चिन्ह है कि ऐसे बेहूदा दुःख, कष्ट से अन देखी कर जाएं और महात्माओं की नीति का पालन करें । किन्तु यदि कष्ट केवल ''लग़्व'' की परिभाषा में सम्मिलित न हो प्रत्युत उस से वास्तव में जान या माल अथवा मान की हानि होती हो तो मैत्रीभाव के आचरण का इस से कोई सम्बन्ध नहीं अपितु यदि ऐसे अपराध को क्षमा किया जाए तो चरित्र की उस विधी का नाम अफ़व अर्थात् क्षमा है । जिसका इन्शअल्लाह तआला इस के पश्चात् वर्णन होगा । तदुपरान्त अल्लाह का कथन है कि यदि कोई व्यक्ति शरारत से कुछ

बकवास करे तो भली प्रकार उसे मैत्रीभाव ढंग से उत्तर दो तब इस विधि से शत्रु मित्र बन जाएगा । सारांश यह कि मैत्रीभाव के द्वारा अनदेखी करने का अवसर केवल उस श्रेणी की बुराई है जिस से कोई वास्तविक नुकसान न पहुँचा हो जो केवल शत्रू की बकवास ही हो ।

बुराई को त्यागने का **चौथा रूप** नर्मी का व्यवहार तथा मधुर वचन है । आचरण का यह रूप जिस प्राकृतिक अवस्था से उत्पन्न होता है उस का नाम ''तलाक़त'' अर्थात् हंसमुख स्वभाव है । बच्चे में जब तक बात करने की सामर्थ्य नहीं होती, उस समय तक वह नर्मी के व्यवहार और मधुर वचन के स्थान पर हंसमुख स्वभाव का प्रदर्शन करता है । यह उक्ति इस बात का प्रमाण है कि नर्मी की जड़, जहां से यह शाखा फूटती है हंसमुख स्वभाव है । हंसमुख होना एक शक्ति है और नर्मी एक आचरण है जो इस शक्ति को समय और स्थिति पर प्रयोग में लाने से उत्पन्न होती है । इस विषय में ख़ुदा तआला की शिक्षा यह है :-

وَقُوْلُوْا لِلنَّاسِ حُسْنًا [49]

لَا يَسْخَرْ قَوْمٌ مِّنْ قَوْمٍ عَسٰٓى اَنْ يَّكُوْنُوْا خَيْرًا مِّنْهُمْ وَلَا نِسَآءٌ مِّنْ نِّسَآءٍ عَسٰٓى اَنْ يَّكُنَّ خَيْرًا مِّنْهُنَّ وَلَا تَلْمِزُوْٓا اَنْفُسَكُمْ وَلَا تَنَابَزُوْا بِالْاَلْقَابِ [1] اِجْتَنِبُوْا كَثِيْرًا مِّنَ الظَّنِّ اِنَّ بَعْضَ الظَّنِّ اِثْمٌ وَّلَا تَجَسَّسُوْا وَلَا يَغْتَبْ بَّعْضُكُمْ بَعْضًا [1] وَاتَّقُوا اللّٰهَ اِنَّ اللّٰهَ تَوَّابٌ رَّحِيْمٌ [2] وَلَا تَقْفُ مَا لَيْسَ لَكَ بِهٖ عِلْمٌ اِنَّ السَّمْعَ وَالْبَصَرَ وَالْفُؤَادَ كُلُّ اُولٰٓئِكَ كَانَ عَنْهُ مَسْـُٔوْلًا [3]

व क़ुलू लिन्नासे हुस्नन । ला यस्ख़र क़ौमुम् मिन क़ौमिन् असा अँय्यकूनूख़ैरम् मिन्हुम वला निसाऊम् मिन्निसाइन असा

---

49 البقرة : ٨٤ — [1] الحجرات : ١٢ — [2] الحجرات : ١٣ — [3] بنی اسرائیل : ٣٧

अँय्यकुन्ना ख़ैरम् मिनहुन्न वला तल्मेज़ू अनफ़ोसाकुम् वला तनाबज़ू बिल्अल्क़ाबे । इजतनेबू कसीरम्मिज़्ज़न्ने । इन्ना बाज़ज़्ज़न्ने इस्मुन । वला तजस्ससू वला यग़तब बाज़ोकुम् बाज़न । वत्तक़ुल्लाहा इन्नल्लाह तव्वाबुर्रहीन । वला तक़्फ़ो मा लैसा लका बेही इल्मुन् । इन्नस्समआ वल बसरा वल फ़ोआदा कुल्लो उलाएका काना अनहो मस्ऊला ।

अर्थात् लोगों को वे बातें कहो जो वास्तव में नेक हों । एक जाति दूसरी जाति की हंसी न उड़ाए । सम्भव है कि जिन की हंसी उड़ाई गई है वही अच्छे हों । स्त्रियां परस्पर एक दूसरे की हंसी न उड़ाएं । हो सकता है कि जिन का उपहास किया गया है वही अच्छे हों । एक दूसरे पर दोषारोपण और लाञ्छनमत लगाओ । अपने लोगों के बूरे बुरे नाम मत रखो । द्वेषभाव की बातें मत करो और न ही दोषों को खोद-खोद कर पूछो । एक दूसरे का गिला मत करो किसी पर वह लाञ्छन न लगाओ जिसका तुम्हारे पास प्रमाण नहीं । स्मरण रखो तुम्हारे शरीर के प्रत्येक अंग से हिसाब लिया जाएगा । नेत्र, कान, हृदय प्रत्येक से पूछा जाएगा ।

दूसरों को भलाई पहुँचाने के प्रकार

बुराई को त्यागने के विभिन्न रूपों की ऊपर चर्चा हो चुकी है । अब यहां पर हम दूसरों को भलाई पहुँचाने के प्रकारों का उल्लेख करेंगे ।

आचरण के रूपों में से दूसरा रूप दूसरों को भलाई पहुँचाने से सम्बन्धित है। इस रूप का प्रथम आचरण क्षमा है । अर्थात् किसी के अपराध को क्षमा कर देना । इसमें पुण्य यह है कि जो अपराध करता है वह हानि पहुँचाता है और इस योग्य होता है कि उसको भी हानि पहुँचाई जाए, दण्ड दिलाया जाए, बन्दी बनाया जाए अथवा जुर्माना कराया जाए या स्वयं ही उसपर हाथ उठाया जाए। अतः उसको क्षमा कर देना यदि क्षमा कर देना उचित हो उस के

लिए ईसाले ख़ैर (अर्थात् भलाई पहुँचाना) है । इस विषय में पवित्र क़ुर्आन की शिक्षा यह है :-

وَالْكَاظِمِينَ الْغَيْظَ وَالْعَافِينَ عَنِ النَّاسِ [1]
جَزٰؤُا سَيِّئَةٍ سَيِّئَةٌ مِّثْلُهَا فَمَنْ عَفَا
وَاَصْلَحَ فَاَجْرُهٗ عَلَى اللّٰهِ [2]

वल काज़िमीनल ग़ैज़ा वल आफ़ीना अनिन्नासे । जज़ाओ सय्येअतिन सय्येअतुन मिस्लोहा । फ़ मन् अफ़ा व अस्लहा फ़ अजरोहू अलल्लाहे ।

अर्थात् सज्जन व्यक्ति वे हैं जो क्रोध पी जाने के अवसर पर अपना क्रोध पी जाते हैं और क्षमा के अवसर पर अपराध को क्षमा कर देते हैं । अपराध का दण्ड उतना ही दिया जाए जितना अपराध किया गया हो । किन्तु जो व्यक्ति अपराध को क्षमा कर दे और ऐसे अवसर पर क्षमा करे कि उससे कुछ सुधार होता हो और कोई हानि न होती हो अर्थात् वह क्षमा ठीक अवसर पर हो, असमय पर न हो तो ऐसी क्षमा का उसे अवश्य पुण्य मिलेगा ।

इस आयत से स्पष्ट है कि क़ुर्आन की शिक्षा का यह अर्थ नहीं कि किसी भी परिस्थिति और किसी भी अवसर पर बुराई का विरोध न किया जाए या अपराधियों और अत्याचारियों को कभी भी दण्ड न दिया जाए अपितु तात्पर्य यह है कि उस समय देखना चाहिए कि वह समय और वह अवसर अपराध क्षमा करने का है अथवा दण्ड देने का ? अतः ऐसे अवसर पर अपराधी तथा समाज के लिए जो साधन उचित और कल्याणकारी हो वही अपनाया जाए । कभी एक अपराधी अपराध क्षमा करने से तौबा कर लेता है और कभी एक अपराधी अपराध के क्षमा कर देने से पाप करने के लिए और ढीठ हो जाता है । इसीलिए ख़ुदा तआला का कथन है कि अन्धों की तरह केवल अपराध क्षमा करने की वृत्ति न बना लो अपितु भली प्रकार विचार कर लिया करो कि वास्तविक भलाई किस बात में है । क्षमा करने में अथवा दण्ड देने में । अतः

---

[1] آل عمران: ۱۳۵ [2] الشورىٰ: ۴۱

अवसर के अनुकूल जो भी कर्म हो किया जाए । मानव समाज पर दृष्टिपात करने से स्पष्ट हो जाता है कि जिस प्रकार कुछ व्यक्ति द्वेषभाव रखने में बड़े चतुर होते हैं यहां तक कि पीढ़ी दर पीढ़ी द्वेषों को याद रखते हैं । इसी प्रकार कुछ व्यक्ति क्षमा और नर्मी की वृत्ति को चरमसीमा तक पहुँचा देते हैं और कभी इस वृत्ति की अधिकता से बात निर्लज्जता तक पहुंच जाती है । ऐसी लज्जास्पद क्षमा, सहिष्णुता तथा सहनशीलता का उनसे प्रदर्शन होता है जो लज्जा, मान और मर्यादा के सर्वथा विपरीत होता है । ऐसा करके वे अपनी प्रतिष्ठा पर स्वयं कलंक लगाते हैं । ऐसी क्षमा का परिणाम यह होता है कि सब लोग त्राहि-त्राहि कर उठते हैं । इन्हीं विकारों के उपलक्ष्य पवित्र क़ुर्आन में प्रत्येक आचरण के लिए स्थिति और समय की शर्त लगा दी है तथा उसने ऐसे आचरणों को स्वीकार नहीं किया जो असमय प्रदर्शित हों ।

याद रहे कि केवल कोरी क्षमा को आचरण या चरित्र की संज्ञा नहीं दी जा सकती अपितु वह एक प्राकृतिक शक्ति है जो बच्चों में भी पाई जाती है । बच्चे को जिसके हाथ से चोट लग जाए, चाहे वह शरारत से ही लगे, थोड़े समय के पश्चात् वह उस क्रोध को भुला देता है और पुन: उसके पास प्रेम पूर्वक जाता है और ऐसे व्यक्ति ने यदि उसके वध करने का भी संकल्प किया हो तब भी केवल मधुर वचन से प्रसन्न हो जाता है । अत: ऐसी क्षमा किसी प्रकार आचरण के अन्तर्गत नहीं आ सकती । अचारण में उसकी गणना तब होगी जब हम समय और स्थिति पर उसका प्रयोग करेंगे । अन्यथा वह केवल प्राकृतिक अवस्था होगी । संसार में ऐसे मनुष्यों की संख्या अति न्यून है जो प्राकृतिक शक्ति और आचरण में भेद कर सकते हैं ।

हम बार-बार लिख चुके हैं कि वास्तविक आचरण और प्राकृतिक अवस्थाओं में यह अन्तर है कि आचरण सदैव समय और स्थिति की अपेक्षा और उसकी पाबन्दी करता है । किन्तु प्राकृतिक शक्ति असमय में ही प्रकट हो जाती है । यूँ तो पशुओं में गाय भी भोली भाली है और बकरी भी दिल की ग़रीब और कोमल हृदय है परन्तु हम केवल इसी कारण से यह नहीं कह सकते

कि उनमें इस आचरण की विशेषता विद्यमान है क्योंकि उन्हें समय और स्थिति को समझने की बुद्धि प्रकृति की ओर से नहीं मिली । पवित्र क़ुर्आन जो ख़ुदाई ज्ञानतत्व और उसकी सत्य एवं सर्वरूप सम्पूर्ण वाणी है ने प्रत्येक आचरण के साथ समय और स्थिति की शर्त लगा दी है ।

पुण्य प्राप्ति के आचरण का दूसरा ख़ुल्क (चरित्र) न्याय है । तीसरा एक दूसरे पर एहसान करना, तथा चौथा निकट के सम्बन्धियों की तरह प्राकृतिक जोश से हमदरदी करना । जैसा कि अल्लाह का फ़रमान है :-

إِنَّ اللَّهَ يَأْمُرُ بِالْعَدْلِ وَالْإِحْسَانِ وَإِيتَاءِ ذِي الْقُرْبَىٰ
وَيَنْهَىٰ عَنِ الْفَحْشَاءِ وَالْمُنكَرِ وَالْبَغْيِ ۚ[1]

इन्नल्लाहा यअमुरो बिल अद्ले वल एहसाने व ईताएज़िलक़ुर्बा
व यन्हा अनिलफ़हशाए वल मुनकरे वल बग़्ये ।

अर्थात् अल्लाह तआला की यह आज्ञा है कि भलाई के बदले भलाई करो और यदि न्याय से बढ़कर एहसान और उपकार का समय और स्थिति हो तो वहां अनुग्रह और उपकार करो और यदि अनुग्रह से बढ़करकरीबी रिश्तेदारों की तरह प्राकृतिक जोश से नेकी का अवसर हो तो वहां कुदरती हमदरदी से नेकी करो और ख़ुदा तआला हद और सीमा का उल्लंघन करने से रोकता है । इसी प्रकार इन बातों का भी निषेध किया है कि अनुग्रह और उपकार के विषय में अनुचित क्रियाएं मनुष्य से प्रदिर्शित हों जिस से बुद्धि इन्कार करे अर्थात् यह कि तुम स्थिति के विपरीत उपकार करो अथवा उचित अवसर पर उपकार न करो अथवा यह कि निकट के सम्बन्धियों की तरह प्राकृतिक हमदरदी दिखाने में कुछ कमी करो अथवा हद से ज़ियादा रहम की बारिश करो ।अल्लाह के इस पवित्र कथन में पुण्य प्राप्ति की तीन श्रेणियों का उल्लेख हुआ है ।प्रथम यह कि भलाई के बदले भलाई की जाए । यह पुण्य निम्न कोटि का है और एक साधारण प्रकार का व्यक्ति भी इस आचरण का प्रदर्शन कर सकता है कि अपने भलाई करने वालों के साथ भलाई करता रहे ।

---

[1] النحل : ٩١
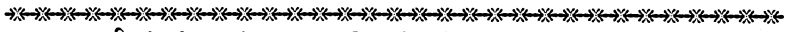
दूसरी श्रेणी इससे कुछ कठिन है और वह यह कि भलाई का प्रारम्भ स्वयं करना और बिना किसी बदले की इच्छा से उपकार के रूप में उसको लाभ पहुँचाना । इस प्रकार का चरित्र मध्यम कोटि का कहलता है । अधिकांश मनुष्य निर्धनों पर उपकार करते हैं और उपकार व अनुग्रह में यह एक छिपा हुआ दोष है कि उपकार करने वाला समझता है कि मैंने उपकार किया है और कम से कम वह अपने उपकार के बदले में धन्यवाद अथवा दुआ का आकांक्षी रहता है और यदि उसका कोई उपकृत उसके विरुद्ध हो जाए तो उसको कृतध्न (एहसान भुलाने वाला) कहता है । उपकार करने वाला किसी समय अपने उपकार के कारण उस पर इतना भार डाल देता है जिसको सहन करने की उस में सामर्थ्य नहीं होती तथा उस उपकृत के प्रति उपकार जताता है । जैसा कि उपकार करने वालों को अल्लाह तआला सावधान करते हुआ फ़रमाता है :-

لَا تُبْطِلُوْا صَدَقٰتِكُمْ بِالْمَنِّ وَالْاَذٰى ۙ

ला तुब्तेलू सदक़ातेकुम बिल्मन्ने वल् अज़ा ।

अर्थात् हे उपकार करने वालो ! अपने दान को जिस का आधार दैन्य और दया होना चाहिए, उपकार और एहसान जतलाकर और अपने उपकार को स्मरण करा कर और दु:ख देकर नष्ट न करो । अर्थात् ''सद्का'' (दान) का शब्द 'सिद्क़' (सत्यता) से बनता है । अत: हृदय में सत्यता और उदारता न रहे तो वह ''दान'' दान नहीं कहला सकता अपितु वह केवल एक दिखावा होगा । कहने का तात्पर्य यह है कि उपकार करने वाले में यह एक कमी होती है कि कभी क्रोध में आकर अपना उपकार भी स्मरण करा देता है । यही कारण है कि ख़ुदा तआला ने उपकार करने वालों को सावधान किया है ।

पुण्य प्राप्ति की तीसरी श्रेणी ख़ुदा तआला ने यह बतायी है कि उपकार करते हुए दिलमें उपकार का विचार तक न आए और न ही उसके बदले में धन्यवाद की अकांक्षा हो अपितु एकऐसी सहानुभूति के संवेग से भलाई की गई हो जैसे एक निकटवर्ती सम्बन्धी होने के नाते माता केवल सहानुभूति की

---

54 البقرة : ٢٦٥

प्रेरणा से अपने पुत्र से भलाई करती है । पुण्य प्राप्ति की यह वह अंतिम श्रेणी है जिसके आगे उन्नति करना सम्भव नहीं । किन्तु ख़ुदा तआला ने इन समस्त पुण्य प्राप्ति के भेदों को समय और स्थिति से सम्बंद्ध कर दिया है । उक्त आयत में स्पष्ट कह दिया है कि यदि यह भलाइयां अपने-अपने समय पर प्रयुक्त नहीं होंगी तो फिर यह बुराइयां बन जायेंगी और न्याय का स्थान निर्लज्जता ले लेगी अर्थात् सीमा का इस प्रकार अतिक्रमण करना कि अपवित्रता का रूप धारण कर ले और उपकार (एहसान) के स्थान पर अनुपकार हो जाएगा । अर्थात् वह रूप जिस को बुद्धि और आत्मा स्वीकार नहीं करती और करीबी रिश्तेदारों की तरह कुदरती जोश से भलाई करने के बग़युन बन जाएगा अर्थात् बिना अवसर के हमदर्दी का जोश एक बुरी सूरत पैदा कर देगा वास्तव में ''बग़युन'' उस वर्षा को कहते हैं जो आवश्यकता से अधिक बरस जाए और कृषि को नष्ट कर दे । इसी प्रकार नियत कर्तव्य में न्यूनता रखने को भी ''बग़युन'' कहते हैं । तथा उस में आवश्यकता से आगे चले जाना भी बग़िए अर्थात् अति कहलाएगा। अत: इन तीनों में से जो अवसर पर कार्य रूप में परिणत नहीं होगा वही दूराचार बन जाएगा । इसीलिए इन तीनों के साथ-साथ समय और स्थिति की शर्त लगा दी गयी है । इस स्थान पर स्मरण रखना चाहिए कि केवल न्याय या उपकार या सहानुभूति अथवा परिजनों और स्वजनों की प्रकार मानव समाज की सहायता को आचरण और सदाचार नहीं कह सकते अपितु मनुष्य में यह सब प्राकृतिक अवस्थाएं और प्राकृतिक शक्तियाँ हैं जो कि बच्चों में बौद्धिक विकास से पूर्व ही विद्यमान होती है किन्तु आचरण और सदाचार और हेतु ''बुद्धि'' शर्त है और यह शर्त भी है कि प्रत्येक प्राकृतिक शक्ति समय और स्थिति एवं उचित अवसर पर प्रयोग में लाई जाए ।

इसके अतिरिक्त उपकार के विषय में और भी आवश्यक आदेशों का पवित्र क़ुर्आन में निर्देश हुआ है और सब को अलिफ़ लाम के साथ जो विशिष्ट करने के लिए आता है प्रयुक्त करके समय और स्थिति की ओर संकेत किया है

जैसा कि अल्लाह का पवित्र क़ुर्आन में कथन है :-

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اَنْفِقُوْا مِنْ طَيِّبٰتِ مَا كَسَبْتُمْ [1] وَلَا تَيَمَّمُوا الْخَبِيْثَ مِنْهُ [1] لَا تُبْطِلُوْا صَدَقٰتِكُمْ بِالْمَنِّ وَالْاَذٰى كَالَّذِىْ يُنْفِقُ مَالَهٗ رِئَآءَ النَّاسِ [2]

اَحْسِنُوْا ۛ اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الْمُحْسِنِيْنَ [3]

اِنَّ الْاَبْرَارَ يَشْرَبُوْنَ مِنْ كَاْسٍ كَانَ مِزَاجُهَا كَافُوْرًا ۝ عَيْنًا يَّشْرَبُ بِهَا عِبَادُ اللّٰهِ يُفَجِّرُوْنَهَا تَفْجِيْرًا ۝ [4]

وَيُطْعِمُوْنَ الطَّعَامَ عَلٰى حُبِّهٖ مِسْكِيْنًا وَّيَتِيْمًا وَّاَسِيْرًا ۝ اِنَّمَا نُطْعِمُكُمْ لِوَجْهِ اللّٰهِ لَا نُرِيْدُ مِنْكُمْ جَزَآءً وَّلَا شُكُوْرًا ۝ [5] وَاٰتَى الْمَالَ عَلٰى حُبِّهٖ ذَوِى الْقُرْبٰى وَالْيَتٰمٰى وَالْمَسٰكِيْنَ وَابْنَ السَّبِيْلِ ۙ وَالسَّآئِلِيْنَ وَفِى الرِّقَابِ ۚ [6] اِذَآ اَنْفَقُوْا لَمْ يُسْرِفُوْا وَلَمْ يَقْتُرُوْا وَكَانَ بَيْنَ ذٰلِكَ قَوَامًا ۝ [7] وَالَّذِيْنَ يَصِلُوْنَ مَآ اَمَرَ اللّٰهُ بِهٖٓ اَنْ يُّوْصَلَ وَيَخْشَوْنَ رَبَّهُمْ وَيَخَافُوْنَ سُوْٓءَ الْحِسَابِ ۝ [8] وَفِىْٓ اَمْوَالِهِمْ حَقٌّ لِّلسَّآئِلِ وَالْمَحْرُوْمِ ۝ [9] الَّذِيْنَ يُنْفِقُوْنَ فِى السَّرَّآءِ وَالضَّرَّآءِ [5] وَاَنْفَقُوْا مِمَّا رَزَقْنٰهُمْ سِرًّا وَّعَلَانِيَةً [6] اِنَّمَا الصَّدَقٰتُ لِلْفُقَرَآءِ وَالْمَسٰكِيْنِ وَالْعٰمِلِيْنَ عَلَيْهَا وَالْمُؤَلَّفَةِ قُلُوْبُهُمْ وَفِى الرِّقَابِ وَالْغٰرِمِيْنَ وَفِىْ سَبِيْلِ اللّٰهِ وَابْنِ السَّبِيْلِ ۗ فَرِيْضَةً مِّنَ اللّٰهِ ۗ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌ حَكِيْمٌ ۝ [7] لَنْ تَنَالُوا الْبِرَّ حَتّٰى تُنْفِقُوْا مِمَّا تُحِبُّوْنَ ۬ [8] وَاٰتِ ذَا الْقُرْبٰى حَقَّهٗ وَالْمِسْكِيْنَ وَابْنَ السَّبِيْلِ وَلَا تُبَذِّرْ تَبْذِيْرًا ۝ [9] وَبِالْوَالِدَيْنِ اِحْسَانًا وَّبِذِى الْقُرْبٰى وَالْيَتٰمٰى وَالْمَسٰكِيْنِ وَالْجَارِ ذِى الْقُرْبٰى وَالْجَارِ الْجُنُبِ وَالصَّاحِبِ بِالْجَنْۢبِ وَابْنِ السَّبِيْلِ ۙ وَمَا مَلَكَتْ اَيْمَانُكُمْ ۗ اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ مَنْ كَانَ مُخْتَالًا

---

[1] البقرة: ٢٦٨، [2] البقرة: ٢٦٥ [3] البقرة: ١٩٦ [4] الدهر: ٦، ٧ [5] الدهر: ٩، ١٠
[6] البقرة: ١٧٨، [7] الفرقان: ٦٨ [8] الرعد: ٢٢ [9] الذريت: ٢٠ [5] ال عمران: ١٣٥،
[6] الرعد: ٢٣ [7] التوبة: ٦٠ [8] ال عمران: ٩٣ [9] بنی اسرائیل: ٢٧

فَخُوْرًا ۙ
اِلَّذِيْنَ يَبْخَلُوْنَ وَيَاْمُرُوْنَ النَّاسَ بِالْبُخْلِ وَيَكْتُمُوْنَ مَآ
اٰتٰهُمُ اللّٰهُ مِنْ فَضْلِهٖ ؕ ۖ

या अय्योहल्लज़ीना आमनू अन्फ़ेक़ू मिन् तय्येबाते मा कसबतुम वला तयम्ममुल् ख़बीसा मिन्हो । ला तुब्तेलू सदाक़ातेकुम बिल्मन्ने वल् अज़ा । कल्लज़ी युन्फ़ेक़ो मा लहू रेयाअन्नासे । अहसेनू इन्नल्लाहा योहिब्बुलमोहसेनीन । इन्नल् अब्रारा यश र बुना मिन कऽसिन काना मिज़ाजोहा काफ़ूरा । ऐनँय्यश्रबो बिहा इबादुल्लाहे युफ़ज्जेरूनहा तफ़जीरा। व युत्एमूनत्तआमा अला हुब्बेही मिस्कीनौं व यतीमौं व असीरा। इन्नमा नुत्एमोकुम लेवज्हिल्लाहे ला नुरीदो मिन्कुम् जज़ाऔं वला शुकूरा । व आतल्माला अला हुब्बेही ज़विल क़ुर्बा वल यतामा वल् मसाकीना वब्नस्सबीले वस्साएलीना वफ़िर्रिक़ाब। इज़ा अनफ़क़ू लम युस्रेफ़ू व लम यक़तोरू व काना बैना ज़ालेका। क़वामा । वल्लज़ीना यसेलूना मा अमरल्लाहो बेही अँय्योसला व यख़्शौना रब्बहुम व यख़ाफ़ूना सूअलहिसाब । व फ़ी अम्वालेहिम् हक़्क़ुल्लिस्साएले वल् महरूमे । अल्लज़ीना युन्फ़ेकूना फ़िस्सर्राए वज़्ज़र्राए व अन्फ़क़ू मिम्मा रज़क़्नाहुम् सिरौं व अलानियतन । इन्नमस्सदक़ातो लिल्फ़ुक़राए वल मसाकीने वल आमेलीना अलैहा वल मुअल्लफ़ते कुलूबोहुम् व फ़िर्रिक़ाबे वल् ग़ारेमीना व फ़ी सबीलिल्लाहै वब्निस्सबीले फ़रीज़तम्मिनल्लाहे वल्लाहो अलीमुन हकीम । लन्

ـه النسآء : ٣٧-٣٨
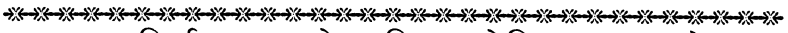
तनालुल्बिर्रा हत्ता तुन्फ़ेक़ू मिम्मा तोहिब्बून। व आतेज़ल् क़ुर्बा हक़्क़हू वल् मिस्कीना वब्नस्सबीले व ला तोबज़्ज़िर तब्ज़ीरा व बिलवालिदैने एहसानौं व बेज़िल्क़ुर्बा वल यतामा वल् मसाकीने वल जारेज़िलक़ुर्बा वल् जारिल्जोनोबे वस्साहेबे बिल्जम्बे वब्निस्सबीले व मा मलकत ऐमानोकुम् इन्नल्लाहा ला योहिब्बो मन काना मुख़्तालन फ़ख़ूरा । निल्लज़ीना यबख़लूना व यऽमरून्नासा बिल् बुख़ले व यक्तोमूना मा अताहोमुल्लाहो मिन् फ़ज़्लेही ।

अर्थात् हे ईमान वालो ! तुम उस धन में से लोगों को दान, उपकार अथवा पुण्यादि रूप में दो जो तुम्हारे सत्परिश्रम का सत्फल है । अर्थात् जिसमें चोरी, घूंस, किसी की खाई हुई और मारी हुई धरोहर अथवा ग़बन का धन अथवा अत्याचार के धनका मिश्रण न हो । यह कुविचार तुम्हारे निकट भी न आए कि अपवित्र धन लोगों को दान रूपमें दे दो । और दूसरी यह बात है कि अपने दान और प्रेम को उपकार जता कर और दुःख देकर नष्ट न करो अर्थात् अपने उपकृत पर यह कभी न प्रगट होने दोकि हमने तुझे यह दिया है और न उसको कष्ट पहुँचाओ क्योंकि इस प्रकार तुम्हारा किया हुआ उपकार अनुपकार होगा और न ऐसा ढंग अपनाओं कि तुम अपने धन को प्रदर्शन के लिए व्यय करो । ख़ुदा की सृष्टि पर उपकार करो क्योंकि ख़ुदा उपकार और अनुग्रह करने वालों के साथ मैत्री भाव रखता है । जो लोग वास्तविक कल्याण करने वाले हैं, उनको वह प्याले पिलाए जायेंगे जिनमें काफ़ूर मिश्रण होगा अर्थात् सांसारिक टीसें, अकांक्षाएं और अपवित्र इच्छाएं उनके हृदय से दूर कर दी जाएंगी ।

काफ़ूर शब्द 'कफ़र' से बना है और 'कफ़्र' अरबी भाषा के शब्दकोष में दबाने और ढांकने को कहते हैं । तात्पर्य यह कि उनके अनुचित आवेग दबाए जाएंगे और उनका अन्दरूना पवित्र हो जाएगा और ख़ुदा के पहचान की ठंडक उनको पहुँचेगी ।
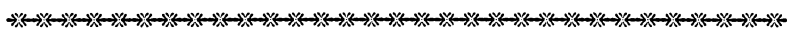
पुन: अल्लाह का कथन है कि वे लोग क़यामत के दिन उसस्रोत का जल पियेंगे जिसको वे आज अपने हाथ से फाड़ रहे हैं। इस स्थान पर (जन्नत) की फ़लास्फ़ी का एक गहरा भेद बतलाया है जिसको समझना हो समझ ले।

और फिर फ़रमाया है कि वास्तविक अर्थों में भलाई करने वालों का यह स्वभाव होता है कि वे केवलमात्र ख़ुदा के प्रति प्रेम और श्रद्धा के उपलक्ष वह भोजन जो स्वयं उन्हें रुचिकर है दीनों, अनाथों और बन्दियों को खिलाते हैं और कहते हैं कि हम तुम पर कोई उपकार नहीं करते प्रत्युत यह कर्म केवल इसलिए करते हैं कि ख़ुदा हमसे प्रसन्न हो जाए और उसकी ख़ातिर यह एक सेवा है। हम तुमसे न तो कोई बदला चाहते हैं और न ही हमें यह इच्छा है कि तुम हमारा धन्यवाद करते फिरो। यह इस बात की ओर संकेत है कि पुण्य प्राप्ति का तीसरा भेद जो सहानुभूति के संवेग से सम्बन्धित है उसी के अनुसार क्रिया करते हैं। सच्चे उपकारियों का यह स्वभाव होता है कि ख़ुदा की शुभ इच्छा के निमित्त अपने सम्बन्धियों को अपने धन से सहायता करते हैं तथा इस धन से अनाथों की देख रेख और उनके पालन पोषण तथा शिक्षा इत्यादि पर व्यय करते रहते हैं और निर्धनों तथा दीनों को भूख तथा फ़ाका आदि के दु:ख से बचाते हैं। यात्रियों और भिखारियों की सेवा करते हैं। उस धन में दासों की मुक्ति और ऋणी लोगों को ऋण से छुटकारा दिलाने के लिए भी देते हैं। अपने दैनिक व्यय में न तो अपव्यय करते हैं और न ही तंग दिली दिखाते हैं प्रत्युत मध्यम मार्ग अपनाते हैं। मिलाप के स्थान पर मिलते हैं और ख़ुदा से डरते हैं। उनके धन में भिखारियों और बेज़बान (जन्तुओं) का भी भाग होता है। बेज़बानों से तात्पर्य कुत्ते, बिल्लियां पक्षी बैल गधे तथा अन्य जन्तु हैं। वे लोग कष्ट के दिनों में और आय के कम होने पर तथा अकाल के समय दान देने में पीछे नहीं हटते अपितु आय के कम हो जाने के दिनों में भी अपनी शक्ति और सामर्थ्य के अनुसार दान देते रहते हैं। वे कभी गुप्त रूपमें दान देते है और कभी प्रकट रूप में। गुप्त दान इसलिए ताकि प्रदर्शन से बचें और प्रकट रूपसे दान इसलिए देते हैं ताकि दूसरों को प्रेरणा मिले। दान औरदक्षिणा इत्यादि पर जो

धन दिया जाए उसमें इस बात की अपेक्षा होनी चाहिए कि सर्वप्रथम जितने भी दीन दु:खी हैं उन्हीं को दिया जाए । हाँ जो दान से एकत्र किए हुए धनकी देख रेख करें उनको भी दान और दक्षिणा के धन से कुछ मिल सकता है तथा किसी को बुराई से सुरक्षित रखने के लिए भी इस धन से दे सकते हैं । इसी प्रकार वह धन दासों की मुक्ति के लिए, दीनों, भिखारियों, ऋणियों तथा पीड़ितों की सहायता के लिए तथा इसी प्रकार के अन्य कार्यों में जो केवल अल्लाह के लिए हों वह धन व्यय होगा । तुम वास्तविक पुण्य को उस समय तक कदापि नहीं प्राप्त कर सकते जब तक कि मानव समाज की सहानुभूति में वह धन व्यय न करो, जो तुम्हारा प्रिय धन है । निर्धनों का अधिकार उन्हें दो । दीन दु:खियों को दान दो । यात्रियों की सेवा करो तथा व्यर्थ के खर्च और अपव्यय से अपने आपको बचाओ अर्थात् विवाह के अवसर पर तथा नाना प्रकार के मनोरंजन के अवसरों पर और पुत्रादि के जन्म के रीति रिवाजों में जो धनका अपव्यय होता है उससे अपने आप को बचाओ । तुम माता पिता के साथ भलाई करो और सम्बन्धियों, अनाथों एवं निर्धनों और पड़ोसी से जो तुम्हारे सम्बन्धी हैं तथा वह पड़ोसी जो सम्बन्धी नहीं भी हैं और यात्रियों से, नौकरों से, दासों से, घोड़ों, बकरियों, बैलों, गौऔं तथा अन्य पशुओं आदि से जो तुम्हारे अधिकार में हैं अच्छा व्यवहार करो क्योंकि ख़ुदा को जो तुम्हारा ख़ुदा है यही आदतें पसंद हैं । वह लापरवाहों और स्वार्थियों से प्रेम नहीं करता और न ही ऐसे लोगों को पसन्द करता है जो कंजूस हैं और दूसरे लोगों को भी कंजूसी की प्रेरणा देते हैं तथा अपने धनको गुप्त रखते हैं । अर्थात् दीन दु:खियों और याचकों को कहते हैं कि हमारे पास कुछ नहीं है ।

वास्तविक वीरता

मनुष्य की विभिन्न प्राकृतिक अवस्थाओं में से एक अवस्था वह होती है जिसे वीरता के नाम से अभिहित किया जाता है । जैसे एक दुधमुँहा बालक भी इसी शक्ति के कारण कभी अग्नि में हाथ डालने लगता है क्योंकि मनुष्य का

बच्चा प्रारम्भ में अपने प्राकृतिक वरदान, के कारण मानवीय पराक्रम को भयभीत करने वाली किसी भी वस्तु से नहीं डरता । इस दशा में मनुष्य सर्वथा निर्भीक होकर शेरों तथा अन्य नाना वन्य हिंस्र पशुओं से भी टक्कर लेता है । कई व्यक्तियों के विरुद्ध युद्ध करने के लिए अकेला निकल आता है । लोग जानते हैं कि बड़ा पराक्रमी है किन्तु यह केवल प्राकृतिक अवस्था है जो दूसरे हिंस्र पशुओं में भी पाई जाती है यहां तक कि कुत्तों में भी पाई जाती है । वास्तविक वीरता जो समय और स्थिति के साथ विशिष्ट है तथा जो महान् चरित्र में से एक आचरण है, वह समय और स्थिति की उन क्रियाओं का नाम है जिनका उल्लेख ख़ुदा तआला की पवित्रवाणी में इस प्रकार हुआ है :-

وَالصّٰبِرِيْنَ فِى الْبَاْسَآءِ وَالضَّرَّآءِ وَحِيْنَ الْبَاْسِ [1]

وَالَّذِيْنَ صَبَرُوا ابْتِغَآءَ وَجْهِ رَبِّهِمْ [2]

اَلَّذِيْنَ قَالَ لَهُمُ النَّاسُ اِنَّ النَّاسَ قَدْ جَمَعُوْا لَكُمْ فَاخْشَوْهُمْ
فَزَادَهُمْ اِيْمَانًا وَّقَالُوْا حَسْبُنَا اللّٰهُ وَنِعْمَ الْوَكِيْلُ [3]

وَلَا تَكُوْنُوْا كَالَّذِيْنَ خَرَجُوْا مِنْ دِيَارِهِمْ بَطَرًا وَّرِئَآءَ النَّاسِ [4]

वस्साबेरीना फ़िल् बऽसाए वज़्ज़र्राए व हीनल् बऽसे । वल्लज़ीना सबरुब्तेग़ाअ बजहे रब्बेहिम् । अल्लज़ीना क़ाला लहोमुन्नासो इन्नन्नासा क़द् जमऊ लकुम् फ़ख़्शौहुम् फ़ज़ादहुम ईमानन व क़ालू हस्बोनल्लाहो व नेऽमल् वकील । वला तकूनू कल्लज़ीना ख़रजू मिन देयारेहिम् बतरौं व रेयाअन्नास ।

अर्थात् बहादुर वे हैं कि जब उनके लिए युद्ध का अवसर आये या उन पर कोई विपत्ति आ पड़े तो भागते नहीं । उनका धैर्य युद्ध और कठिनाईयों के समय ख़ुदा की प्रसन्नता के लिए होता है और वे उसके दर्शनाभिलाषी होते हैं,

---

[1] البقرة : ۱۷۸ ، [2] الرعد : ۲۳ [3] آل عمران : ۱۷۴ [4] الانفال : ۴۸

वीरता प्रदर्शनमात्र उनका उद्देश्य नहीं होता । उनको इस बात के लिए भयभीत किया जाता है कि लोग तुम्हें दण्ड देने के लिए संगठित हो गए हैं अतः तुम लोगों से डरो । वस्तुतः डराने से उनका ईमान और भी बढ़त है । वे कहते हैं कि ख़ुदा हमारे लिए पर्याप्त है अर्थात् उनका शौर्य हिंस्र पशुओं और कुत्तों की तरह नहीं होता, जो केवल प्राकृतिक आवेग पर आधारित होता है और जो एक पक्ष की ओर झुका रहता है । अपितु उनका शौर्य द्विपक्षीय होता है अर्थात् कभी तो वे अपने निजी शौर्य से अपने मनोवेगों से संघर्ष करते हैं और विजयी होते हैं और कभी जब देखते हैं कि शत्रु के साथ युद्ध करना अनिवार्य है तो वे केवल मनः तृप्ति और अपने जोश को ठंडा करने लिए नहीं अपितु सत्य की सहायता और उसकी रक्षा के निमित शत्रु के साथ युद्ध करते हैं । उनका शौर्य प्रदर्शन ख़ुदा के भरोसे पर होता है अपने भरोसे पर नहीं । उनके वीरता प्रदर्शन और पराक्रम के चमत्करों में किसी प्रकार का आडम्बर अथवा आत्माभिमान नहीं होता और न ही अहंकार, अपितु हर प्रकार ख़ुदा की प्रसन्नता ही उनका परम लक्ष्य होता है ।

इन आयतों में यह समझाया गया है कि वास्तविक वीरता का मूल; धैर्य और दृढ़ता है और प्रत्येक मनोवेग अथवा आपत्ति जो शत्रु के समान आक्रमण करे उसके मुकाबले के समय दृढ़ रहना और हृदय की दुर्बलता दिखाते हुए भाग न जाना यही वीरता है । अतः मनुष्य और हिंस्र पशुओं की वीरता में बहुत अन्तर है । हिंस्र पशु एक ही पक्ष में अपने आवेग और बर्बरता का प्रदर्शन करते हैं । परन्तु मानव, जो कि वास्तविक वीरता रखता है वह समय और स्थिति के अनुसार संघर्ष करता है अथवा उसे छोड़ता है ।

सत्यता

मनुष्य की प्राकृतिक अवस्थाओं में से एक अवस्था जो उसकी स्वाभाविक विशेषता है, सत्यता है । मानव जब तक कोई अपना लोभ न हो झूठ बोलना नहीं चाहता और झूठ बोलने से घृणा करता है । यही कारण है कि जिस

व्यक्ति का झूठ स्पष्ट रूपसे सिद्ध हो जाए, उस व्यक्ति से लोग न केवल अप्रसन्न ही होते हैं अपितु घृणा करने लगते हैं । परन्तु यह प्राकृतिक अवस्था चरित्र के अन्तर्गत नहीं आ सकती । बच्चे और पागल भी इसकी पाबंदी कर सकते हैं । अस्तु वास्तविकता यह है कि मनुष्य जब तक उन मानवीय उद्देश्यों को छोड़ नहीं देता जो सत्यता में बाधक होते हैं । तब तक वास्तविकरूपमें सत्यव्रती नहीं कहला सकता क्योंकि यदि मनुष्य केवल ऐसी बातों में सत्य बोले जिनमें उसकी कोई विशेष हानि नहीं और अपने मान या धन अथवा प्राणों की हानि के समय झूठ बोल जाए तथा सत्य भाषण के समय मौन रहे तो उसको पागलों और बच्चों की अपेक्षा कौन सी महानता मिलेगी ? क्या पागल और अपरिपक्व बालक भी ऐसा सत्य नहीं बोलते ? संसार में ऐसा कोई भी नहीं होगा जो बिना किसी प्रेरणा के व्यर्थ में झूठ बोले । अत: ऐसा सत्य जो किसी हानि के समय त्याग दिया जाए उसकी गणना वास्तविक आचरण में कदापि नहीं हो सकती । सत्य बोलने का महत्वपूर्ण अवसर वही है जिसमें अपने प्राण, धन अथवा मानहानि का भय हो । इस विषय में अल्लाह तआला की शिक्षा यह है :-

فَاجْتَنِبُوا الرِّجْسَ مِنَ الْأَوْثَانِ وَاجْتَنِبُوا قَوْلَ الزُّوْرِ ○ [1]
وَلَا يَأْبَ الشُّهَدَآءُ إِذَا مَا دُعُوْا [2] وَلَا تَكْتُمُوا الشَّهَادَةَ وَمَنْ يَّكْتُمْهَا
فَإِنَّهُ اٰثِمٌ قَلْبُهُ [3] وَإِذَا قُلْتُمْ فَاعْدِلُوْا وَلَوْ كَانَ ذَا قُرْبٰى [4]
كُوْنُوْا قَوّٰمِيْنَ بِالْقِسْطِ شُهَدَآءَ لِلّٰهِ وَلَوْ عَلٰٓى أَنْفُسِكُمْ أَوِ الْوَالِدَيْنِ
وَالْأَقْرَبِيْنَ [5] وَلَا يَجْرِمَنَّكُمْ شَنَاٰنُ قَوْمٍ عَلٰٓى أَلَّا تَعْدِلُوْا [6]
وَالصّٰدِقِيْنَ وَالصّٰدِقٰتِ [7] وَتَوَاصَوْا بِالْحَقِّ وَتَوَاصَوْا بِالصَّبْرِ○ [8]
لَا يَشْهَدُوْنَ الزُّوْرَ [9]

फ़जतनेबूर्रिज्सा मिनल् औसाने वज्तनेबू क़ौलज़्ज़ूरे । वला

[1] الحج : ۳۱ [2] البقرة : ۲۸۳ [3] البقرة : ۲۸۴ [4] الانعام : ۱۵۳ [5] النسآء : ۱۳۶
[6] المائدة : ۹ [7] الاحزاب : ۳۶ [8] العصر : ۴ [9] الفرقان : ۷۳

याऽश्शोहदाओ इज़ा मादोऊ । वला तक्तोमुश्शहादता व मय्यक्तुमहा फ इन्नहू आसेमुन कल्बोहू । व इज़ा क़ुल्तुम फ़ऽदेलू वलौ काना ज़ाक़ुर्बा । कूनूक़व्वामीना बिल्क़िस्ते शोहदाअ लिल्लाहे व लौ अला अनफोसेकुम अविल् वालिदैने वल् अक़राबीना व ला यज्रेमन्नाकुम शनाआनो क़ौमिन अला अल्ला तऽदेलू । वस्सादेक़ीना वस्सादेक़ाते व तवासौ बिल्हक़्क़े व तवासौ बिस्सब्रे । ला यश्हदूनज़्ज़ूरा ।

अनुवाद :- मूर्ति पूजा और झूठ बोलने से बचो क्योंकि झूठ भी एक ऐसा बुत है जिस पर विश्वास करने वाला ख़ुदा का विश्वास त्याग देता है । अत: झूठ बोलने से ख़ुदा भी हाथ से खोया जाता है । इसके अतिरिक्त अल्लाह का कथन है कि जब तुम सत्य की साक्षी देने के लिए बुलाए जाओ तो जाने से इनकार मत करो तथा शुद्ध और सच्ची गवाही को गुप्त मत रखो । जो सच्ची गवाही को छिपाये गा उसका हृदय पापी है । जब तुम बोलो तो तुम्हारी वाणी पर भी वही बात आए जो सर्वथा सत्य और न्याय की बात हो । चाहे तुम अपने किसी निकटवर्ती सम्बन्धी की ही साक्षी क्यों न दो । सत्य और न्याय पर दृढ़ रहो । तुम्हारी प्रत्येक साक्षी ख़ुदा के लिए हो । झूठ मत बोलो । चाहे सच बोलने से प्राणों को हानि पहुँचे अथवा उससे तुम्हारे माता पिता तथा पुत्रादि अन्य निकटवर्ती सम्बन्धियों को हानि पहुँचे । यह आवश्यक है कि किसी जाति अथवा पार्टी की शत्रुता तुम्हें सच्ची गवाही से न रोके । सच्चे पुरुष तथा सच्ची स्त्रियां महान् पुण्य पायेंगी । ऐसे लोगों का स्वभाव है कि दूसरों को भी सत्य भाषण की प्रेरणा देते हैं और झूठों की संगति में नहीं बैठते ।

धैर्य और सहिष्णुता (सबर)

मानवीय प्राकृतिक अवस्थाओं में से सहिष्णुता और धैर्य (सबर) भी एक गुण है जो उस को उन कष्टों, बीमारियों और दु:खों के समय धारण करना

पड़ता है जो उस पर सदैव आक्रमणकारी रहते हैं । मनुष्य बहुत कुछ रोने पीटने और विलाप करने के पश्चात् धैर्य धारण करता है परन्तु यह ज्ञात होना चाहिए कि ख़ुदा तआला की पाक वाणी पवित्र क़ुर्आन के अनुसार वह धैर्य चरित्र के अन्तर्गत नहीं आ सकता परन्तु वह ऐसी अवस्था है जो थक जाने के पश्चात् आवश्यकतानुसार ही प्रकट हो जाती है अर्थात् मनुष्य के प्राकृतिक गुणों में से यह भी एक गुण है कि वह कष्ट आते समय पहले रोता, पीटता और सर पटकता है । आख़िर बहुत सा ज्वर निकल जाने पर आवेग कम हो जाता है और अपनी चरमसीमा तक पहुँच कर पीछे हटना पड़ता है । अत: यह दोनों क्रियाएं प्राकृतिक अवस्थाएं हैं । उन का चरित्र से कोई सम्बन्ध नहीं । वस्तुत: इस से सम्बन्धित आचरण यह है कि जब कोई वस्तु हाथ से जाती रहे अथवा नष्ट हो जाए तो उस वस्तु को ख़ुदा तआला की (अमानत) धरोहर समझ कर कोई शिकायत न करे और यह कहे कि ख़ुदा की थी, ख़ुदा ने ही वापस ले ली, इस प्रकार उसकी प्रसन्नता के साथ हम भी प्रसन्न हैं । इस विषय में ख़ुदा की पवित्र वाणी क़ुर्आन शरीफ़ हमें यह शिक्षा देती है :-

وَلَنَبْلُوَنَّكُمْ بِشَيْءٍ مِّنَ الْخَوْفِ وَالْجُوْعِ وَنَقْصٍ مِّنَ
الْأَمْوَالِ وَالْأَنْفُسِ وَالثَّمَرٰتِ ۗ وَبَشِّرِ الصّٰبِرِيْنَ ۙ الَّذِيْنَ إِذَآ
أَصَابَتْهُمْ مُّصِيْبَةٌ ۙ قَالُوْٓا إِنَّا لِلّٰهِ وَإِنَّآ إِلَيْهِ رٰجِعُوْنَ ۗ ـه
أُولٰٓئِكَ عَلَيْهِمْ صَلَوٰتٌ مِّنْ رَّبِّهِمْ وَرَحْمَةٌ ۟ وَأُولٰٓئِكَ هُمُ الْمُهْتَدُوْنَ

वला नब्लोवन्नाकुम् बेशैइम्मिनल्ख़ौफ़े वल् जूए व नक़सिम्मिनल् अम्वाले वल् अन्फ़ोसे वस्समराते । व बश्शेरिस्साबेरीन । अल्लज़ीना इज़ा असाबत्हुम्मुसीबतुन क़ालू इन्नालिल्लाहे व इन्ना इलैहे राजेऊन । उलाएका अलैहिम सलवातुम्मिर्रब्बेहिम व रहमतुन् । व उलाएका

ـه البقرة: ١٥٦-١٥٨

होमुल्मोहतदून।

अर्थात् हे मोमिनों ! हम तुम्हारी इस प्रकार परीक्षा लेते रहेंगे कि कभी किसी भयानक परिस्थिति का तुम्हें सामना करना पड़ेगा और कभी ग़रीबी और भूख से तुम्हें पीड़ित किया जाएगा और कभी तुम्हारी जायदाद और धन का नुक़सान होगा । कभी प्राणों पर संकट आएगा, और कभी तुम्हें अपने परिश्रम का फल नहीं मिलेगा या इच्छानुसार सफलता नहीं मिलेगी । कभी तुम्हारी प्रिय सन्तान मरेगी । परन्तु उन लोगों को सूचना देदो कि जब उन को कोई कष्ट पहुँचे तो वे कहते हैं कि हम ख़ुदा के हैं, उस की धरोहर हैं, और उस की उपनिधि हैं; अतः यही उचित है कि जिस की धरोहर हो, जिस की उपनिधि हो उसी की ओर जाए । यही लोग हैं जिन पर ख़ुदा की रहमतों और वरदानों की वर्षा होती है तथा यही वे लोग हैं जिन को ख़ुदा का सरल मार्ग प्राप्त हो गया ।

सारांश यह कि इस आचरण का नाम धैर्य, सहिष्णुता और रज़ाए इलाही है तथा एक प्रकार से इसका दूसरा नाम न्याय भी है क्योंकि जब कि ख़ुदा तआला मनुष्य के समस्त जीवन में उस की इच्छानुसार कर्म करता है तथा सहस्रों अन्य बातें उस की इच्छा के अनुसार प्रदर्शित करता है और ख़ुदा ने मनुष्य की इच्छानुसार इतने पुरस्कार और उत्तम वस्तुएं उसे दे रखी हैं कि मनुष्य उस की गणना भी नहीं कर सकता तो फिर यह शर्त न्याय नहीं कहला सकती कि यदि वह कभी अपनी मर्ज़ी और इच्छा मनवाना चाहे तो मनुष्य वहाँ से मूँह फेर ले और उसकी इच्छा पर प्रसन्न न हो और ननुनच करे अथवा अधर्मी या पथभ्रष्ट हो जाए ।

मानव समाज की सहानुभूति

मानव की प्राकृतिक अवस्थाओं में से एक अवस्था लोक सहानुभूति का जोश भी है जो उस की प्रवृत्ति में छिपी हुई है । जातीय पक्ष का आवेग स्वाभाविक रूप से प्रत्येक जाति के व्यक्तियों में पाया जाता है और अधिकतर

लोग प्राकृतिक जोश से अपनी कौम की सहानुभूति के लिए दूसरों पर अत्याचार कर देते हैं । जैसे वे उन्हें मानव ही नहीं समझते । अत: इस अवस्था को आचरण नहीं कह सकते । यह केवल एक प्राकृतिक मूल प्रवृत्ति है । यदि ग़ौर से देखा जाए तो यह प्राकृतिक अवस्था कौओं इत्यादि पक्षियों में भी पाई जाती है कि एक कौए के मरने पर हज़ारों कौए एकत्रित हो जाते हैं किन्तु यह आदत मानवीय चरित्र में उस समय सम्मिलित होगी जब कि यह सहानुभूति न्याय और इंसाफ़ के अनुसार स्थिति और उचित अवसर पर हो, उस समय यह एक महान् आचरण होगा जिसका नाम अरबी भाषा में 'मवासात' तथा फ़ारसी में हमदर्दी है । इसी की ओर अल्लाह जल्ला शानोहू क़ुर्आन शरीफ़में संकेत फ़रमाता है :-

تَعَاوَنُوا عَلَى الْبِرِّ وَالتَّقْوٰى وَلَا تَعَاوَنُوا عَلَى الْاِثْمِ وَالْعُدْوَانِ ؐ

وَلَا تَهِنُوا فِي ابْتِغَاءِ الْقَوْمِ ۱ وَلَا تَكُنْ لِّلْخَآئِنِيْنَ خَصِيْمًا ۲

وَلَا تُجَادِلْ عَنِ الَّذِيْنَ يَخْتَانُوْنَ اَنْفُسَهُمْ اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ مَنْ

كَانَ خَوَّانًا اَثِيْمًا ۳

तआवनू अलल्बिर्र वत्तक़वा व ला तआवनू अलल् इस्मे वल् उद्वान्। वला तहेनू फ़िब्तेग़ाइल्क़ौमे वला तकुल्लिल्ख़ाएनीना ख़सीमा । वला तोजादिल अनिल्लज़ीना यख़तानूना अन्फ़ोसाहुम इन्नल्लाहा ला योहिब्बो मन काना ख़व्वानन असीमा ।

अर्थात् अपनी जाति की सहानुभूति और सहायता केवल भले कर्मों में ही करनी चाहिए । अत्याचारों और अनुचित कर्मों में उनकी सहायता कदापि नहीं करनी चाहिए । और जाति की सहानुभूति में सदैव सतर्क रहो । उसमें थको मत । धरोहरों को खा जाने वालों के पक्ष में मत झगड़ो अर्थात् उनका पक्षपात

ؐ المائدة:۳ ۱ النساء:۱۰۵ ۲ النساء:۱۰۶ ۳ النساء:۱۰۸

न करो । जो बेईमानी करने से दूर नहीं होते और प्रायश्चित् नहीं करते, ख़ुदा तआला ऐसे बेईमानों को मित्र नहीं बनाता ।

श्रेष्ठ और सर्वशक्तिमान सत्ता की खोज

मानव की नाना प्राकृतिक अवस्थाओं में एक अवस्था जो उसकी फ़ितरत के साथ लगी हुई है एक सर्वशक्तिमान की खोज है । जिसके लिए मनुष्य के अन्त:करण में एक आकर्षण विद्यमान है तथा इस खोज और उत्सुकता का प्रभाव उसी समय से होने लगता है जबकि शिशु अपनी माता के गर्भ से बाहर आता है क्योंकि बालक जन्म लेते ही सर्वप्रथम अपनी आध्यात्मिक विशेषता का जो प्रदर्शन करताहै वह यही है कि माता की ओर झुकता है और स्वाभाविक रूप से माता के प्रति प्रेम रखता है और ज्यों ज्यों उसकी ज्ञानेद्रियों का विकास होता है त्यों-त्यों उसकी प्रकृति का भी निखार होता जाता है । यह प्रेमाकर्षण जो उसके अन्त:करण में निहित था अपना रंग-रूप, आकार-प्रकार और प्रभाव स्पष्ट रूप में दिखाता चला जाता है । परिणाम स्वरूप यह होता है कि अपनी माता की गोद के अतिरिक्त उसे कहीं भी चैन नहीं पड़ता और पूरा विश्राम उसे उसी की छत्रछाया में होता है । यदि माता से अलग कर दिया जाए और दूर डाल दिया जाए तो उसका समस्त सुख समाप्त हो जाता है। यदि उसके सम्मुख अत्युत्तम वस्तुओं का ढेर भी लगा दिया जाए तो भी वह अपनी वास्तविक प्रसन्नता और सच्ची खुशहाली अपनी माता की गोद में ही देखता है । उसके बिना किसी प्रकार का आराम नहीं पाता । अत: वह प्रेमाकर्षण जो उसको अपनी माता के प्रति उत्पन्न होता है वह क्या चीज़ है ? वास्तव में यह वही आकर्षण है जो मअबूदे हक़ीकी (वास्तविक उपास्य) के लिए बच्चे के स्वभाव में और उसकी प्रकृति में रखा गया है । अपितू प्रत्येक स्थान पर मनुष्य जो प्रेम का सम्बन्ध जोड़ता है, वास्तव में वही आकर्षण कार्य कर रहा है । प्रत्येक स्थान पर जो प्रेम का जोश प्रदर्शित करता है, वास्तव में वह उसी प्रेम की छाया है मानों अन्य वस्तुओं को उठा उठा कर कोई खोई वस्तु

ढूंढ रहा है जिसका नाम अब भूल गया है । अतः मनुष्य का धन, धर्म, सन्तान या पत्नि से प्रेम करना अथवा किसी मधुर स्वर से गाने वाले की ओर उस की रूह का खींचे जाना वास्तव में उसी खोए हुए प्रेमी की खोज है और क्योंकि मानव उस सूक्ष्म अति सूक्ष्म सत्ता को जो अग्नि के समान प्रत्येक में निहित है और सब की दृष्टि से अदृश्य है । अपनी शरीरिक आंखों से देख नहीं सकता और न अपनी अपूर्ण बुद्धि से उसको पा सकता है । इसलिए उसकी पहचान के विषय में मनुष्य को बड़ी-बड़ी भूलें लगी हैं और इन्हीं भूलों के कारण उस का हक दूसरे को दिया गया है ।

ख़ुदा ने पवित्र, क़ुर्आन में यह उदाहरण कितनी अच्छी दी है कि संसार एक ऐसे शीश महल के समान है जिसकी पृथ्वी का फ़र्श अति स्वच्छ निर्मल पारदर्शक शीशों से किया गया है और फिर उनके नीचे जलधारा छोड़ी गई है जो तीव्र गति से प्रवाहमान है । अब प्रत्येक दृष्टि जो शीशों पर पड़ती है, वह भूल से उन शीशों को ही जल समझ लेती है और फलस्वरूप मनुष्य उस शीशे पर चलने से ऐसा डरता है जैसे कि जल से डरना चाहिए । वस्तुतः वे अत्यन्त स्वच्छ और सुस्पष्ट पारदर्शक शीशे हैं । अतः सूर्य चन्द्रादि यह जो बड़े-बड़े नक्षत्र दिखाई देते हैं । यह वे स्वच्छ शीशे हैं जिनकी धोखे से पूजा की गई है परन्तु उसके पीछे एक प्रबल शक्ति कार्य कर रही है जो इन शीशों के नीचे जलधारा की तरह तेज़ गति से बह रही है । मख़लूक के पुजारियों की दृष्टि की यह भूल है कि उन ही शीशों की ओर उस क्रिया चक्र का प्रेरक समझ बैठे हैं जो उनके नीचे शक्ति दिखला रही है । यही भाव इस पवित्र कथन का है :-

إِنَّهُ صَرْحٌ مُّمَرَّدٌ مِّن قَوَارِيرَ [1]

इन्नहू सरहुम्मुमर्रदुम्मिन् क़वारीरा ।

सारांश यह है कि चूंकि ख़ुदा तआला की सत्ता जो व्यक्त होते हुए भी अव्यक्त है अतएव उसको पहचानने के लिए केवल यह भौतिक विधान जो हमारी दृष्टि के सम्मुख है, पर्याप्त न था । यही कारण है कि ऐसी व्यवस्था पर भरोसा रखने वाले हालांकी उस सुध्ढ़ और प्रोढ़ व्यवस्था को जो सैंकड़ों

[1] النمل:٤٥

आश्चर्य अपने साथ रखता है न केवल बड़ी गम्भीरता से देखते रहे बल्कि खगोल विद्या और नेचुरल साईंस और दार्शनिकता में उन्होंने वे महान कौशल दिखलाए मानो आकाश और धरती में धंस गए फिर भी सन्देहवाद के अन्धकार से मुक्ति न पा सके । उनमें से कई भाँति भाँति की गलतियों में फंस गये तथा मिथ्या शंकाओं में ग्रस्त होकर कहीं के कहीं चले गए । यदि उस विश्व कर्मा की सत्ता की ओर उनका कुछ ध्यान गया भी तो केवल इतना कि सृष्टी की सुन्दर और श्रेष्ठ व्यवस्था को देखकर उनके अन्त:करण ने यह अनुभव किया कि इस अनुपम सृष्टि का जिस के साथ एक ठोस और सारयुक्त व्यवस्था है, कोई पैदा करने वाला अवश्य होना चाहिये । परन्तु यह विचार दुर्बल और यह ज्ञान अपूर्ण है क्योंकि यह कहना कि इस सृष्टि के लिये एक स्रष्टा (अल्लाह तआला) की आवश्यकता है, इस दूसरे कथन से कदापि समानता नहीं कर सकता कि वह ख़ुदा वास्तव में है भी ! अस्तु इनका ज्ञान मिथ्या था जो हृदय को सन्तुष्टि और मन को शान्ति नहीं दे सकता और न हृदय कक्ष से सन्देह को हटा सकता है और न यह ऐसा प्याला है जिससे अलौकिक ज्ञान की प्यास शान्त हो सकती है जो मनुष्य की प्रवृत्ति को लगाई गई है । प्रत्युत ऐसा मिथ्या ज्ञान अति ख़तरनाक है क्योंकि बहुत सा गला फाड़नें और सर पीटने के बाद अन्तत: यह सब कुछ व्यर्थ सिद्ध होता है और परिणाम कुछ भी नहीं निकलता।

अत: यह बात निर्णीत है कि जब तक ख़ुदा तआला स्वयं अपनी विद्यमानता और अपनी सत्ता का प्रमाण अपनी पवित्रवाणी द्वारा न दे जैसाकि उसने अपनी क्रिया से अपने विद्यमान होने का प्रमाण दिया है तब तक केवल क्रिया का दर्शनमात्र करना सन्तोष नहीं दे सकता । उदाहरणतया यदि हम एक ऐसी बंद कोठरी को देखें जिसके भीतर से कुण्डियाँ लगायी गईं हों तो इस क्रिया से सर्वप्रथम हमारा चित्त इस ओर जायेगा कि कोई व्यक्ति भीतर अवश्य है जिसने भीतर से ज़ंजीर को लगाया है कंयोंकि बाहिर से भीतर की कुण्डियों को लगाना असम्भव है । परन्तु जब एक लम्बे समय तक अपितु वर्षों तक बार बार आवाज़ देने पर भी उस व्यक्ति की ओर से कोई उत्तर न आए तो हमारा

यह विचार कि भीतर कोई व्यक्ति है बदल जायेगा, और इसके विपरीत एक नवीन विचार उत्पन्न हो जाएगा कि इस के भीतर कोई नहीं, अपितु किसी ढंग से भीतर की कुण्डियाँ लगायी गई हैं । यही दशा उन दार्शनिकों की है जिन्होंने इस घटना-जगत के केवल बाह्य घटनाचक्रों तक ही अपनी विचार शक्ति को सीमित कर दिया है । यह बड़ी भारी मूल होगी कि ख़ुदा को एक मृतक की तरह समझा जाए जिसको क़ब्र से निकालना केवल मानव का ही काम है । यदि ख़ुदा की परिभाषा यही है कि मानवीय खोज ने ही उसकी सत्ता का निर्धारण किया है तो ऐसे ख़ुदा के विषय में हमारी समस्त आशाएं व्यर्थ हैं । अपितु ख़ुदा वह सत्ता है जो आदि काल से ''मैं मौजूद हूँ'' कह कर मनुष्य को अपनी ओर बुलाता रहा है । ऐसा विचार करना हमारी नितान्त धृष्टता होगी कि ख़ुदा की आलौकिकता की खोज तथा संसार में उसकी सत्ता का प्रदर्शन करके मानव ने उस पर भारी उपकार किया है और यदि दार्शनिक लोग न होते तो जैसे वह गुप्त का गुप्त ही रहता । यह कहना कि ख़ुदा कैसे बोल सकता है ? क्या उसकी वाणी है ? यह भी एक धृष्टता है क्या उसने शारीरिक हाथों के बिना सौर जगत, पृथ्वी आदि ग्रहों उपग्रहों की रचना नहीं की ? क्या वह शारीरिक नेत्रों के बिना समस्त संसार को नहीं देखता ? क्या वह शारीरिक कानों के बिना हमारी आवाज़ों को नहीं सुनता ? तो फिर क्या यह आवश्यक नहीं कि उसी प्रकार वह वार्तालाप भी करे ? यह बात भी उचित नहीं है कि ख़ुदा का बात करना भविष्य में नहीं होगा अपितु वह भूतकाल में ही समाप्त हो चुका है। हम उस की वाणी और वार्तालाप को किसी काल विशेष तक सीमित नहीं कर सकते । वह अब भी ढूंढने वालों को इल्हामी स्त्रोत (ख़ुदाई कलाम का चश्मा) से तृप्त करने को तैयार है, जैसाकि प्राचीन काल में था । अब भी उसके वरदान के ऐसे ही द्वार खुले हैं जैसे कि पहले खुले थे । हां, आवश्यक्ताओं के समाप्त होने पर शरीअतें खत्म हो गईं और सब अवतारवाद और नबुव्वतें अपने आख़री केंद्र पर आकर हमारे सय्यदो-व-मौला सल्लल्लाहो अलैहि वसल्लम पर कमाल को पहुँच गईं ।

****
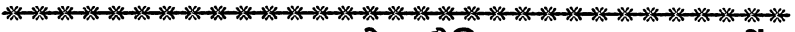
हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहो अलैहि वसल्लम का अरब में प्रादुर्भाव - एक रहस्य !

इस अन्तिम ज्योति का अरब की भूमि से उदय होने में भी एक सूक्ष्म भेद निहित था । अरब के निवासी हज़रत इस्माईल के वंशज थे ।यह वह जाति थी जो इस्राईल से पृथ्क् होकर ख़ुदा की विशेष इच्छा से ''फ़ारान'' के जंगल में डाल दी गई थी । ''फ़ारान'' के अर्थ हैं दो 'फ़रार' करने वाले अर्थात् ''भागने वाले ।'' अस्तु जिनको स्वयं हज़रत इब्राहीम ने इस्राईल के वंशजों से पृथक् कर दिया था । ''तौरात'' की शरीअत में उनका कोई भाग नहीं रहा था। जैसा कि लिखा है कि वह 'इसहाक़' के साथ सांझीदार नहीं बनेंगे ।

अत: ''तौरात'' से सम्बन्ध रखने वालों ने उन्हें छोड़ दिया । किसी दूसरे से उनका कोई सम्बन्ध नहीं । अन्य सभी देशों में कुछ-कुछ उपासना तथा रीति-रिवाजों के अवशेष तथा नियमों के चिन्ह मिलते थे जिन से पता चलता था कि किसी समय उन्हें नबियों की शिक्षा अवश्य पहुँची थी, किन्तु केवल अरब का देश ही एक ऐसा देश था जो उन शिक्षाओं से वञ्चित और अपरिचित था तथा समस्त संसार से पिछड़ा हुआ था । अतएव अन्त में उस की बारी आई और उस में उत्पन्न हुए नबी का वरदान सार्वभौमिक घोषित कर दिया गया ताकि वह समस्त देशों को उन वरदानों से लाभान्वित करे और जो त्रुटियाँ आ गई थीं उन्हें दूर करे । अत: पवित्र क़ुर्आन जैसी सर्व प्रकार से सम्पूर्ण पुस्तक के पश्चात् किस पुस्तक की प्रतीक्षा की जाए, जिसने मानव सुधार का सम्पूर्ण उत्तरदायित्व अपने कन्धों पर सम्भाल लिया । उसने प्राचीन धर्मग्रन्थों की तरह केवल एक जाति से ही अपना सम्बन्ध स्थापित नहीं किया प्रत्युत समस्त जातियों का सुधार करना उसका लक्ष्य था । उसने मनुष्य जाति की शिक्षा-दीक्षा की सभी विधाओं और उसकी समस्त श्रेणियों का स्पष्टतया वर्णन किया, अमानुषिक वृत्ति रखने वाले व्यक्तियों को मानवता के सिद्धान्त और शिष्टाचार सिखायें । पुन: मानवीय रूप प्रदान करके उन्हें महान् चरित्र का पाठ पढ़ाया ।

पवित्र क़ुर्आन का संसार पर उपकार

यह क़ुर्आन ने ही संसार पर एहसान किया कि प्राकृतिक अवस्थाओं और सदाचरण में अन्तर करके दिखलाया और जब प्राकृतिक अवस्थओं से निकालकर महान् चरित्र के सर्वोच्च शिखर तक पहुँचाया, तो केवल उसी को पर्याप्त न समझा अपितु एक अन्य समस्या को भी सुलझाया और वह यह कि आध्यात्मिक अवस्थाओं के स्तर तक पहुँचने के लिए पवित्र ज्ञान के द्वार खोल दिए । केवल खोले ही नहीं अपितु लाखों मानवों को उस तक पहुँचा भी दिया। अतएव इस प्रकार तीनों प्रकार की शिक्षाएं जिसका मैं पहले उल्लेख कर चुका हूँ, बड़ी सफलता पूर्वक वर्णन की हैं । इसलिये वह समस्त शिक्षा जो धार्मिक दीक्षाओं की आधार शिला है, सर्व प्रकार से सम्पूर्ण है ! इसी लिये उसने यह घोषणा की कि मैं ने ही धार्मिक शिक्षा को चरम सीमा तक पहुँचाया है । जैसा कि अल्लाह का कथन है :-

اَلْيَوْمَ اَكْمَلْتُ لَكُمْ دِيْنَكُمْ وَاَتْمَمْتُ عَلَيْكُمْ نِعْمَتِيْ
وَرَضِيْتُ لَكُمُ الْاِسْلَامَ دِيْنًا ؎

अल्यौमा अकमल्तो लकुम दीनकुम् व अत्मम्तो अलैकुम नेऽमती व रज़ीतो लकोमुलइस्लामा दीना ।

अर्थात् आज मैंने तुम्हारा दीन सम्पूर्ण किया तथा अपने पुरस्कारों और विशेष वरदानों को भी तुम्हारे लिए पूरा कर दिया तथा तुम्हारे लिए माननीय धर्म इस्लाम नियुक्त करके प्रसन्न हुआ अर्थात् धर्म का चरम लक्ष्य और अन्तिम बिन्दु वह है जो इस्लाम के अर्थों में पाई जाती है । वह यह कि अपने को ख़ुदा के सुपुर्द कर देना, और अपना मोक्ष अपने अस्तित्व के बलिदान से चाहना न कि किसी और ढंग से । और अपने इन सभी सङ्कल्पों को जीवन में साकार रूप देना तथा इन्हें कार्यरूप में परिणत कर देना । यह वह स्थान है जिसे हम समस्त कौशल और चमत्कारों की चरम सीमा कहेंगे । अस्तु, जिस ख़ुदा को ज्ञानीयों ने न पहचाना, पवित्र क़ुर्आन ने उस सच्चे

؎ المائدة : ۴

अल्लाह का पता बताया । क़ुर्आन ने ख़ुदा के अलौकिक ज्ञान प्रदान करने के निमित्त दो सिद्धान्त बताए हैं । प्रथम वह सिद्धान्त जिसके द्वारा मानवीय बुद्धि बौद्धिक तर्क और उक्तियाँ उत्पन्न करने के लिए तीव्र और रौशन हो जाती है औरमनुष्य पतन से बच जाता है । और दूसरा रूहानी तरीक़ा जिस को हम तीसरे सवाल के जवाब में जल्दी ही इंशाल्लाह तआला ब्यान करेंगे ।

अल्लाह तआला के मौजूद होने के प्रमाण

ध्यान देने की बात है कि अकली तौर पर क़ुर्आन शरीफ़ ने ख़ुदा के होने पर कैसे-कैसे श्रेष्ठ और ठोस बेमिसाल प्रमाण दिए हैं जैसा कि एक स्थान पर कहा है :-

رَبُّنَا الَّذِيْٓ اَعْطٰى كُلَّ شَيْءٍ خَلْقَهٗ ثُمَّ هَدٰى [1]

रब्बोनल्लज़ी अ७ता कुल्ला शैइन ख़ल्क़हू सुम्मा हदा ।

अर्थात् ख़ुदा वह ख़ुदा है जिसने प्रत्येक वस्तु को यथानु-रूप जन्म दिया । पुनः उस वस्तु को यथावश्यक विकसित होने का मार्ग भी दिखलाया । अब यदि इस आयत (पवित्र क़ुर्आन के कथन) के मतलब पर नज़र रख कर मनुष्य से ले कर सब समुद्री और धरती के जानवरों और पक्षियों के आकार तक को देखा जाए तो ख़ुदा की कुदरत याद आती है कि प्रत्येक चीज़ का आकार उसके अनूरूप मालूम होता है पाठकगण स्वयं विचार करलें क्योंकि यह बहुत ही विस्तृत विषय है ।

दूसरी दलील ख़ुदा तआला के होने पर क़ुर्आन शरीफ़ ने अल्लाह को सर्वकारणों का हेतु होना बताया है जैसा कि उसका कथन है :-

وَاَنَّ اِلٰى رَبِّكَ الْمُنْتَهٰى [2]

व अन्ना इला रब्बेकल् मुन्तहा ।

अर्थात् समस्त कारणों और कार्यों के क्रमसूत्रों का अन्त तेरे रब्ब पर हो जाता है विस्तार इस दलील का यह है कि गहरी दृष्टि डालने से पता चलेगा कि

---

[1] طٰهٰ: ٥١، [2] النجم: ٤٣

यह समस्त सृष्टि कारण और कार्य के क्रम में सम्बद्ध है । यही कारण है कि संसार में भांति-भांति के ज्ञान विज्ञान का प्रसार हो गया है क्योंकि सृष्टि का कोई अंश इस व्यवस्था से बाहर नहीं । इन में से कुछ कुछ के लिए जड़ों के रूप में और कुछ शाखाओं के रूप में है यह तो स्पष्ट है कि कारण का आधार या तो स्वयं वह कारण ही होगा अथवा उसके अस्तित्व का आधार कोई अन्य कारण होगा और यह दूसरा कारण किसी अन्य कारण पर आश्रित होगा । इसी प्रकार कारणों का क्रम आगे भी है इत्यादि । यह बात उचित मालूम नहीं होती कि इस सीमित जगत् में कारणों और कार्यों का क्रम कहीं जाकर समाप्त न हो या असीम हो, तो अवश्य मानना पड़ेगा कि क्रम अवश्य ही किसी अन्तिम कारण पर जाकर समाप्त हो जाता है । अतः जिस पर इस समस्त सृष्टि का अन्त है वही ख़ुदा है । आंखे खोलकर देख लो कि आयत (पवित्र क़ुर्आन का कथन) ।

وَ اَنَّ اِلٰی رَبِّکَ الۡمُنۡتَہٰی ۱

व अन्ना इला रब्बेकल् मुन्तहा ।

अपने संक्षिप्त शब्दों में किस प्रकार इस ऊपर लिखी-दलील को ब्यान फर्मा रही है । जिसका यह अर्थ है कि इस समस्त सृष्टि का अंत तेरे रब्ब तक है। पुनः अपनी स्तित्व के प्रमाण में एक यह दलील दी है । जैसा कि फ़रमाता है:-

لَا الشَّمۡسُ یَنۡۢبَغِیۡ لَہَاۤ اَنۡ تُدۡرِکَ الۡقَمَرَ وَ لَا الَّیۡلُ سَابِقُ النَّہَارِ ؕ وَ کُلٌّ فِیۡ
فَلَکٍ یَّسۡبَحُوۡنَ ۲

लश्शमूसो यम्बग़ी लहा अन तुद्रेकल्क़मरा व लल्लैलो साबेक़ुन्नहारे व कुल्लुन फ़ी फ़लकिन यसबहून ।

अर्थात् सूर्य चद्रमा को नहीं पकड़ सकता । और न ही रात जो चंद्रमा को जाहिर करने वाली है दिन पर जो सूर्य को जाहिर करने वाला है पर सत्ता जमा सकती है इनमें से कोई अपनी सीमा का उलंघन नहीं कर सकता ।

यदि इस सृष्टि क्रम के पीछे कोई संचालक और सृष्टिकर्ता न हो तो यह

---

१ अन्नज्म : ४३ ۲ یٰسٓ : ۴۱

समस्त सृष्टिक्रम अस्त व्यस्त हो जाए । यह तर्क खगोलविद्या पर गौर करने वालों के लिए अति लाभाकारी है क्योंकि आकाश में अति विशाल अगणित गोले हैं जिनके थोड़े से बिगाड़ से समस्त जगत तबाह हो सकता है । यह ख़ुदा की कैसी लीला है कि वे परस्पर न तो टकराते हैं न बाल भर रफ़तार बदलते हैं। और न इतनी देर तक काम देने में कुछ घिसे एवं न उनके कल पुर्ज़ों में कुछ अंतर आया है । यदि उनके ऊपर कोई संरक्षक नहीं तो किस प्रकार यह इतना विशाल अगणित वर्षों से स्वयंमेव चल रहा है ? इन्हीं सूक्ष्म सत्वों की ओर संकेत करके ख़ुदा तआला ने दूसरे स्थान पर कहा है :-

أَفِي اللّٰهِ شَكٌّ فَاطِرِ السَّمٰوٰتِ وَالْأَرْضِ ۖ [1]

अफ़िल्लाहेशक्कुन फ़ातेरिस्समावाते वल् अर्ज़े ।

अर्थात् क्या ख़ुदा के होने में सन्देह हो सकता है ? जिस ने ऐसे आकाश और ऐसी धरती बनाई फ़िर एक सूक्ष्म दलील अपने होने पर फरमाता है और वह यह है :-

كُلُّ مَنْ عَلَيْهَا فَانٍ ۝ وَّيَبْقٰى وَجْهُ رَبِّكَ ذُو الْجَلٰلِ وَالْإِكْرَامِ ۝ [2]

कुल्लो मन अलैहा फ़ान । व यबक़ा वज्हो रब्बेका ज़ुल्जलाले वल् इकराम ।

अर्थात् प्रत्येक वस्तु नाशवान है और जो बाकी रहने वाला है वह ख़ुदा है जो बड़ा ही प्रतापी (जलाल वाला) और सम्मानता वाला है ।

अब देखो कि यदि हम कल्पना करलें कि कभी ऐसा हो जाए कि पृथ्वी चूर-चूर हो जाए और समस्त नक्षत्र भी टुकड़े-टुकड़े हो जाएं, तथा उन पर मिटा देने वाली एक ऐसी वायु चले जो सभी चिन्ह उन चीज़ों के मिटा दे । परन्तु फिर भी बुद्धि इस बात को मानती और स्वीकार करती है और शुद्धात्मा भी इस बात का अवश्य अनुभव करती है कि इस समस्त विनाश के पश्चात् भी एक हस्ती शेष रह जाए जिस पर फ़ना ना आए और वह परिवर्तन और तबदीली को स्वीकार न करे और पूर्व दशा पर ही स्थिर रहे । बस वह वही

[1] ابراهيم : ١١ [2] الرحمٰن : ٢٧و٢٨

ख़ुदा है जिसने सब फ़ानी सूरतों को ज़ाहिर किया और स्वंय विनाश के दमन चक्र से सुरक्षित रहा ।

पुनः एक और तर्क अपनी सत्ता पर पवित्र क़ुर्आन में दिया है :-

ٱلَسْتُ بِرَبِّكُمْ ۖ قَالُوا۟ بَلَىٰ ۛ ؀[1]

अलस्तो बे रब्बेकुम । क़ालू बला ।

अर्थात् मैंने जीवात्माओं को कहा कि क्या मैं तुम्हारा विधाता नहीं ? उन्होंने उत्तर दिया क्यों नहीं ?

इस आयत में ख़ुदा तआला कथा के रूप में जीवात्माओं की उस विशेषता का वर्णन करता है जो उनके स्वभाव में उसने रखी हुई है और वह यह है कि कोई भी जीवात्मा अपने स्वाभाव से ख़ुदा तआला का इंकार नहीं कर सकती । केवल इन्कार करने वाले अपनी कल्पना के अनुसार तर्क न मिलने के कारण इनकार करते हैं किन्तु इस विरोध और इनकार के होते हुए भी वे इस बात को स्वीकार करते हैं कि हर एक घटना के वास्ते ज़रूर है कि उस का एक घटनायक हो । संसार में ऐसा कोई मूर्ख नहीं कि यदि उसके शरीर में कोई रोग लग जाए तो वह इस बात पर हठ करे कि इस रोग का कोई कारण नहीं । यदि यह सृष्टि क्रम कारण और कार्य से सम्बंद्ध न होती तो समय से पूर्व यह बता देना कि अमुक तिथि को तूफ़ान आएगा अथवा आन्धी आएगी अथवा सूर्य या चन्द्र को ग्रहण लगेगा अथवा अमुक समय रोगी की मृत्यु हो जाएगी, अथवा अमुक समय तक एक रोग के साथ दूसरा रोग लग जाएगा: यह सभी कुछ असम्भव हो जाता । अतः ऐसा तत्वदर्शी चाहे ख़ुदा के सतित्व का इकरार नहीं करता किन्तु एक प्रकार से उसने स्वीकार कर ही लिया है कि यह भी हमारी तरह ही कार्य के लिए कारण की खोज में है । यद्यपि यह भी एक प्रकार की स्वीकृति है परन्तु पूर्ण नहीं । इसके अतिरिक्त यदि किसी प्रकार एक नास्तिक को इस प्रकार बेहोश किया जाए कि वह जीवन के इन घटिया विचारों से नितान्त अलग हो कर तथा अपने सभी विचारों से कटकर श्रेष्ठ सत्ता के अधीन हो जाए, तो ऐसी दशा में वह ख़ुदा की सत्ता को स्वीकार करेगा,

---

[1] الاعراف : ۱۷۳

इनकार नहीं करेगा । जैसा कि इस पर बड़े-बड़े अनुभवियों का अनुभव साक्षी हैं । अत: ऐसी ही दशा की ओर उक्त आयत में संकेत किया गया है । और आयत का अर्थ यह है कि ख़ुदा के स्तित्व का इनकार केवल जीवन की घटिया अवस्था तक है अन्यथा मूल रूप से स्वभाव में इकरार भरा हुआ है ।

अल्लाह तआला के गुण

अल्लाह तआला के स्तित्व से सम्बन्धित यह कुछ उक्तियाँ और तर्क हैं जो हमने उदाहरण के रूप में लिखे हैं । इस के पश्चात् यह भी जानना चाहिए कि जिस ख़ुदा की ओर हमें पवित्र क़ुर्आन ने बुलाया है उसकी उसने ये विशेषताएँ लिखी हैं :-

هُوَ اللّٰهُ الَّذِىْ لَآ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ ۚ عٰلِمُ الْغَيْبِ وَالشَّهَادَةِ ۚ هُوَ الرَّحْمٰنُ
الرَّحِيْمُ ○ [1] مٰلِكِ يَوْمِ الدِّيْنِ ○ [2] اَلْمَلِكُ الْقُدُّوْسُ السَّلٰمُ
الْمُؤْمِنُ الْمُهَيْمِنُ الْعَزِيْزُ الْجَبَّارُ الْمُتَكَبِّرُ ۚ [3] هُوَ اللّٰهُ الْخَالِقُ
الْبَارِئُ الْمُصَوِّرُ لَهُ الْاَسْمَآءُ الْحُسْنٰى ۗ يُسَبِّحُ لَهٗ مَا فِى السَّمٰوٰتِ
وَالْاَرْضِ ۚ وَهُوَ الْعَزِيْزُ الْحَكِيْمُ ○ [4] عَلٰى كُلِّ شَىْءٍ قَدِيْرٌ ○ [5]
رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ ○ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ ○ مٰلِكِ يَوْمِ الدِّيْنِ ○ [6]
اُجِيْبُ دَعْوَةَ الدَّاعِ [7] اَلْحَىُّ الْقَيُّوْمُ [8] قُلْ هُوَ اللّٰهُ اَحَدٌ ۚ
اَللّٰهُ الصَّمَدُ ۚ لَمْ يَلِدْ ۙ وَلَمْ يُوْلَدْ ۙ وَلَمْ يَكُنْ لَّهٗ كُفُوًا اَحَدٌ ○ [9]

होवल्लाहुल्लज़ी ला इलाहा इल्ला हू । आलेमुल् ग़ैबे वश्शहादते । होवर्रेहमानुर्रहीम । मालिके योमिद्दीन अल-मलिकुल क़ुद्दूसुस्सलामुल मोऽमिनुल् मोहैमेनुल् अज़ीज़ुल् जब्बारुल् मुतकब्बिर । होवल्लाहुल् ख़ालेक़ुल् बारेउल् मुसव्विरो लहुल् अस्माउल् हुस्ना । योसब्बेहो लहू मा

[1] الحشر: ٢٣ [2] الفاتحة: ٤ [3] الحشر: ٢٤ [4] الحشر: ٢٥ [5] البقرة: ٢١ [6] الفاتحة ٢، ٣، ٤
[7] البقرة: ١٨٧ [8] البقرة: ٢٥٦ [9] الاخلاص
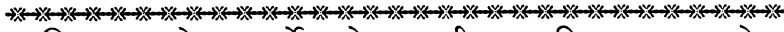
फ़िस्समावाते वल् अर्ज़े व होवल् अज़ीज़ुल् हकीम । अला कुल्ले शैइन क़दीर । रब्बिलआलमीन । अर्र-हमानिर्रहीम । मालिके योमिद्दीन । उजीबो दावतद्दाए इज़ा दआन । अल् हय्युल्क़य्यूमों । क़ुल होवल्लाहो अहद । अल्लाहुस्समद । लम् यलिद् वलम यूलद् वलम् यकुल्लहू कोफ़ोवन अहद् ।

अर्थात् वह ख़ुदा जो एक ही है जिसका कोई शरीक नहीं और जिसके अतिरिक्त अन्य कोई भी परस्तिश और आज्ञा के योग्य नहीं यह इस लिए कहा कि यदि वह लाशरीक और बेजोड़ न हो तो शायद उस की शक्ति पर शत्रु ही अपनीं शक्ति की धाक जमा ले । ऐसी परिस्थिति में उस की ख़ुदाई ख़तरह में रहेगी । इसके साथ यह जो कहा है कि उस के अतिरिक्त अन्य कोई इबादत के योग्य नहीं । इसका यह अर्थ है कि वह ऐसा सर्व शक्तिमान ख़ुदा है जिसकी विशेषताएँ और कौशल इतने महान् और श्रेष्ठ हैं कि यदि सृष्टि में से सम्पूर्ण विशेषताओं के कारण एक ख़ुदा का निर्वाचन करना पड़े अथवा हृदय में सर्व श्रेष्ठ महान् ख़ुदा की विशेषताओं की कल्पना की जाय तो सर्वोत्तम अल्लाह जिससे अधिक विशेषताओं का स्वामी अन्य कोई नहीं हो सकता । वही ख़ुदा है जिसकी उपासना में किसी घटिया को सांझीदार बनाना और उसे अल्लाह के समान समझना अन्याय और अत्याचार है ।

पुनः कहा है कि परमात्मा गुप्त भेदों का ज्ञाता है अर्थात् अपनी सत्ता को स्वयं जानता है । उसका पार कोई पा नहीं सकता । हम सूर्य चन्द्र तथा अन्य सृष्टि का आदि अन्त पूर्ण रूप से देख सकते हैं किन्तु ख़ुदा की सत्ता का आदि अन्त देखने से वन्चित है । फिर फ़रमाया कि वह व्यक्त और अव्यक्त सभी वस्तुओं का ज्ञाता है । अर्थात् उसकी दृष्टि से कोई भी वस्तु ओझल नहीं । यह उचित नहीं कि वह ख़ुदा कहला कर फिर वस्तुओं के ज्ञान से गाफ़िल हों । वह इस संसार के कण-कण पर अपनी दृष्टि रखता है । किन्तु मनुष्य उस जैसी दृष्टि नहीं रख सकता वह जानता है कि कब इस सृष्टि की व्यवस्था को भग

कर देगा और क़्यामत ले आएगा । उसके अतिरिक्त कोई नहीं जानता कि ऐसा कब होगा । अत: वही ख़ुदा है जो उन समस्त स्थितियों औरसमयों को जानता है । फ़िर फ़रमाया कि :-

هُوَالرَّحْمٰنُ

होवर्रहमानो ।

अर्थात् वह जीव धारियों के अस्तित्व तथा उनके कर्मों से पूर्व केवल अपनी कृपा से किसी कर्म के बदले में अथवा किसी स्वार्थ से नहीं उनके लिए सुख के साधन जुटाता है । जैसा कि सूर्य और पृथ्वी तथा अन्य समस्त जीवन सम्बन्धी उपकरणों को हमारे इस घटनाजगत में आने से पूर्व ही बना कर तैयार कर दिया । इस बख़शीश और दान का नाम ख़ुदा की किताब में 'रहमानियत' है और इस काम की दृष्टि से ख़ुदा तआला रहमान (अर्थात् बिना मांगे देने वाला) कहलाता है । और फ़िर फ़रमाया कि :-

اَلرَّحِيْمُ

अर्रहीम ।

अर्थात् वह ख़ुदा नेक कर्मों का नेक बदला देता है और किसी के परिश्रम को व्यर्थ नहीं जाने देता । इस काम की दृष्टि से (रहीम) कहलाता है और इस गुण को ''रहीमियत'' कहा जाता है । और फ़िर फ़रमाया :-

مٰلِكِ يَوْمِ الدِّيْنِ

मालिके योमिद्दीन ।

अर्थात् वह ख़ुदा प्रत्येक का बदला अपने अधिकार में रखता है । उसका कोई ऐसा लेखपाल (कारिन्दा) नहीं जिसको उसने पृथ्वी और आकाश का राज्य सौंप दिया । और आप अलग हो बैठा हो और स्वयं कुछ न करता हो और वही कारिन्दा सर्व प्रकार के पुरस्कार अथवा दण्ड देता हो या भविष्य में देने वाला हो । तत्पश्चात् कहा है :-

اَلْمَلِكُ الْقُدُّوْسُ [1]

अलमलिकुल क़ुद्दूसो ।

अर्थात् वह ख़ुदा सम्राट् है जिस में कोई अैब या दोष नहीं है यह बात स्पष्ट है कि मानवीय साम्राज्य दोष से रहित नहीं । उदाहरणतया यदि समस्त प्रजा जिला वतन (देश निकाला) हो कर दूसरे देश की ओर भाग जावे तो फिर साम्राज्य स्थिर नहीं रह सकता अथवा यदि समस्त प्रजा के लोग अकाल पीड़ित हो जाएं तो फिर राज्यकर आदि कहां से आएगा ? और यदि प्रजा उससे विवाद आरम्भ कर दे कि तुझ में हम से अधिक कौन सी वस्तु है ? तो वह अपनी कौन सी विशेष योग्यता सिद्ध करेगा ? अस्तु ख़ुदा तआला का साम्राराज्य ऐसा नहीं है वह एक दम में सब देश को फ़ना करके नई मख़लूक पैदा कर सकता है । यदि वह ऐसा स्रष्टा और सर्वशक्तिमान न होता तो बिना अत्याचार के उसकी बादशाही चल नहीं सकती क्योंकि वह संसार को एक बार क्षमा और मुक्ति देकर पुन: दूसरा संसार कहाँ से लाता क्या मुक्ति को पाये हुए व्यक्तियों को संसार में भेजने के लिए पकड़ता तथा अत्याचार के द्वारा अपनी मुक्ति देने की विशेषता को वापस ले लेता ? ऐसी दशा में उसकी ख़ुदाई में अन्तर आ जाता तथा सांसारिक सम्राटों के प्रकार दोषपूर्ण सम्रट् होता । जो संसार के लिए कानून बनाते हैं बात बात में बिगड़ते हैं और अपने स्वार्थ के समय जब देखते हैं कि अत्याचर के अतिरिक्त अन्य कोई मार्ग नहीं तो अत्याचार को माता का दूध समझ लेते हैं । उदाहरणतया राज्य-विधान के अनुसार यह उचित है कि एक जलयान को बचाने के लिए एक नौका के सवारों को तबाही में डाल दिया जाए और हलाक किया जाए । किन्तु ख़ुदा को यह विवशता नहीं होनी चाहिए। अत: यदि ख़ुदा सर्वशक्तिमान और शून्य से पैदा करने वाला न होता तो वह या तो दुर्बल राजाओं की भांति शक्ति के स्थान पर अत्याचार करता अथवा न्यायशील बनकर खुदाई को ही अलविदा कहता । सच तो यह है कि ख़ुदा का जहाज़ समस्त शक्तियों के साथ सत्य-न्याय पर चल रहा है । फ़िर फ़रमाया :-

---

[1] الحشر: ۲۴

اَلسَّلَامُ

अस्सलामो ।

अर्थात् वह ख़ुदा जो हर प्रकार के दोषों और दु:खों और कठिनाइयों से सर्वथा सुरक्षित है अपितु वह अपनी सृष्टि को सलामती देने वाला है इसका अर्थ स्पष्ट है; क्योंकि यदि वह स्वयं ही कष्टों में पड़ता, लोगों के हाथ से मारा जाता अथवा अपने लक्ष्य में अस्फ़ल रहता तो फिर उस विकृत आदर्श को देखकर किस प्रकार हृदयों को सन्तोष होता कि ऐसा ख़ुदा हमें ज़रूर मुसीबतों से मुक्ति देगा ? अत: अल्लाह तआला झूठे उपास्यों (मअबूदों) के विषय में फ़रमाता है :-

اِنَّ الَّذِيْنَ تَدْعُوْنَ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ لَنْ يَّخْلُقُوْا
ذُبَابًا وَّلَوِ اجْتَمَعُوْا لَهٗ وَاِنْ يَّسْلُبْهُمُ الذُّبَابُ شَيْئًا
لَّا يَسْتَنْقِذُوْهُ مِنْهُ ضَعُفَ الطَّالِبُ وَالْمَطْلُوْبُ ○ مَا
قَدَرُوا اللّٰهَ حَقَّ قَدْرِهٖ اِنَّ اللّٰهَ لَقَوِيٌّ عَزِيْزٌ [1]

इन्नल्लज़ीना यद्ऊना मिन्दूनिल्लाह लँय्यख़्लोक़ू ज़ुबाबन व लविज तमऊ लहू । व ईयस्लोबोहोमु ज़्ज़ुबाबो शैय्यल्ला यस्तन्क़ेज़ूहो मिनहो । ज़ोओफ़त्तालेबो वल मतलूब मा क़दरुल्लाहा हक़्क़ा क़द्रेही । इन्नल्लाहा ल क़वीऊन अज़ीज़ ।

अर्थात् जिन लोगों को तुम ख़ुदा बनाए बैठे हो वे तो ऐसे हैं कि यदि सब मिलकर एक मक्खी उत्पन्न करना चाहें तो कदापि उत्पन्न नहीं कर सकते चाहे परस्पर एक दूसरे से सहायता भी लें। यही नहीं अपितु मक्खी यदि उनकी कोई वस्तु छीनकर ले जाए तो उनमें इतनी भी शक्ति नहीं होगी कि वे मक्खी से चीज़ वापस ले सकें । उन के झूठे उपासक बुद्धि के कमज़ोर और वह (उपास्य) ताकत के कमज़ोर हैं । क्या ख़ुदा इस प्रकार के हुआ करते हैं ? ख़ुदा

[1] الحج: ٧٤، ٧٥

तो वह है जो समस्त शक्ति वालों से अधिक शक्तिवान् तथा सब पर विजयी होने वाला है । उसको न तो कोई पकड़ सकता है और न मार सकता है । ऐसी त्रुटियों में जो लोग फंस जाते हैं वे ख़ुदा की महानता को नहीं पहचानते और नहीं जानते कि ख़ुदा कैसा होना चाहिए ।

पुनः फ़रमाया कि ख़ुदा शान्ति देने वाला और अपनी सम्पूर्णता पर तथा अपने एक होने पर (तौहीद पर) सबूत देने वाला है और यह इस बात की ओर संकेत है कि सच्चे ख़ुदा पर विश्वास रखने वाला किसी सभा में लज्जित नहीं हो सकता तथा न ही ख़ुदा के सम्मुख लज्जित होगा क्योंकि उसके पास भारी सबूत होते हैं किन्तु बनावटी ख़ुदा पर आस्था रखने वाला बड़ी ही द्विविधा और कठिनाई में फंसा रहता है । वह तर्क अथवा सबूत देने के स्थान पर प्रत्येक व्यर्थ और निस्सार बात को राज़ में दाख़िल करता है ताकि उसकी हंसी न हो तथा सर्वसिद्ध और प्रसिद्ध त्रुटियों को गुप्त रखना चाहता है ।

इसके अतिरिक्त ख़ुदा का कथन है कि :-

الْمُهَيْمِنُ الْعَزِيزُ الْجَبَّارُ الْمُتَكَبِّرُ

अल्मोहैमेनुल् अज़ीज़ुल् जब्बारुल् मुतकब्बिर ।

अर्थात् वह (ख़ुदा) सब का संरक्षक है और सब पर अपनी सत्ता रखने वाला तथा बिगड़े हुए कार्यों का बनाने वाला है एवं उसे किसी सहायक की आवश्यकता नहीं । तत्पश्चात् कथन है :-

هُوَ اللّٰهُ الْخَالِقُ الْبَارِئُ الْمُصَوِّرُ لَهُ الْأَسْمَاءُ الْحُسْنٰى

होवल्लाहुल् ख़ालेक़ुल् बारेउल मुसव्वेरो लहूल् अस्माउल् हुस्ना ।

अर्थात् वह ऐसा ख़ुदा है कि वह शरीरों का भी स्रष्टा है और जीवात्माओं (रूह) का भी स्रष्टा है । गर्भ में शिशु की आकृति का निर्माण करने वाला भी वही है । विश्व में जितने भी सुन्दर और श्रेष्ठ नामों की कल्पना की जा सकती है सब उसी के नाम हैं । फिर कथन है कि :-

---

 ؎ الحشر ۲۴ ؏ الحشر : ۲۵

يُسَبِّحُ لَهٗ مَا فِي السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ وَهُوَ الْعَزِيْزُ الْحَكِيْمُ

योसब्बेहो लहू मा फ़िस्समलवाते वलअर्ज़े व होवल् अज़ीज़ुल हकीम।

अर्थात् आकाश के लोग भी उसके नाम को पवित्रता से स्मरण करते हैं तथा पृथ्वी पर बसने वाले भी । इस आयत में यह संकेत है कि सौर मण्डल में स्थित नक्षत्रों में आबादी है और वे लोग भी ख़ुदा की हिदायतों के पाबंद हैं ।

और फ़िर फ़रमाया :-

عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ

अला कुल्ले शैइन क़दीर ।

ख़ुदा सर्वशक्तिमान है । यह इबादत करने वालों के लिए सन्तोष और प्रसन्नता की बात है क्योंकि यदि ख़ुदा दुर्बल हो तथा सर्वशक्तिमान न हो तो ऐसे ख़ुदा से क्या आशाएँ रखी जा सकती हैं । और फ़िर फ़रमाया :-

رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ ۝ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ ۝ مٰلِكِ يَوْمِ الدِّيْنِ ۝
اُجِيْبُ دَعْوَةَ الدَّاعِ اِذَا دَعَانِ

रब्बिल आलमीन । अर्रहमानिर्रहीम । मालिके योमिद्दीन ।
उजीबो दावतद्दाइ इज़ा दआन ।

अर्थात् वही ख़ुदा है जो समस्त ब्रह्माण्डों का पालनहार, असीम कृपाएं करने वाला और बारम्बार दया करने वाला है तथा हिसाब किताब के दिन का स्वामी है । उसने पुरस्कार अथवा दण्ड विधान का कार्य किसी अन्य के हाथ में नहीं सौंपा । प्रत्येक पुकारने वाले के पुकार को सुनने वाला तथा उत्तर देने वाला है अर्थात् दुआओं को स्वीकार करने वाला है। तत्पश्चात् कहा है :-

اَلْحَيُّ الْقَيُّوْمُ

अल् हय्युल् क़य्यूम ।

अर्थात् सदैव स्थिर रहने वाला तथा समस्त प्राणियों के प्राणों और सबके

---

 ١ البقرة: ٢١ ٢ الفاتحة: ٢تا٤ ٣ البقرة: ١٨٧ ٤ البقرة: ٢٥٦

अस्तित्व का आधार वही है । यह इसलिए कहा कि यदि वह सदा से नहीं और सदा रहने वाला न हो तो उसके जीवन के विषय में भी सन्देह और भय रहेगा कि कदाचित् हम से पहले ही न मर जाए ।

पुन: कहा है कि वह ख़ुदा अकेला ही है, न वह किसी का पुत्र और न कोई उसका पुत्र है । न कोई उसके समान तथा न कोई उसका सजातीय है ।

स्मरण रहे कि ख़ुदा तआला के एक होने को (तौहीद को) समुचित ढंग से स्वीकार करना और उसमें कमी या अधिकता न करना यह वह न्याय है जो मनुष्य अपने परम स्वामी ख़ुदा के निमित्त सम्पन्न करता है । चारित्रिक शिक्षा का वह भाग जो पवित्र क़ुर्आन की शिक्षा से लिखा गया है । इस में नियम यह है कि ख़ुदा ने समस्त आचरणों को कमी एवं अधिकता से बचाया है । प्रत्येक आचरण को उस दशा में चरित्र की संज्ञा दी गई है जब कि अपनी मर्यादा से कम या ज़ियादा न हो ।

यह तो स्पष्ट है कि वास्तविक नेकी वही है जो दो सीमाओं के मध्य में होती है अर्थात् अधिकता और न्यूनता या कमी और जियादती के बीच में होती है । प्रत्येक आदत जो मध्यमता की ओर आकर्षित करे और मध्य स्थल पर पहुँचाए, वही महान् चरित्र को जन्म देती है । समय और स्थिति को पहचानना एक मध्यमता है । उदाहरणतया यदि कृषक अपना बीज समय से पूर्व बो दे अथवा समय व्यतीत हो जाने पर बोए, दोनों अवस्थाओं में वह मध्यवर्गीय मार्ग को छोड़ता है । नेकी, सत्य तथा हिक्मत (बुद्धि) सब मध्य में हैं और मध्यमता अवसर-वादिता में है । अथवा यूँ समझ लो कि वास्तविकता वह वस्तु है जो सदैव दो विभिन्न विरोधी असत्यों के मध्य में होती है । यह बात असन्दिग्ध है कि ठीक अवसर को समझ लेना मानव को सदैव मध्य में रखता है । ख़ुदा की पहचान के विषय में मध्यमता की पहचान यह है कि ख़ुदा की विशेषता का वर्णन करने में न तो उस की विशेषताओं से इन्कार करे और न ख़ुदा को भौतिक वस्तुओं के जैसा ठहराए । यही विधि पवित्र क़ुर्आन ने ख़ुदा तआला की विशेषताएँ वर्णन करने में अपनाई हैं ।

अस्तु, वह यह भी फ़रमाता है कि ख़ुदा सुनता, जानता, बोलता और वार्तालाप करता है तथा सृष्टि की समानता से बचाने के लिए यह भी कहता है कि :

لَيْسَ كَمِثْلِهٖ شَيْءٌ [1] فَلَا تَضْرِبُوْا لِلّٰهِ الْاَمْثَالَ [2]

लैसा कमिस्लेही शैऊन फ़ला तज़रेबू लिल्लाहिल् अमसाल ।

अर्थात् ख़ुदा की ज़ात तथा उसके गुणों में उसका कोई सांझी नहीं । उसके लिए सृष्टि में से उदाहरणें मत ढूँढो । अत: ख़ुदा की ज़ात को (सांसारिक वस्तुओं से) उदहारणों और खालिस पवित्रताओं के मध्य में रखना यही वस्तु (मध्य वर्गीय मार्ग) है ।

सारांश यह कि इस्लाम की शिक्षा मध्यवर्गीय शिक्षा है । सूर: फ़ातेहा में मध्यवर्गीय मार्ग ग्रहण करने का आदेश दिया गया है क्योंकि ख़ुदा तआला का कथन है कि :-

غَيْرِ الْمَغْضُوْبِ عَلَيْهِمْ وَلَا الضَّآلِّيْنَ [3]

ग़ैरिल् मग़्ज़ूबे अलैहिम वलज़्ज़वालीन ।

''मग़ज़ूबे अलैहिम'' से तात्पर्य वे लोग हैं जो ख़ुदा तआला के विरुद्ध अपनी क्रोधाग्नि को प्रयुक्त करके हिंसावृत्ति के पीछे चलते हैं । ज़्वालीन से अभिप्राय वे लोग हैं जो पाशविकता के अधीन होकर चलते हैं । मध्यवर्गीय मार्ग वह मार्ग है जिसको :-

اَنْعَمْتَ عَلَيْهِمْ

अन् अम्ता अलैहिम ।

(अर्थात् उन लोगों का मार्ग जिन पर तेरा पुरस्कार हुआ) से अभिहित किया गया है ।

कहने का तात्पर्य यह है कि इस मुबारक उम्मत (मुस्लिम जाति) के लिए पवित्र क़ुर्आन में मध्यमता का आदेश है । तौरात में ख़ुदा तआला ने बदले की भावना की ओर अधिक ज़ोर दिया था और इञ्जील में क्षमा पर ज़ोर दिया

---

[1] الشورى: ١٢ [2] النحل: ٧٥ [3] الفاتحة: ٧

था। किन्तु इस उम्मत (मुस्लिम जाति) को मध्यवर्गीय शिक्षा मिली । अतः अल्लाह तआला का कथन है :-

وَكَذٰلِكَ جَعَلْنٰكُمْ اُمَّةً وَّسَطًا ؕ[1]

व कज़ालेका जअलनाकुम उम्मतौं वसतन ।

अर्थात् हमने तुमको बीच के रास्ता पर चलने वाला बनाया है तथा मध्यवर्गीय शिक्षा तुम्हें दी । अतः सौभाग्यशाली हैं वे लोग जो मध्यमार्ग पर चलते हैं ।

خَيْرُ الْاُمُوْرِ اَوْسَطُهَا۔

ख़ैरुल् उमूरे औसतोहा ।

(अर्थात् प्रत्येक वह कार्य जो मध्यमता को अपनाए हुए होता है अच्छा होता है ।)

3 - रूहानी अवस्थाएँ

तृतीय भाग यह है कि रूहानी अवस्थाएँ क्या हैं ? विदित होना चाहिए कि हम इस से पहले बता चुके हैं कि पवित्र क़ुर्आन के आज्ञानुसार रूहानी अवस्थाओं का स्रोत और उद्गम स्थान सात्विक वृत्ति (नफ़्से मुतमइन्ना) है । जो मनुष्य को चरित्रवान होने के स्तर से उठाकर ख़ुदा वाला होने के पद तक पहुँचाता है । जैसा कि अल्लाह जल्ला शानोहू का कथन है कि:-

يٰۤاَيَّتُهَا النَّفْسُ الْمُطْمَئِنَّةُ ۞ ارْجِعِيْۤ اِلٰى رَبِّكِ رَاضِيَةً مَّرْضِيَّةً ۞ فَادْخُلِيْ فِيْ عِبٰدِيْ ۞ وَادْخُلِيْ جَنَّتِيْ ۞[2]

या अय्यतोहन्नफ़सुल् मुत्मइन्नतुर्जेई इला रब्बेके राज़ियतम्मर्ज़ियतन। फ़द् ख़ोली फ़ी इबादी वद्ख़ोली जन्नती ।

अर्थात् हे शुद्ध सात्विक मन ! जिसका आनन्द कुन्द ख़ुदा के साथ विश्राम निश्चित् है, अपने पालक ख़ुदा की ओर वापिस चला आ । वह तुझ से प्रसन्न

[1] البقرة: ۱۴۴ [2] الفجر: ۲۸ تا ۳۱

और तू उससे प्रसन्न है । अतः तू मेरे बन्दों में प्रविष्ट हो तथा मेरे बहिश्त (स्वर्ग) के भीतर आ जा । इस स्थान पर उचित है कि हम रूहानी अवस्थाओं के वर्णन करने के लिए इस आयते क़ुर्आन की व्याख्या कुछ विस्तार पूर्वक करें।

स्मरण रखना चाहिये कि सर्वोत्तम आध्यात्मिक (रूहानी) अवस्था मानव की इस सांसारिक जवीन में यह है कि ख़ुदा के साथ विश्राम पा जाए अर्थात् ख़ुदा की सत्ता में ही पूर्ण सन्तोष, आह्लाद और आनन्दानुभव करे । यही वह अवस्था है जिसको दूसरे शब्दों में स्गवर्गीय जीवन कहा जाता है । इस अवस्था में मनुष्य अपनी पूर्ण सत्यता, शुद्ध हृदयता तथा आज्ञाकारी के बदले में एक नक़द बहिश्त (स्वर्ग) प्राप्त कर लेता है । अन्य लोग मृत्योपरान्त उस की प्रतीक्षा करते हैं जबकि यह व्यक्ति इसी लोक में स्वर्ग पा लेता है । इस स्थान पर पहुँच कर मनुष्य समझता है कि वे इबादत जिसका भार उस के सिर पर डाला गया है, वास्तव में वही एक ऐसा पौष्टिक भोजन है जिससे उसकी रूह विकसित होती है तथा जिस पर उसकी आध्यात्मिक जीवन की आधारशिला है । और इसकी फल प्राप्ति किसी अन्य लोक में नहीं अपितु इसी जगत में होती है इसी स्थान पर यह बात प्राप्त होती है कि वे समस्त ताड़नाएं (मलामतें) जो मन की राजसिक वृत्ति (नफ़से लव्वामा) द्वारा मनुष्य के अपवित्र जीवन पर पड़ती है । परन्तु फिर भी नेक ख़्वाहिशों को अच्छी प्रकार उभार नहीं सकती और न ही हीन भावनाओं और दूषित इच्छाओं के प्रति घृणा उत्पन्न करा सकती है और न ही पुण्य के पावन पग पर डटे रहने की समर्थ्य दे सकती है वे उस पावन क्रिया के रूप में बदल जाती है जो सात्विक वृत्ति (नफ़से मुतमाइन्ना) के विकसित होने का आरम्भिक रूप होती है । इस स्थिति पर पहुँच कर एक ऐसा समय आ जाता है कि मनुष्य पूर्ण सफलता प्राप्त करे । और अब समस्त निम्न कोटि की मानसिक भावनाऐं ख़ुद ही बुझने लगती है तथा आत्मा (रूह) के ऊपर एक ऐसी शक्ति देने वाली पवन बहने लगती है जिससे मनुष्य को अपनी पहली दुर्बलताओं पर आत्मग्लानी का अनुभव होने लगता है । उस समय मानवीय स्वभाव में एक भारी परिवर्तन आ जाता है और

उसकी प्रकृति में आश्चर्यजनक क्रांति आ जाती है और तब मनुष्य अपनी पहली अवस्थाओं से बहुत ही दूर चला जाता है । और धोया जात है, स्वच्छ और पावन किया जाता है तथा ख़ुदा कल्याणकारी की सद्‌भावना अपने हाथ से उसके दिल पर अंकित कर देता है तथा बुराई की गंदगी अपने हाथ से उसके हृदय से निकाल कर बाहर फैंक देता है । सत्यता की सभी सेनाएं हृदय नगरी में आ जाती हैं और प्रकृति के सब बुरजों के सभी द्वारों पर ईमानदारी का अधिकार हो जाता है तथा सत्य की विजय होती है और असत्य अपने हथियार फैंक कर भाग जाता है । उस व्यक्ति के हृदय पर ख़ुदा का हाथ होता है । उसका प्रत्येक पग ख़ुदा की छत्रछाया में ही पड़ता है । अतः ख़ुदा तआला अपने निम्नलिखित पवित्र कथन में इसी तथ्य की ओर संकेत करता है ।

أُولَٰٓئِكَ كَتَبَ فِي قُلُوبِهِمُ الْإِيمَانَ وَأَيَّدَهُم بِرُوحٍ مِّنْهُ [1]

حَبَّبَ إِلَيْكُمُ الْإِيمَانَ وَزَيَّنَهُ فِي قُلُوبِكُمْ وَكَرَّهَ إِلَيْكُمُ الْكُفْرَ وَالْفُسُوقَ وَالْعِصْيَانَ ۚ أُولَٰٓئِكَ هُمُ الرَّاشِدُونَ ۝ فَضْلًا مِّنَ اللَّهِ وَنِعْمَةً ۚ وَاللَّهُ عَلِيمٌ حَكِيمٌ ۝ [2]

جَآءَ الْحَقُّ وَزَهَقَ الْبَاطِلُ ۚ إِنَّ الْبَاطِلَ كَانَ زَهُوقًا ۝ [3]

उलाएका कतबा फ़ी क़ुलूबेहिमुलईमाना व अय्यदाहुम बेरूहिम्मिन हो। हब्बा इलैकुमुल ईमाना व ज़य्यनहू फ़ी क़ुलूबेकुम व कर्रहा इलै कोमुल् कुफ़रा वल् फ़ोसूक़ा वल् इस्याना । उलाएका होमुर्राशेदूना । फ़ज़् लम्मिनल्लाहे व नेअमतन वल्लाहो अलीमुन हकीम । जाअल् हक़्क़ो व ज़हक़ल् बातेलो इन्नल बातेला काना ज़हूक़ा ।

अर्थात् ख़ुदा ने ईमान लाने वालों के दिलों में ईमान और विश्वास को स्वयं अपने हाथ से लिख दिया है और रूहुल कुदस अर्थात् (खुदाई दूत) केद्वारा

---

[1] المجادلة: ٢٣ [2] الحجرات: ٨،٩ [3] بنی اسرائیل: ٨٢

उनकी सहायता की । हे मोमिनों ! उसने ईमान और विश्वास को तुम्हारे लिए परम प्रिय बना दिया तथा उसका अलौकिक सौन्दर्य तुम्हारे हृदय में बिठा दिया। और कुफ्र और बदकारी और अवज्ञाकारी से तुम्हारे दिल को नफ़रत दे दी और बुरी राहों का मकरूह (अनौचित्य) होना । तुम्हारे हृदय पर जमा दिया। यह सब कुछ ख़ुदा के फ़ज़ल और रहमत से हुआ सत्य आया और असत्य भाग गया तथा असत्य, सत्य के सम्मुख कब ठहर सकता था !

तात्पर्य यह है कि ये सभी संकेत उस आध्यात्मिक अवस्था की ओर हैं जो तृतीय श्रेणी पर मनुष्य को प्राप्त होती है । मनुष्य को वास्तविक रौशनी उस समय तक नहीं मिल सकती जब तक यह अवस्था और यह स्थान उसे उपलब्ध न हो जाए । ख़ुदा तआला ने यह जो कहा है कि मैंने ईमान और विश्वास उनके हृदय में अपने हाथ से लिखा और रुहलकुदुस के द्वारा उनकी सहायता की, यह इस बात की ओर संकेत है कि मानव को वास्तविक पवित्रता और शुद्धता उस समय तक उपलब्ध नहीं हो सकती जब तक आसमानी सहायता उसके साथ न हो ।

मन की राजसिक अवस्था में मनुष्य की यह दशा होती है कि बारम्बार प्रायश्चित करता है और बार बार गिरता है अपितु यदा कदा अपनी सामर्थ्य से निराश भी हो जाता है और अपने रोग को उपचार की सीमा से बाहर समझ लेता है और एक समय तक इसी अवस्था में रहता है, पुन: जब निश्चित् समय बीत जाता है तो रात को या दिन को सहसा एक बार एक ज्योति उसके अन्त:करण में प्रवेश करती है । उस ज्योति में इलाही शाक्ति छुपी होती है । उस ज्योति के आने के साथ ही उसमें एक आश्चर्यजनक परिवर्तन आ जाता है तथा उस अलौकिक परिवर्तन के पीछे एक अव्यक्त सशक्त सत्ता के हाथ का आभास होता है । उसके सम्मुख एक अनोखा संसार आ जाता है । उस समय मनुष्य को यूँ मालूम होता है कि ख़ुदा है और उसके नेत्रों में वह ज्योति आ जाती है जो पहले नहीं थी । किन्तु इस मार्ग को कैसे पाया जाए ? और इस ज्योति को किस प्रकार प्राप्त किया जाए ?
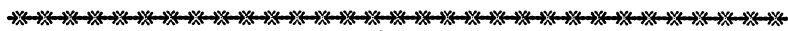
इस विषय में ज्ञात होना चाहिए कि इस जगत में जिसे घटना जगत (दारुल असबाब) की संज्ञा दी गई है अर्थात् इसकी रचना कारणों द्वारा हुई है- प्रत्येक कार्य के लिए एक कारण है और प्रत्येक क्रिया के लिए एक कर्त्ता है तथा हर प्रकार के ज्ञान प्राप्त करने के लिए एक मार्ग है जिसे सिराते मुस्तकीम (सीधा रास्ता) कहते हैं । संसार में कोई भी ऐसी वस्तु नहीं जो इन नियमों और सिद्धान्तों की अधीनता स्वीकार किए बिना उपलब्ध हो सके जो प्रकृति ने आदि काल से उसके लिए नियुक्त कर रखे हैं । प्राकृतिक विधान बतला रहा है कि प्रत्येक वस्तु की प्राप्ति के लिए एक स्वाभाविक और सरल मार्ग होता है और उसकी प्राप्ति उस स्वाभाविक मार्ग पर चल कर ही हो सकती है । उदाहरणतया यदि हम एक अन्धेरी कोठरी में बैठे हों और हमें सूर्य के प्रकाश की आवश्यकता हो, तो हमारे लिये यह सीधा मार्ग है कि हम उस खिड़की को खोल दें जो सूर्य की ओर है तब सूर्य का प्रकाश तुरन्त हम तक पहुँच जायेगा । यहाँ पर यह बात स्पष्ट हो जाती है कि ठीक इसी प्रकार ख़ुदा का सच्चा और वास्तविक वरदान पाने के लिए भी कोई खिड़की होगी तथा पवित्र रूहानियत (आध्यात्मिकता) की प्राप्ति के लिए कोई विशेष साधन भी होगा । वह साधन यह है कि आध्यात्मिक सम्बन्धों के लिए सरल मार्ग ढूंढें । जैसा कि हम अपने जीवन के सभी क्षेत्रों में अपनी सफलताओं के निमित सरल मार्ग ढूंढते हैं । किन्तु क्या वह विधि यही है कि हम केवल अपनी ही बुद्धि के बल पर और अपनी ही घड़ी हुई और मनघढ़त बातों से ख़ुदा के सम्पर्क की खोज करें ? क्या केवल हमारे अपने ही तर्क और अपनी ही दर्शनिकता से उस के वे द्वार हमारे लिए खुल सकते हैं जिनका खुलना उसी परम सत्ता के बाहुबल पर आश्रित है ? निश्चित जानो कि यह विधि सर्वथा शुद्ध नहीं है । हम उस अमर और कायम रहने वाले और दूसरों को कामय रखने वाले अविनाशी ख़ुदा को केवल अपनेही प्रयत्नों से कदापि नहीं पा सकते । अपितु उस मार्ग में सरल मार्ग केवल यह है कि सर्वप्रथम हम अपने जीवन को अपनी समस्त शक्तियों सहित ख़ुदा तआला के मार्ग में समप्रित करके पुनः उस ख़ुदा की प्राप्ति और उसके दर्शन के लिये

निरन्तर दुआओं में व्यस्त रहें ताकि ख़ुदा को ख़ुदा के द्वारा ही प्राप्त करें।

एक प्रिय दुआ

और सब से प्यारी दुआ जो हमें ख़ुदा से मांगने और उसके सामने अपनी आवश्यकताओं को रखने का ठीक समय तथा उचित अवसर सिखाती है । और स्वाभाविक आध्यात्मिक संवगों (जोशों) का ढांचा हमारे सम्मुख रखती है। वह दुआ है जो ख़ुदाए करीम ने अपनी पवित्र पुस्तक क़ुर्आन शरीफ़ में सूर: फातेहा में हमें सिखाई है । वह यह है :-

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ ۝

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

(अर्थ :- प्रारम्भ करता हूँ, अल्लाह के नाम से जो अतीव कृपालू और दयालू है ।)

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ ۝

अल्हम्दो लिल्लाहे रब्बिल आलमीन ।

अर्थ :- समस्त पवित्र प्रशंसाएं जो हो सकती हैं, उस अल्लाह के लिए हैं जो समस्त ब्रह्माण्डों का पैदा करने वाला और पालनहार है ।

اَلرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

अर्रहमानिर्रहीम

अर्थ :- वही ख़ुदा जो हमारे कर्मों से पहले हमारे लिये अपनी रहमत और दया की सामग्री जुटाने वाला है और हमारे कर्मों के पश्चात् कृपा और दया के साथ हमें बदला देने वाला है ।

مٰلِكِ يَوْمِ الدِّيْنِ

मालिके योमिद्दीन ।

अर्थ :- वह ख़ुदा जो हिसाब किताब के दिन अर्थात् प्रलय (कियामत)

الفاتحة : ١-٢ ، الفاتحة : ٣ ، الفاتحة : ٤

के दिन का वही एक मात्र स्वामी है । किसी अन्य को वह दिन नहीं सौंपा गया।

إِيَّاكَ نَعْبُدُ وَإِيَّاكَ نَسْتَعِينُ

ईय्याकानाऽबोदो व ईय्याका नस्तईन ।

अर्थ :- हे वह जो उक्त इन विशेषताओं का स्वामी है हम तेरी ही उपासना करते हैं और हम प्रत्येक कार्य में तुझ से ही सामर्थ्य की याचना करते हैं । इस स्थान पर ''हम'' के शब्द से उपासना को स्वीकार करना इस बात की ओर संकेत है कि हमारी सभी शक्तियां और इन्द्रियां तेरी उपासना और इबादत में लीन हैं और तेरे द्वार पर झुकी हुई हैं क्योंकि मनुष्य अपनी भीतरी शक्तियों की दृष्टि से एक समाज तथा एक समूह का रूप है और इस प्रकार समस्त इन्द्रियों और शक्तियों का ख़ुदा के समक्ष सज्दः करना (झुकना) यही वह अवस्था है जिसको इस्लाम कहते हैं ।

اِهْدِنَا الصِّرَاطَ الْمُسْتَقِيْمَ ۙ صِرَاطَ الَّذِيْنَ اَنْعَمْتَ عَلَيْهِمْ

एहदिनस्सिरात्वल्मुस्तक़ीमा सिरात्वल्लज़ीना अनअमता अलैहिम ।

अर्थ :- हमें अपने सरल और सीधे मार्ग पर चला तथा उसी पर दृढ़ निश्चयी बनाकर उन लोगों के मार्ग पर चला जिन पर तेरा पुरस्कार हुआ तथा जिन पर तेरी अपार कृपा और फ़जल व कर्म और पुरस्कारों की वृष्टि हुई ।

غَيْرِ الْمَغْضُوْبِ عَلَيْهِمْ وَلَا الضَّآلِّيْنَ ۝

ग़ैरिलमग़्ज़ूबे अलैहिम वलज़्ज़वाल्लीन ।

अर्थ :- हमें उन लोगों के मार्ग से बचा जिन पर तेरा प्रकोप हुआ तथा जो पथ-भ्रष्ट हुए और तुझ तक नहीं पहुँच सके ।

آمین

आमीन

 لـه الفاتحة: ٥ لـه الفاتحة: ٦ و لـه الفاتحة: ٧

हे ख़ुदा ! ऐसा ही कर ।

यह आयतें समझा रही हैं कि ख़ुदा तआला के पुरस्कार जिनको दूसरे शब्दों में कृपा और दया भी कहते हैं । उन्हीं पर उतरते हैं जो अपने जीवन की ख़ुदा की राह में क़ुर्बानी दे कर और अपना सतित्व उसी की राह में अर्पण करते तथा उसी की इच्छा में लीन रहते है, पुनः इसलिए दुआ और विनय करते रहते हैं कि मनुष्य को जो कुछ रूहानी अनुदान ख़ुदा की निकटता तथा उसका संयोग और उसकी (इल्हामी बातों) तथा उससे वार्तालाप आदि में से प्राप्त हो सकता है, वह सब उनको मिले । और उस दुआ के साथ-साथ अपनी समस्त इन्द्रियों से ख़ुदा की उपासना करते हैं, गुनाह से दूर रहते तथा ख़ुदा के द्वार पर पड़े रहते हैं एवं जहां तक उनके लिए सम्भव है अपने को बुराइयों से बचाते हैं, और ख़ुदा के प्रकोप वाले मार्गों से दूर रहते हैं । अतएव चूंकि वे एक दृढ़ साहस और अटूट निष्ठा के द्वारा ख़ुदा को खोजने और उसे पाने की चेष्टा करते हैं । इसलिए उसको पा लेते हैं । तथा ख़ुदा तआला के पवित्र ज्ञानामृत (मअरिफ़त) के प्यालों से तृप्त किये जाते हैं ।

इस पवित्र कथन में जो "इस्तक़ामत" (दृढ़ता) का उल्लेख हुआ है । यह इस बात की ओर संकेत है कि वास्तविक तथा पूर्णानुदान जो आध्यात्मिक (रूहानी) जगत् तक पहुंचता है, पूर्ण दृढ़ता से सम्बन्धित हैं । पूर्ण दृढ़ता से तात्पर्य सत्यता, आज्ञाकारी एवं हित की वह अवस्था है जिसको कोई परिक्षा हानि न पहुँचा सके अर्थात् ऐसा सम्बन्ध हो जिस को न तलवार काट सके, न अग्नि जला सके तथा न ही कोई अन्य विपत्ति हानि पहुँचा सके । निकटवर्ती सम्बन्धियों और बन्धुओं की मृत्यु उस से पृथक् न कर सके । प्रेमियों और मित्रजनों का वियोग उसमें विघ्न न डाल सके । मान हानि का भय उसको आतंकित न कर सके । भयानक दुःखों से मारा जाना उस को कुछ भी विचलित न कर सके । सो यह द्वार अति तंग और यह मार्ग अति कठिन है । कितना कठिन है । आह- सद-आह !!!

इसी ओर अल्लाह का इन पंक्तियों में संकेत है :-

قُلْ اِنْ كَانَ اٰبَآؤُكُمْ وَاَبْنَآؤُكُمْ وَاِخْوَانُكُمْ وَاَزْوَاجُكُمْ
وَعَشِيْرَتُكُمْ وَاَمْوَالُ ࣙاقْتَرَفْتُمُوْهَا وَتِجَارَةٌ تَخْشَوْنَ
كَسَادَهَا وَ مَسٰكِنُ تَرْضَوْنَهَآ اَحَبَّ اِلَيْكُمْ مِّنَ اللّٰهِ
وَرَسُوْلِهٖ وَجِهَادٍ فِىْ سَبِيْلِهٖ فَتَرَبَّصُوْا حَتّٰى يَاْتِىَ اللّٰهُ
بِاَمْرِهٖ ۗ وَاللّٰهُ لَا يَهْدِى الْقَوْمَ الْفٰسِقِيْنَ ۞ [1]

क़ुल् इन काना आबाओकुम् व अबनाओ कुम् व इख़्वानोकुम् व अज़वाजोकुम् व अशीरतोकुम् व अमवालो निक़्तरफ़्तोमूहा व तिजारतुन तख़्शौना कसादहा व मसाकेनो तरजोनहा अहब्बा इलैकुम् मिनल्लाहे व रसूलेही व जेहादिन फ़ी सबीलेही फ़ तरब्बसू हत्ता यातेयल्लाहो बे अम्रे ही वल्लाहो ला यहदिल् क़ौमल् फ़ासेक़ीन ।

अर्थात् इन को कह दो कि यदि तुम्हारे पिता और तुम्हारे पुत्र, तुम्हारे भाई, तुम्हारी स्त्रियां, तुम्हारे बन्धु तथा तुम्हारा वह धन जिसको तुमने परिश्रम से कमाया है, तुम्हारा वाणिज्य और व्यापार जिसके बन्द होने का तुम्हें भय है, तुम्हारे भव्य भवन जो तुम्हें दिल पसंद हैं, ख़ुदा से और उस के रसूल से तथा उसके पथ में अपने प्राण न्योछावर कर देने से अधिक प्रिय हैं तो तुम उस समय की प्रतीक्षा करो जब ख़ुदा अपना आदेश ज़ाहिर करे और ख़ुदा ऐसे दुष्टों और आज्ञा का उल्लंघन करने वालों को अपने सीधे मार्ग का कभी पथ-पदर्शन नहीं करता ।

इस कथन से स्पष्ट है कि जो लोग ख़ुदा की इच्छा से विरुद्ध अपने बन्धुओं और धन से प्रेम करते हैं, वे ख़ुदा के निकट दुष्ट हैं, उनको अवश्यमेव मिटाया जाएगा क्योंकि उन्होंने ख़ुदा के सम्मुख दूसरे को महानता दी। यही वह तीसरी श्रेणी है जिसमें वह व्यक्ति ख़ुदा वाला बनता है जो उसके

---

[1] التوبة : ٢٤

लिए सहस्रों विपत्तियां ख़रीद ले और ख़ुदा के सम्मुख ऐसे पवित्र मन तथा शुद्ध हृदय से झुक जाए कि ख़ुदा के अतिरिक्त कोई उसका न रहे, मानो सब मर गये।

अस्तु, सच तो यह है कि जब तक हम खुद न मरें ज़िंदा ख़ुदा नज़र नहीं आ सकता । ख़ुदा के दर्शन का दिन वही होता है जब हमारी शारीरिक ज़िंदगी पर मृत्यु आ जावे । हम उस समय तक अन्धे हैं जब तक ख़ुदा के ग़ैर के देखने से अंधे न हो जाएं और हम मृतक हैं जब तक ख़ुदा के हाथ में मृतक की तरह न हो जाएं । जब हमारा मुख उसके सन्मुख उचित ढंग से पड़ेगा तब वह सच्ची दृढ़ता जो समस्त वासनाओं को दबाकर उन पर विजयी होती है, हमें प्राप्त होगी इससे पहले नहीं । यही वह दृढ़ता है जिस से वासनात्मक और अभिमानी जीवन पर मृत्यु आ जाती है । हमारी दृढ़ता यह है जैसा कि वह फरमाता है कि:-

بَلٰی مَنْ اَسْلَمَ وَجْهَهٗ لِلّٰهِ وَهُوَ مُحْسِنٌ [1]

बला मन अस्लमा वज्हहू लिल्लाहे व होवा मोहसिनुन

अर्थात् बलि के समान मेरे आगे अपनी गर्दन रख दो । ऐसा ही हम उस समय दृढ़ता के स्थान को प्राप्त कर सकेंगे जब कि हमारे व्यक्तित्व और शरीर के अंग प्रत्यंग तथा हमारे मन की समस्त शक्तियां उसी के कार्य में लग जाएं और हमारी मृत्यु और हमारा जीवन उसी के लिए होजाए । जैसा कि अल्लाह का कथन है :-

قُلْ اِنَّ صَلَاتِیْ وَنُسُكِیْ وَ مَحْیَایَ وَمَمَاتِیْ لِلّٰهِ
رَبِّ الْعٰلَمِیْنَ [2]

क़ुल इन्ना सलाती व नोसोकी व मह्याया व ममाती ल्लिाहे रब्बिल आलमीन !

अर्थात् इनको कह दो कि मेरी नमाज़ और मेरी क़ुर्बानी और मेरा ज़िंदा रहना और मेरा मरना सब ख़ुदा के लिए है । और जब मनुष्य का प्रेम ख़ुदा के

---

[1] البقرة : ۱۱۳ [2] الانعام : ۱۶۳

प्रति इस अवस्था तक पहुंच जाए कि उसका मरना और जीना अपने लिए नहीं प्रत्युत्त ख़ुदा के लिए ही हो जाए तब वह ख़ुदा जो हमेशा से प्रेम करने वालों के साथ प्रेम करता आया है अपनी मोहब्बत को उस पर उतारता है इस प्रकार उन दो प्रेमों के संयोग से मनुष्य के अन्त:करण में एक (ज्योति) नूर उत्पन्न होती है जिसको संसार के लोग नहीं पहचान सकते और न समझ सकते हैं। सहस्रों सत्यप्रोमियों और ख़ुदा के प्यारों का इसी लिए रक्त बहाया गया कि संसार ने उन्हें नहीं पहचाना वे केवल मात्र इसीलिए मक्कार और स्वार्थी कहलाए कि संसार उनके नूरानी चेहरे को देख न सका। जैसा कि अल्लाह का कथन है :-

يَنظُرُونَ إِلَيْكَ وَهُمْ لَا يُبْصِرُونَ [1]

यन्ज़ोरूना इलैका व हुम ला युबसेरून ।

अर्थात् वे लोग जो अधर्मी हैं, तेरी ओर देखते तो हैं किन्तु उन्हें तू दिखाई नहीं देता । अत: जब वह अमर ज्योति पैदा होती है तो उस ज्योति के जन्म लेने के दिन से एक पार्थिव और सांसारिक व्यक्ति आध्यात्मिक (रूहानी) महापुरुष बन जाता है । वह ख़ुदा जो प्रत्येक सत्ता का स्वामी है उसके भीतर से बोलता है और अपनी ख़ुदाई की रौशनी दिखलाता है और उसके हृदय को जो शुद्ध सात्विक प्रेम से भरा होता है, अपना परमासन बनाता है । जब से यह व्यक्ति नूरानी परिवर्तन पाकर एक नवीन व्यक्ति बन जाता है, उस समय से वह ख़ुदा उस व्यक्ति के लिए एक नवीन ख़ुदा हो जाता है तथा वह अपने नवीन स्वभावों और नवीन विधानों का प्रदर्शन करता है । यह बात नहीं कि वह नवीन ख़ुदा है अथवा स्वभाव नवीन है अपितु वही ख़ुदा नित्य के साधारण स्वभावों से सर्वथा भिन्न होता है जिससे सांसारिक दर्शन-शास्त्र सर्वथा नावाकिफ़ है । यह लोग जैसा कि अल्लाह का कथन है :-

وَمِنَ النَّاسِ مَن يَشْرِي نَفْسَهُ ابْتِغَاءَ مَرْضَاتِ
اللَّهِ ۗ وَاللَّهُ رَءُوفٌ بِالْعِبَادِ [2]

---

 [1] الاعراف : ۱۹۹ [2] البقرة : ۲۰۸

व मिनन्नासे मँयश्री नफ़्सहुब्तेग़ाअ मर्ज़ातिल्लाहे वल्लाहो रऊफ़ुम्बिल् इबाद ।

अर्थात् मनुष्यों में वे उच्चकोटि के मनुष्य हैं जो ख़ुदा की इच्छा में विलीन हो जाते हैं और अपने प्राण बेचकर ख़ुदा की इच्छा खरीद लेते हैं । यही वे लोग हैं जिन पर ख़ुदा की अपार दया और कृपा है ।

ऐसा ही वह व्यक्ति जो रूहानी अवस्था के स्थान तक पहुंच गया है वह अपने को ख़ुदा की भेंट कर देता है । ख़ुदा तआला इस आयत में फ़रमाता है कि समस्त दु:खों से वह व्यक्ति मुक्ति पाता है जो मेरे लिए और मेरी इच्छा के लिए अपने प्राणों को बेच देता है । और क़ुर्बानी के साथ अपनी उस स्थिति का प्रमाण देता है कि वह ख़ुदा का है । वह अपनी सम्पूर्ण सत्ता और अपने सम्पूर्ण व्यक्तित्व को ऐसी वस्तु समझता है जो ख़ुदा की आज्ञाकारी और सृष्टि की सेवा के लिए बनाई गई है । तदुपरान्त वास्तविक और सच्चेसत्कर्म जो प्रत्येक प्रकार की शक्ति से सम्बन्धित हैं ऐसे प्रसन्न मन, प्रसन्न चित्त तथा शुद्ध हृदय से करता है मानो वह अपनी आज्ञाकारी और वफ़ादारी के दर्पण में अपने परमप्रिय ख़ुदा के दर्शन कर रहा है तथा उसके विचार और उसकी इच्छाए ख़ुदा के विचार तथा ख़ुदा की इच्छा में एक रंग हो जाते हैं । और समस्त आनन्द उसकी आज्ञाकारी में पाता है और समस्त शुद्ध-कर्म दु:खद तथा अप्रिय-कठोर परिश्रम द्वारा नहीं, अपितु आनन्दकर्षण और प्रसन्नता से प्रगट होने लगते हैं । यही वह नक़द बहिश्त है जो रूहानी पुरुष को इसी जवीन में मिलता है और वह बहिश्त जो मृत्योपरान्त मिलेगा वह वास्तव में इसका प्रतिबिंब और प्रतीक है जिस को दूसरी दुन्यिा में ख़ुदा की कुदरत शारीरिक तौर पर रूपान्तरित करके दिखलाएगी । ख़ुदा के पवित्र कलाम में इसी की ओर संकेत है :-

وَلِمَنْ خَافَ مَقَامَ رَبِّهٖ جَنَّتٰنِ ۝ [1] وَسَقٰهُمْ رَبُّهُمْ شَرَابًا طَهُوْرًا ۝ [2]
اِنَّ الْاَبْرَارَ يَشْرَبُوْنَ مِنْ كَاْسٍ كَانَ مِزَاجُهَا كَافُوْرًا ۝ عَيْنًا يَّشْرَبُ بِهَا
عِبَادُ اللّٰهِ يُفَجِّرُوْنَهَا تَفْجِيْرًا ۝ [3] يُسْقَوْنَ فِيْهَا كَاْسًا كَانَ مِزَاجُهَا زَنْجَبِيْلًا ۝

[1] الرحمٰن: ۴۷ [2] الدهر: ۲۲ [3] الدهر: ۶-۷

عَيْنًا فِيهَا تُسَمّٰى سَلْسَبِيْلًا ۝ [1] اِنَّآ اَعْتَدْنَا لِلْكٰفِرِيْنَ سَلٰسِلَا وَاَغْلٰلًا وَّسَعِيْرًا ۝ [2] وَمَنْ كَانَ فِيْ هٰذِهٖٓ اَعْمٰى فَهُوَ فِي الْاٰخِرَةِ اَعْمٰى وَ اَضَلُّ سَبِيْلًا ۝ [3]

वलेमन ख़ाफ़ा मक़ाम रब्बेही जन्नतान । व सक़ाहुम रब्बोहम शराबन तहूरा । इन्नल् अबरारा यश्रबुना मिन कासिन काना मिज़ाजोहा काफ़ूरा । ऐनैं यश्रबो बेहा इबादुल्लाहे युफ़ज्जेरुनहा तफ़जीरा । युस्क़ौना फ़ीहा कासन काना मिज़ाजोहा ज़न्जबीला । ऐनन फ़ीहा तुसम्मा सलसबीला। इन्ना आतदना लिल् काफ़िरीना सलासेला व अग़लालौं व सईरा । व मन काना फ़ी हाज़ेही आऽमा फ़ होवा फ़िल् आख़िरते आऽमा व अज़ल्लो सबीला ।

अर्थात् जो व्यक्ति ख़ुदा तआला से भय रखता है और उसकी महानता और तेजस्विता से डरता रहता है उसके लिए दो बहिश्त हैं । एक यह लोक दूसरी आखिरत (परलोक) ऐसे लोग जो ख़ुदा में लीन रहते हैं उन्हें ख़ुदा ने वह शरबत पिलाया है जिसने उन के हृदय तथा विचारों तथा धारणाओं को पवित्र कर दिया । नेक बंदे वह शर्बत पी रहे हैं जिसमें काफ़ूर का मिश्रण है वे उस स्रोत से पीते हैं जिनका निर्माण वे स्वयं करते हैं ।

काफ़ूरी और ज़न्जबीली शर्बत का भावार्थ

मैं पहले भी यह कह चुका हूँ कि ''काफ़ूर'' का शब्द इसलिए इस आयत (पवित्र कथन) में प्रयुक्त हुआ है कि अरबी भाषा में ''कफ़र'' दबाने और ढांपने को कहते हैं । अत: यह इस बात की ओर संकेत है कि उन्हों ने इतने शुद्ध हृदय से अपना सर्वस्व त्याग कर अल्लाह की ओर झुकने का मधुर रस

---

 [1] الدھر: ۱۸، ۱۹ [2] الدھر: ۵ [3] بنی اسرائیل: ۷۳

पिया है कि दुनिया की मुहब्बत सर्वथा मन्द पड़ गई है । यह बात सर्वमान्य है कि समस्त उद्वेग हृदयगत भावनाओं से जन्म लेते हैं । अत: जब हृदय दूषित भावनाओं से दूर चला जाए और उससे कोई सम्बन्ध शेष न रहे तो वे उद्वेग भी आहिस्ता आहिस्ता कम होने लगते हैं यहां तक कि समाप्त हो जाते हैं । अस्तु इस स्थान पर ख़ुदा तआला के कथन का तात्पर्य यही है । वह अपने इस कथन में यही समझाता है कि जो उसकी ओर पूर्ण रूप से झुक गए वे मन के विकारों से बहुत दूर निकल गए और ख़ुदा की ओर ऐसे झुक गए कि सांसारिक तत्परताओं से उनके हृदय ठण्डे हो गए तथा उनके विकृत उद्वेगों का दमन ऐसा हुआ जैसे काफ़ूर विषैले अंश को दबा देता है । पुन: कहा कि वे लोग इस काफ़ूरी प्याला के पश्चात् ऐसे प्याले पीते हैं । जिसमें 'ज़ञ्जबील' का मिश्रण है ।

अब ज्ञात होना चाहिए कि 'ज़ञ्जबील' दो शब्दों से मिलकर बना है अर्थात् 'ज़ना' और 'जबल' से । 'ज़ना' अरबी भाषा में ऊपर चढ़ने को कहते हैं और 'जबल' पर्वत को । अत: उसके शाब्दिक अर्थ यह हुए कि पर्वत पर चढ़ गया । अब ज्ञात होना चाहिए कि मनुष्य पर एक विषैले रोग के दब जाने के पश्चात् पूर्ण स्वस्थ होने तक दो अवस्थाएं आती हैं । एक वह अवस्था जब कि विषैले अंश का आवेग सर्वथा समाप्त हो जाता है तथा भयानक विकारों का वेग सुधार मार्ग की ओर चल पड़ता है । तथा विषैली अवस्थाओं का आक्रमण सकुशल बीत जाता है । एक भयानक घातक प्रकोप जो उठा था नीचे दब जाता है । किन्तु अभी तक अंगों में दुर्बलता शेष रहती है । कोई शक्ति का कार्य नहीं हो सकता । अभी मृतक की न्याईं गिरता पढ़ता चलता है ।

दूसरी वह अवस्था है जब कि वास्तविक स्वास्थय लौट आता है तथा शरीर में शक्ति भर जाती है और खोई हुई शक्ति के वापस आ जाने से यह साहस उत्पन्न हो जाता कि निडर होकर बेधड़क पर्वत पर चढ़ जाए तथा सप्रसन्न हंसते खेलते ऊंची घाटियों पर दौड़ता चला जाए । अत: ख़ुदा की राह को तय करने के करीबी तीसरे स्तर पर इस अवस्था के दर्शन होते हैं । ऐसी

अवस्था के विषय में अल्लाह तआला अपने पवित्र कथन मेंफ़रमाता है कि ख़ुदा के एसे बन्दे वे प्याले पीते हैं जिनमें ज़ञ्जबील (सोंठ) मिली हुई है । अर्थात् वह रूहानी अवस्था की पूर्ण शक्ति प्राप्त करके बड़ी-बड़ी घाटियों पर चढ़ जाते हैं और बड़े कठिन कार्य उनसे सम्पन्न होते हैं तथा ख़ुदा के लिए आश्चर्यजनक क़ुर्बानियां दिखलाते हैं ।

ज़ञ्जबील का प्रभाव

इस स्थान पर यह स्मरण रखना चाहिए कि स्वास्थ्य विज्ञान में ''ज़ंजबील'' वह औषधि है जिसको हिन्दी में 'सोंठ' कहते हैं । वह जठराग्नि (शारीरिक गर्मी) को शक्ति प्रदान करती है तथा दस्तों को रोकती है । उस का ज़ंजबील नाम इसलिए रखा गया कि मानो वह दुर्बलों को ऐसी शक्ति देती है और ऐसी गर्मी पहुंचाती है जिससे वे पर्वतों पर चढ़ सकें ।

अल्लाह के इन विभिन्न पवित्र कथनों के उल्लेख करने में जिन में एक स्थान पर काफ़ूर का उल्लेख हुआ है और एक स्थान पर सोंठ का । अल्लाहे तआला का यह उद्देश्य है कि अपने बन्दों को समझाए कि जब मनुष्य मानसिक जोशों से विमुख होकर कल्याण मार्ग की ओर अग्रसर होता है तो सर्वप्रथम उस क्रिया के पश्चात् यह अवस्था उत्पन्न होती है कि उसके विषैले अंश नीचे दबाए जाते हैं तथा मानसिक विकार शनेः-शनेः कम होने लगते हैं । जैसा कि काफ़ूर विषैले अंश को दबा लेता है । इसी लिए वह हैज़ा और विषम ज्वरों में लाभदायक है । जब विषैले अंश का वेग सर्वथा जाता रहे और एक साधारण स्वास्थ्य जो दुर्बलता के साथ जुड़ा होता है, प्राप्त हो जाए तो फिर दूसरी अवस्था यह है कि वह दुर्बल रोगी जंजबील के शर्बत से शक्ति पाता है । और ज़ंजबील शर्बत से तात्पर्य ख़ुदा तआला के सौन्दर्य की एक किरण है जो रूह का भोजन है । जब उस तजल्ली (तेज) से मनुष्य को बल मिलता है तो फिर बड़ी-बड़ी ऊंची घाटियों और उच्च शिखरों पर चढ़ने के योग्य हो जाता है और ख़ुदा तआला के रास्ते में ऐसे आश्चर्यजनक कठिन से कठिन कार्य सम्पन्न कर

लेता है कि जब तक यह प्रेमाग्नि किसी के हृदय में न हो, कदापि ऐसे कार्य दिखला नहीं सकता । अतः ख़ुदा तआला ने इस स्थान पर इन दो अवस्थाओं के समझाने के लिए अरबी भाषा के दो शब्दों से काम लिया है । एक 'काफ़ूर' से जो नीचे दबाने वाले को कहते हैं और दूसरे 'ज़ंजबील' से जो ऊपर चढ़ने वाले को कहते हैं । इस प्रकार योगियों (रूहानियत के मार्ग पर चलने वालों) के लिए इस मार्ग में यह दो अवस्थाएं नियत हैं ।

ख़ुदा तआला के उक्त पवित्र कथन का शेष भाग यह है :-

إِنَّآ أَعْتَدْنَا لِلْكٰفِرِيْنَ سَلٰسِلَا وَأَغْلٰلًا وَّسَعِيْرًا ۝ ـه

इन्न आऽतदना लिल् काफ़ेरीना सलासेला व अग़्लालौं व सईरा।

अर्थात् हमने अधर्मियों के लिए जो सत्य को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं ज़जीरें तैयार कर दी हैं एवं उनकी गर्दन के लिए तौक़ तथा धदकती हुई भयानक अग्नि की तीव्र लपटें भी । इस आयत का अर्थ यह है कि जो लोग शुद्ध हृदय से ख़ुदा तआला को नहीं खोजते हैं उन पर ख़ुदा तआला की ओर से मार पड़ती है । वे सांसारिक माया और विपदाओं से ऐसे ग्रस्त रहते हैं मानों पैरों में जंज़ीरों से जकड़े हुए हैं तथा सांसारिक कार्यों में ऐसे घिरे होते हैं मानों उनकी गर्दन में एक तौक़ है जो उनको आकाश (आध्यात्मिकता) की ओर सिर नहीं उठाने देता । उनके हृदयों में लोभ और मोह की एक प्रबल ज्वाला धू-धू करती रहती है कि यह धन प्राप्त हो जाए और वह जायदाद मिल जाए तथा अमुक देश हमारे अधिकार में आ जाए तथा अमुक शत्रु पर हम विजय प्राप्त कर लें । इतना रुपया हो, इतना धन हो । चूंकि ख़ुदा तआला इन लोगों को नीच और पतित समझता है और बुरे कामों में व्यस्त पाता है । अतएव यह तीनों विपत्तियां उनको लगा देता है । इस स्थान पर इस बात की ओर संकेत है कि जब मनुष्य से कोई क्रिया सम्पन्न होती है तो उसी के अनुरूप ख़ुदा भी अपनी ओर से एक क्रिया करता है । उदाहरणतया मनुष्य जिस समय अपनी कोठरी के समस्त द्वार बंद कर दे तो मनुष्य की इस क्रिया के पश्चात् ख़ुदा

ـه الدهر: ٥

तआला की ओर से यह प्रतिक्रिया होगी कि वह उस कोठरी में अन्धकार उत्पन्न कर देगा क्योंकि जो बातें ख़ुदा तआला के प्राकृतिक विधान में हमारे कर्मों के लिए एक अनिवार्य परिणाम के रूप में निश्चित हो चुकी हैं वह सब ख़ुदा तआला के कार्य हैं । कारण यह है कि वही सब कार्यों का आदि कारण है। इसी प्रकार यदि कोई व्यक्ति मार देने वाला ज़हर खा ले तो उसकी इस क्रिया के पश्चात् ख़ुदा तआला का यह कर्म होगा कि उसे मृत्यु दे देगा । इसी प्रकार यदि कोई अनुचित कर्म करे जो किसी संक्रामक और छूत के रोग का कारण हो तो उसकी उस क्रिया के पश्चात् ख़ुदा तआला की क्रिया यह होगी कि वह छूत का रोग उसे पकड़ लेगा ।

अत: जिस प्रकार हमारे सांसारिक जीवन में स्पष्ट दिखाई देता है कि हमारी प्रत्येक क्रिया के लिए एक अनिवार्य परिणाम है और वह परिणाम ख़ुदा तआला का कार्य है । इसी प्रकार दीन के विषय में भी यही नियम है । जैसा कि ख़ुदा तआला इन दो उदाहरणों में स्पष्ट बताता है ।

اَلَّذِيْنَ جَاهَدُوْا فِيْنَا لَنَهْدِيَنَّهُمْ سُبُلَنَا [1]

فَلَمَّا زَاغُوْا اَزَاغَ اللّٰهُ قُلُوْبَهُمْ [2]

अल्लज़ीना जाहदू फ़ीना.ल नहदेयन्नाहुम सोबोलना । फ़लम्मा ज़ाग़ू अज़ाग़ल्ला हो क़ुलूबहुम ।

अर्थात् जो लोग इस कर्त्तव्य की ओर जागरुक हुए कि उन्होंने ख़ुदा तआला की खोज में पूर्ण रूप से यथाविधि प्रयत्न किया तो इस क्रिया के लिए अनिवार्य रूप में हमारी ओर से यह प्रतिक्रिया होगी कि हम उनको अपने मिलने का मार्ग दिखाएंगे । जिन लोगों ने अपने स्वभाव को पेच दर पेच बनाया तथा सरल और सीधे मार्ग पर चलना स्वीकार न किया तो इसके परिणाम स्वरूप इस क्रिया के लिए अनिवार्य रूप में हमारा कार्य यह होगा कि हम उनके हृदयों को टेढ़ा कर देंगे । और फिर इस अवस्था को अधिक स्पष्ट रूप से इस प्रकार समझाया गया है:-

مَنْ كَانَ فِىْ هٰذِهٖۤ اَعْمٰى فَهُوَ فِى الْاٰخِرَةِ اَعْمٰى

---

[1] العنكبوت: ٧٠ [2] الصف: ٦

وَاَضَلُّ سَبِيْلًا ¹
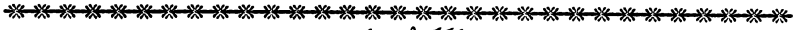
मन काना फ़ी हाज़ेही आऽमा फ़होवा फ़िल आख़ेरते आऽमा व अज़ल्लो सबीला ।

अर्थात् जो व्यक्ति इस संसार में अन्धा रहा वह आने वाले संसार में भी अन्धा ही होगा । अपितु अन्धों से अधिक अन्धा । यह इस बात की ओर संकेत है कि नेक बंदों को ख़ुदा के दर्शन इसी संसार में हो जाते हैं और वे इसी लोक में अपने प्रिय का संयोग पा लेते हैं जिसके लिए वे सब कुछ खोते हैं । इस आयत का तात्पर्य यह है कि बहिश्ती जीवन की नींव इसी लोक से पड़ती है और नारकीय नेत्रहीनता की जड़ भी इसी संसार का दूषित और अन्धकारमय जीवन है । पुनः कहा है :-

وَبَشِّرِ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ اَنَّ لَهُمْ جَنّٰتٍ
تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ ²

व बष्शेरिल्लज़ीन आमनू व अमेलुस्सवालेहाते अन्नालहुम जन्नातिन तजरी मिन तहतेहल अनहारो ।

अर्थात् जो लोग ईमान लाते और अच्छे काम करते हैं । वे उन बाटिकाओं के स्वामी हैं जिनके नीचे नहरें बह रही हैं ।

इस कथन में ख़ुदा तआला ने ईमान और विश्वास को बाटिका से उपमा दी है जिसके नीचे नहरें बहती हैं । अतः यह ज्ञात होना चाहिए कि इस स्थान पर एक उच्चकोटि के सूक्ष्म दार्शनिक तत्व के रूप में बतलाया गया है कि जो सम्बन्ध नहरों का बाटिका के साथ है वही सम्बन्ध कर्मों का ईमान के साथ है। जैसे कोई बाटिका पानी के बिना जीवित नहीं रह सकती इसी प्रकार कोई ईमान बिना सत्कर्मों के सजीव ईमान नहीं कहला सकता । यदि ईमान हो और सत्कर्म न हो तो वह ईमान तुच्छ है और यदि सत्कर्म हो और ईमान न हो तो वे क्रियाएं आडम्बर तथा दिखावा हैं । इस्लामी बहिश्त की यही वास्तविकता है कि वह इस संसार के ईमान और धर्म कर्म का एक प्रतिबिंब है। वह कोई नवीन

---

¹ بنی اسرائیل: ۷۳، ² البقرة: ۲۶

वस्तु नहीं जो बाहर से आकर मनुष्य को मिलेगी अपितु मनुष्य की बहिश्त उसके भीतर से ही निकलती है तथा प्रत्येक का बहिश्त उसी का ईमान (विश्वास) और उसी के सत्कर्म हैं जिनका इसी संसार में आनन्दानुभव होने लगता है तथा गुप्त रूप में ईमान और कर्मों के बाग, बाटिकाएं दृष्टिगोचर होने लगते हैं और नहरें भी दिखाई देती हैं। किन्तु दूसरी दुनिया में यही बाटिकाएँ खुले रूप में स्पष्टतया दिखाई देंगी। ख़ुदा की पवित्र वाणी हमें यही शिक्षा देती हैं कि सत्य तथा पवित्र, सुदृढ़ एवं सर्व प्रकार से पूर्ण ईमान जो ख़ुदा और उसके गुणों और उसकी इच्छाओं के विषय में हो वह अति सुन्दर बहिश्त तथा फलदार वृक्ष है। सत्कर्म उस बहिश्त की नहरें हैं। जैसा कि उसका पवित्र कथन हैं :-

ضَرَبَ اللّٰهُ مَثَلًا كَلِمَةً طَيِّبَةً كَشَجَرَةٍ طَيِّبَةٍ اَصْلُهَا ثَابِتٌ
وَّفَرْعُهَا فِي السَّمَآءِ ۙ تُؤْتِيْٓ اُكُلَهَا كُلَّ حِيْنٍ ـه

ज़रबल्लाहो मसलन कलेमतन त्वैयेबतन कशजरतिन तय्येबतिन अस्लोहा साबेतुन व फ़र्ओहा फ़िस्समाए तोऽती ओकोलोहा कुल्ला हीन।

अर्थात् वह ईमानी कलिमा जो प्रत्येक अधिकता और अतिक्रमण अथवा न्यूनता एवं त्रुटि, विकार तथा झूठ एवं उपहास से अछूता और पवित्र तथा सर्व रूप से सम्पूर्ण हो उस वृक्ष के अनुरूप है जो प्रत्येक त्रुटि से पवित्र हो जिसकी मूल पृथ्वी में तथा शाखाएं आकाश में हों तथा अपने फल को सदा देता हो। और ऐसा समय उस पर कभी नहीं आता कि उसकी शाखाओं में फल न हों। इस बयान में ख़ुदा तआला ने ईमानी कलिमा (अर्थात् विश्वास युक्त वाक्य) को सदैव फलदार वृक्ष से उदाहरण देकर तीन चिन्ह उसके वर्णन किए हैं :-

(1) प्रथम यह कि उसकी (जड़ जो उसके वास्तविक अर्थों का स्वरूप है) मनुष्य की हृदय भूमि में लगी हुई हो अर्थात् मानवीय स्वभाव तथा अन्तः प्रेरणा ने उसकी वास्तविक सच्चाई सत्यता और तथ्य को स्वीकार कर लिया

ـه ابرٰهیم : ۲۵، ۲۶

हो ।

(2) दूसरा चिन्ह यह है कि इस ''कलिमा'' की शाखाएं आकाश में हों अर्थात् वह बुद्धी के अनूसार हो तथा आकाशीय अर्थात् आध्यात्मिक विधान जो ख़ुदा का कर्म है उस कर्म के अनुरूप हो । इसका अर्थ यह है कि उसकी शुद्धि तथा वास्तविकता के ठोस प्रमाण और तर्क प्राकृतिक विधान से मिल सकते हों तथा वे तर्क और प्रकाण ऐसे श्रेष्ठ हों कि मानों आकाश में हैं जिन तक आक्षेप (एतराज़) का हाथ नहीं पहुंच सकता ।

(3) तीसरा चिन्ह यह है कि वह फल जो खाने के योग्य हैं, सदैव रहने वाले तथा समाप्त न होने वाले हों अर्थात् निरन्तर अभ्यास के पश्चात् उसके वरदान, उसके सद्‌प्रभाव सदैव तथा प्रत्येक युग में प्रगट होते रहें और संसार उनका अनुभव करता रहे । यह नहीं कि किसी विशेष युग तक प्रगट हो कर पुनः आगे के लिए बन्द हो जाएं ।

पुनः कहा है :-

مَثَلُ كَلِمَةٍ خَبِيْثَةٍ كَشَجَرَةٍ خَبِيْثَةِ ٱجْتُثَّتْ مِنْ
فَوْقِ الْاَرْضِ مَا لَهَا مِنْ قَرَارٍ ۝ [1]

मसलो कलेमतिन ख़बीसतिन कशजरतिन ख़बीसति निजतुस्सत मिन फ़ौक़िल् अर्ज़े मा लहा मिन क़रार ।

अर्थात् पलीद और अपवित्र कलिमा (विकृत विश्वास) उस वृक्ष के समान है जो पृथ्वी में उखड़ा पड़ा हो । अर्थात् मानवीय प्रवृति उसे स्वीकार नहीं करती और किसी प्रकार से उसे सन्तोष और चैन नहीं मिलता । न बौद्धिक तर्क वितर्कों से और न ही प्राकृतिक विधान से । वह केवल अफ़सानों और कहानियों के रूप में होता है । और जैसा कि पवित्र क़ुर्आन ने आख़िरत में विश्वास के पवित्र वृक्षों का अंगूर तथा अनार एवं अत्युत्तम फलों और मेवों से उपमा दी है और बताया है कि उस दिन वे फल उन मेवों के अनुरूप होंगे तथा उसी प्रकार दिखाई भी देंगे । इसी प्रकार बेईमानी और अविश्वास के अपवित्र

---

[1] ابراهيم : ٢٧

वृक्ष का नाम आलमे आख़िरत में ज़क़्क़ूम (थूहर) रखा है । जैसा कि ख़ुदा तआला का पवित्र कथन है :-

أَذٰلِكَ خَيْرٌ نُّزُلًا أَمْ شَجَرَةُ الزَّقُّوْمِ ○ إِنَّا جَعَلْنٰهَا فِتْنَةً
لِّلظّٰلِمِيْنَ ○ إِنَّهَا شَجَرَةٌ تَخْرُجُ فِيْٓ أَصْلِ الْجَحِيْمِ ○
طَلْعُهَا كَأَنَّهٗ رُءُوْسُ الشَّيٰطِيْنِ ○ [1]
إِنَّ شَجَرَتَ الزَّقُّوْمِ ○ طَعَامُ الْأَثِيْمِ ○ كَالْمُهْلِ
يَغْلِيْ فِي الْبُطُوْنِ ○ كَغَلْيِ الْحَمِيْمِ ○ [2]
ذُقْ إِنَّكَ أَنْتَ الْعَزِيْزُ الْكَرِيْمُ ○ [3]

अज़ालेका ख़ैरुन्नोज़ोलन अम शजर तुज़्ज़क़्क़ूमे इन्ना जअलनाहा फ़ितनतल्लिज़्ज़ालेमीना । इन्नहाशजरतुन तख़रोजो फ़ी अस्लिलजहीम । तलओहा कअन्नहू रऊसुश्शयातीने । इन्ना शजरतज़्ज़क़्क़ुमे तआमुल असीम। कलमोहले यग़ली फ़िलबुतूने कग़लयिल हमीम ज़ुक़ इन्नका अन्तल अज़ीज़ुल् करीम ।

अर्थात् तुम बतलाओ कि स्वर्ग की बाटिकाएं सुन्दर हैं अथवा थूहर का वृक्ष जो अत्याचारियों के लिए एक भयानक प्रकोप है । थूहर वह एक वृक्ष है जो नरक की नींव से उगता है अर्थात् अहं तथा गर्व और स्वाभिमान से जन्म लेता है । यही नरक का मूल है । इसका अंकुर ऐसा है जैसे शैतान (राक्षस) का मस्तक । शैतान का अर्थ है हलाक होने वाला । यह शब्द 'शैत' से निकला है । तात्पर्य यह कि इसका खाना मृत्यु को प्राप्त होना है । पुनः आया है कि ज़क़्क़ूम का वृक्ष उन नारकीय लोगों का भोजन है जो जान बूझ कर पाप पंक में पग रखते थे । वह भोजन ऐसा है जैसा कि पिघला हुआ तांबा खौलते हुए पानी के समान पेट में जोश मारने वाला । पुनः नारकीय लोगों को सम्बोधन करके कहा है कि उस वृक्ष को चख तू बड़ा इज़्ज़त वाला और बज़ुरग बना फ़िरता

[1] الصّٰفّٰت: ۶۳ [2] الدخان: ۴۴، ۴۷ [3] الدخان: ۵۰

था। यह कथन अत्यन्त क्रोध को प्रगट करने वाला है। इसका वास्तविक अर्थ यह है कि यदि तू अभिमान न करता आर अपनी बड़ाई तथा प्रतिष्ठा को सामने रख कर सत्यता से विमुख न होता तो आज तुझ को यह दु:ख न उठाने पड़ते ।

यह आयत इस ओर भी संकेत करती है कि वास्तव में यह शब्द 'ज़ुक़' और (अम) का योगिक शब्द है और अम् ''इन्नका अन्तलअज़ीज़ुल करीम'' का सारांश है । जिसमें एक अक्षर प्रारम्भ का तथा एक अक्षर अन्त का विद्यमान है और प्रयोग की अधिकता ने 'ज़ाल' को 'ज़ा' के साथ परिवर्तित कर दिया है । कहने का तात्पर्ययह है कि जैसा कि अल्लाह तआला ने इसी संसार के ईमान और विश्वास के पौधे को स्वर्ग के साथ उपमा दी है । इसी प्रकार इस संसार के बेईमानी और अविश्वास को 'जक़्क़ूम' (थूहर) के साथ उपमा दी है । इसको नरक का वृक्ष बताया है और स्पष्ट कर दिया है कि स्वर्ग और नरक की जड़ इसी संसार से प्रारम्भ होती है जैसा कि नरक के प्रसंग में एक अन्य स्थान पर कहा है :-

نَارُ اللّٰهِ الْمُوْقَدَةُ ۝ الَّتِیْ تَطَّلِعُ عَلَى الْاَفْـِٕدَةِ ۝ [1]

नारुल्लाहिल मोक़दतुल्लतो तत्तलेओ अलल अफ़एदते ।

अर्थात् नरक वह अग्नि है जिसका स्त्रोत ख़ुदा का प्रकोप है और पाप से भड़कती है । यह पहले हृदय पर अपना आतंक जमाती है । यह इस बात की ओर संकेत है कि उस अग्नि की वास्तविक जड़ वह दु:ख, शोक, आकाक्षाएं और टीसें हैं जो हृदय को पकड़ती हैं क्योंकि समस्त आध्यात्मिक प्रकोप सर्वप्रथम हृदय से ही प्रारम्भ होते हैं पुन: समस्त शरीर पर छा जाते हैं । इसके अतिरिक्त एक स्थान पर और कहा है :-

وَقُوْدُهَا النَّاسُ وَالْحِجَارَةُ [2]

वक़ूदोहन्नासो वल् हिजारतो ।

अर्थात् नरक की अग्नि का ईंधन जिस से वह आग सदैव जलती रहती है

---

[1] الهمزة ۷،۸ [2] البقرة: ۲۵

दो वस्तुएं हैं एक वे मनुष्य जो सच्चे ख़ुदा को छोड़ कर अन्य वस्तुओं की पूजा करते हैं अथवा उनकी इच्छा से उनकी इबादत की जाती है जैसा कि कहा है:-

اِنَّكُمْ وَمَا تَعْبُدُوْنَ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ حَصَبُ جَهَنَّمَ ؕ ك

इन्नकुम वमा ताऽबोदूना मिन दूनिल्लाहे हसबो जहन्नमा ।

अर्थात् तुम और तुमहारे उपास्य जो मनुष्य हो कर ख़ुदा कहलाते रहे नरक में डाले जाएंगे ।

(2) नरक का दूसरा ईंधन बुत हैं । तात्पर्य यह है कि यह वस्तुएं न होती तो नरक भी न होता । अत: इन समस्त आयतों से स्पष्ट है कि ख़ुदा तआला के पवित्र कथन में बहिश्त और दोज़ख़ इस भौतिक संसार की तरह नहीं है अपितु इन दोनों का स्रोत और उद्गम स्थान आध्यात्मिक तथ्य है । इतना अवश्य है कि वे वस्तुएं दूसरी दुनिया में शारीरिक रूप में दीखेगी किन्तु इस भौतिक जगत में नहीं होंगी ।

अल्लाह तआला से सम्पूर्ण रूहानी सम्बंध स्थापित करने का साधन

अब हम पुन: पूर्व विषय की ओर लौट कर कहते हैं कि ख़ुदा तआला के साथ आध्यात्मिक एवं पूर्ण सम्बन्ध पैदा होने का साधन जो पवित्र क़ुर्आन ने हमें सिखलाया है इस्लाम और ''फ़ातेहा'' की दुआ है । अर्थात् प्रथम यह कि अपने सम्पूर्ण जीवन को ख़ुदा के मार्ग में समर्पण कर देना तथा दूसरा यह कि उस प्रार्थना में लगे रहना जो सूर: फातेहा में मुसलमानों को सिखाई गई है । सम्पूर्ण इस्लाम का तत्व ये दोनों वस्तुएं हैं । 'इस्लाम' और 'फ़ातेहा' की प्रार्थना । संसार में ख़ुदा तक पहुंचने और वास्तविक मोक्ष का शीतल जल पीने के निमित्त यही एक उत्तम साधन है । अपितु यही एक वह साधन है जो प्राकृतिक विधान से मानव की चरम उन्नति तथा ख़ुदा प्राप्ति के लिए निश्चित् किया है और वही लोग ख़ुदा को पाते हैं जो इस्लाम के अर्थ की रूहानी आग में प्रवेश हों और जो फ़ातेहा की दुआ में ध्यान मग्न रहते हैं ।

ك الانبياء : ٩٩

इस्लाम क्या है ? वही प्रज्वलित अग्नि जो हमारे पाशविक और नीच जीवन को भस्म करके और हमारे झूठे उपास्य देवों को जला कर सत्य और पावन उपास्य के आगे हमारे प्राण, धन तथा हमारी प्रतिष्ठा और मान मर्यादा की बलि दे देती है । ऐसे स्रोत (चश्मा) में प्रवेश करके हम एक नवीन जीवन का जल पीते हैं और हमारी समस्त आध्यात्मिक शक्तियाँ ख़ुदा के साथ ऐसी जुड़ती हैं जैसे एक रिश्ता दूसरे रिश्ते से जोड़ा जाता है । बिजली की आग की तरह एक अग्नि हमारे भीतर से निकलती है और एक अग्नि ऊपर से हम पर उतरती है । इन दोनों लपटों के संयोग से हमारी समस्त आकांक्षाओं- काम क्रोध, मद मोह, लोभ अहंकार आदि- तथा ख़ुदा के अतिरिक्त दूसरी चीज़ों की मोहब्बत भस्म हो जाती है और तब हम अपने पहले जीवन से मर जाते हैं। इस अवस्था का नाम पवित्र क़ुर्आन के अनुसार इस्लाम है । इस्लाम से हमारे मानसिक विकारों को मौत आती है तथा दुआ से हम नए सिरे से जीवित होते हैं इस दूसरे जीवन के लिए अल्लाह के इल्हाम (ईशवाणी) की आवश्यकता है। इस श्रेणी पर पहुँचने का नाम ''लेक़ाए इलाही'' है अर्थात् ख़ुदा का मिलन और उस के दर्शन । इस स्थान पर पहुँच कर मनुष्य का ख़ुदा के साथ ऐसा मिलाप होता है मानों वह उस को आंख से देखता है । उसे अलौकिक बल का वरदान मिलता है और उस की समस्त इन्द्रियां तथा सम्पूर्ण भीतरी शक्तियां निखर उठती हैं तथा उसके पवित्र जीवनाकर्षण में तीव्रता आ जाती है । इसी अवस्था पर आकर ख़ुदा मनुष्य के नेत्र बन जाता है जिनके साथ वह देखता है। उस की वाणी हो जाता है जिस के साथ वह बोलता है । वह हाथ हो जाता है जिसके साथ वह आक्रमण करता है, और कान हो जाता है जिस के साथ वह सुनता है और पैर हो जाता है जिस के साथ वह चलता है । ख़ुदा के इस पवित्र कथन में इसी तथ्य की ओर संकेत है :-

يَدُ اللّٰهِ فَوْقَ اَيْدِيْهِمْ [1]

यदुल्लाहे फ़ौक़ा ऐदीहिम ।

यह उस का हाथ ख़ुदा का हाथ है जो उन के हाथों पर है । इसी प्रकार

---

[1] الفتح : 11

फरमाता है :-

وَمَا رَمَيْتَ إِذْ رَمَيْتَ وَلٰكِنَّ اللّٰهَ رَمٰى ؕ ١؎

वमा रमैता इज़ रमैता व ला किन्नल्लाहा रमा ।

अर्थात् जो तू ने चलाया, तू ने नहीं अपितु ख़ुदा ने चलाया।

सारांश यह कि इस अवस्था में ख़ुदा के साथ सम्पूर्ण सम्पर्क स्थापित हो जाता है । ख़ुदा की पावन इच्छा आत्मा के कण-कण में समा जाती है तथा वे चारित्रिक अवस्थायें जो दुर्बल थीं, इस अवस्था में पहुंच कर सुदृढ़ पर्बतों की भांति अटल दिखाई देने लगती हैं । बुद्धि और विचार शक्ति अति तीक्ष्ण हो जाती है । इस कथन का यह अर्थ है । जो अल्लाह तआला फ़रमाता है :-

وَ اَيَّدَهُمْ بِرُوْحٍ مِّنْهُ ؕ ٢؎

व अय्यदहुम बेरूहिम्मिन हो ।

इस स्थिति में प्रेम और मुहब्बत की नहरें इस प्रकार ठाठें मारती हैं कि ख़ुदा के लिए मरना और ख़ुदा के लिए सहस्रों कष्ट सहन करना तथा अपमानित होना ऐसा सरल हो जाता है जैसे एक साधारण तिनके का तोड़ना । ऐसा बन्दा ख़ुदा की ओर खिंचा चला जाता है । और नहीं जानता कि कौन खींच रहा है । एक न दिखाई देने वाला हाथ उसे उठाये फिरता है । ख़ुदा की इच्छाओं को पूरा करना उस के जीवन का मूलोद्देश्य हो जाता है । इस अवस्था में ख़ुदा अति निकट दिखाई देता है जैसा कि उस ने फ़रमाया है :-

نَحْنُ اَقْرَبُ اِلَيْهِ مِنْ حَبْلِ الْوَرِيْدِ ۝ ٣؎

नहनो अक़रबो इलैहे मिन हबलिल् वरीद

कि हम उससे उसकी जान की रग (प्राणनलिका) से भी अधिक निकट हैं। ऐसी स्थिति में इस श्रेणी का व्यक्ति ऐसा होता है कि जिस प्रकार फल पक कर स्वंयमेव वृक्ष पर से गिर जाता है । उसी प्रकार इस श्रेणी के मनुष्य के समस्त मायावी सम्बन्ध टूट जाते हैं । उस का अपने ख़ुदा से सम्बन्ध घनिष्ठ हो जाता है । वह संसार से बहुत दूर चला जाता है और ख़ुदा से उसका वार्तालाप

 ١؎ الانفال: ١٨ ٢؎ المجادلة: ٢٣ ٣؎ قٓ: ١٧

प्रारम्भ हो जाता है ।

इस पदवी की उपलब्धि के लिए अब भी द्वार खुले हुए हैं जैसे कि पहले खुले थे और अब भी ख़ुदा की विशेष कृपा जिज्ञासुओं और खोजने वालों को यह पूरस्कार देती है जैसा कि पहले देती थी । किन्तु यह पदवी केवल ज़बान की व्यर्थ बातों से प्राप्त नहीं होती और केवल निस्सार लम्बी चौड़ी बातों से यह द्वार नहीं खुलता। चाहने वाले बहुत हैं किन्तु पाने वाले कम । इस का क्या कारण है ? यही कि यह पदवी सच्ची तपस्या एवं सच्चे परिश्रम पर आधारित है। कियामत तक कोरी बातें हांकते रहो, इस से क्या हो सकता है? इस अग्नि में शुद्ध हृदय से पग रखना- जिस के भय से अन्य लोग दूर भागते हैं- इस मार्ग की पहली शर्त है । यदि क्रियाशीलता नहीं तो गप्पें मारना व्यर्थ है । इस विषय में अल्लाह का कथन है :-

وَاِذَا سَاَلَكَ عِبَادِیْ عَنِّیْ فَاِنِّیْ قَرِیْبٌ اُجِیْبُ دَعْوَةَ الدَّاعِ اِذَا دَعَانِ فَلْیَسْتَجِیْبُوْالِیْ وَلْیُؤْمِنُوْا بِیْ لَعَلَّهُمْ یَرْشُدُوْنَ ۔ لـه

व इज़ा सअलका इबादी अन्नी फ़इन्नी क़रीब । उजीबो दाअवतद्दाए इज़ादआनि । फ़लयस्तजीबूली वल योऽमेनूबी लअल्लाहुम यर्शोदून ।

अर्थात् मेरे बन्दे यदि मेरे विषय में प्रश्न करें कि वह कहां हैं ? तो उन को कह कि वह तुम से बहुत ही निकट है । मैं दुआ करने वालों की दुआ को सुनता हूँ । अतः उन्हें चाहिये कि दुआओं से मेरा दर्शन और मेरा सामीप्य खोजें और मुझ पर ईमान लाए ताकि सफल हो जायें ।

*****

لـه البقرة : ۱۸۷

प्रश्न नं. 2

पूछे गए प्रश्नों में से यह है कि

मृत्यु के पश्चात् मनुष्य की क्या दशा होती है ?

इस प्रश्न के उत्तर में निवेदन है कि मृत्यु के पश्चात् जो कुछ मनुष्य की दशा होती है, वास्तव में वह कोई नवीन दशा नहीं होती प्रत्युत वही सांसारिक जीवन की अवस्थायें अधिक स्पष्ट रूप से खुल जाती हैं । जो कुछ मनुष्य के विश्वास और कर्मों की अच्छी अथवा बुरी स्थिति होती है वह इस लोक में गुप्त रूप में उस के भीतर होती है और उसका अर्मत अथवा ज़हर गुप्त रूप में प्रभाव मानवीय शरीर पर डालता है किन्तु आने वाले लोक में ऐसा नहीं रहेगा, अपितु वे सभी स्थितियां स्पष्ट रूप से खुला खुला अपना रूप दिखायेंगी । इस का प्रतिरूप स्वप्नावस्था में पाया जाता है कि मनुष्य के शरीर पर जिस प्रकार के विकार अपना आतंक जमाये रहते हैं, स्वप्न जगत में उसी प्रकार की स्थूल और शारीरिक स्थितियां दीखती होती हैं । जब कोई तीव्र ज्वर चढ़ने को होता है तो स्वप्न में प्राय: अग्नि की लपटें दिखाई देती हैं । और बलग़मी ज्वरों, नज़ला, ज़ुकाम तथा रेशा के आक्रमण में मनुष्य अपने को जल में देखता है । अस्तु जिस प्रक़ार के रोगों के लिये शरीर ने तैयारी की हो, वही दशा स्वप्नवस्था में प्रतिबिम्बित हो जाती है । अत: स्वप्न की दशा पर विचार करने से प्रत्येक मनुष्य समझ सकता है कि दूसरी दुनिया में भी यही ख़ुदा का विधान है क्योंकि जिस प्रकार स्वप्न हम में एक विशेष परिवर्तन लाकर आत्मिक सूक्ष्मता को (रोहानियत) को जिसमानी रंग में बदल कर दिखलाता है । ऐसा ही उस लोक में भी होगा । उस दिन हमारे कर्म और उन के फल शारिरिक रूप में प्रकट होंगे और जो कुछ हम इस लोक से गुप्त रूप में साथ ले जायेंगे वह सब उस दिन

हमारे मुख पर चित्रावली दिखाई देगा । जैसा कि मनुष्य जो कुछ स्वप्नावस्था में भांति भांति की चित्रवलि देखता है और यदाकदा वह उन्हें अवास्तविक रूप में नहीं अपितु उन्हें वास्तविक वस्तुएं समझ कर उन पर पूर्ण विश्वास कर लेता है, वैसा ही उस लोक में होगा अपितु ख़ुदा रूपकों के द्वारा अपनी नवीन शक्ति और नवीन सत्ता प्रदर्शित करेगा । चूंकि वह सर्वरूप सम्पूर्ण शक्ति है अत: यदि हम रूपकों का नाम भी न लें और यह कहें कि वह ख़ुदा की लीला से एक नवीन उत्पत्ति है तो यह कहना सर्वथा उचित, शुद्ध और ठीक है, ख़ुदा का पवित्र कथन है :-

فَلَا تَعْلَمُ نَفْسٌ مَّا اُخْفِيَ لَهُمْ مِّنْ قُرَّةِ اَعْيُنٍ ۚ¹

फ़ला तऽलमो नफ़सुम्मा उख़्फ़िया लहुम मिन कुर्रते आअयोनिन ।

अर्थात् कोई भी भलाई करने वाला व्यक्ति यह नहीं जानता कि वे क्या-क्या पुरस्कार हैं जो उसके लिए गुप्त हैं । सो ख़ुदा ने उन समस्त पुरस्कारों को गुप्त रूप प्रदान किया जिन की इस लोक में कोई उपमा नहीं । यह तो स्पष्ट है कि संसार के पुरस्कार हम से छिपे हुए और गुप्त नहीं हैं, । दूध, अनार, अंगूर आदि को हम जानते हैं और सदैव यह वस्तुएं खाते हैं । अत: इस से विदित हुआ कि वे पदार्थ इन से भिन्न हैं और उन पदार्थों की इन वस्तुओं से केवल नाम की समानता है । अतएवं जिस ने बहिश्त को संसार की वस्तुओं का ढेर समझा, उस ने पवित्र क़ुर्आन का एक अक्षर भी नहीं समझा ।

इस आयत की व्याख्या में जिस का अभी मैंने उल्लेख किया है हमारे परम प्रिय पैग़म्बरे इस्लाम हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहो अलैहि वसल्लम का फ़रमान है कि बहिश्त और उस के स्वादिष्ट पदार्थ वह चीज़ें हैं जो न कभी किसी नेत्र ने देखी हैं और न किसी कान ने सुनीं और न ही हृदय उसकी कल्पना कर सकता है। यद्यपि हम संसार में ख़ुदा की दी हुई वस्तुओं (नेअमतों) को नेत्रों से देखते हैं और कानों से सुनते हैं तथा हृदय में भी वह नेमअतें गुज़रती हैं। अत: जबकि ख़ुदा और उस का रसूल उन पदार्थों को सर्वथा अनोखी वस्तुएं बताता है तो

¹ السجدة: ١٨

हम पवित्र क़ुर्आन से दूर जा पड़ते हैं जब यह विचार करते हैं कि बहिश्त में भी इस संसार का ही दूध होगा जो गायों और भैंसों से दुहा जाता है । मानो दूध देने वाले पशुओं के वहां रेवड़ के रेवड़ मौजूद होंगे और वृक्षों पर मधुमक्खियों ने बहुत से छत्ते लगाये हुए होंगे और फरिश्ते ढूँढ-ढूँढ कर उनसे मधु निकालेंगे और नहरों में डालेंगे । क्या इन विचारों का उस शिक्षा से कोई सम्बन्ध है जो इन आयतों में विद्यमान है कि संसार ने उन वस्तुओं को कभी नहीं देखा । वे पदार्थ आत्मा को रौशन करते हैं और ख़ुदा की पहचान में वृद्धि करते हैं जो आध्यात्मिक भोजन है यद्यपि उन भोजनों का सम्पूर्ण चित्र जाहरी रंग में दर्शाया गया है । किन्तु साथ ही साथ यह भी बताया गया है कि उस का उद्गम स्थान आत्मा और सत्यता है ।

कोई यह न समझे कि पवित्र क़ुर्आन के निम्नलिखित कथन में यह पाया जाता है कि जो नेअमतें बहिश्त में दी जाएंगी उन नेअमतों को देख कर बहिश्ती लोग उनको पहचान लेंगे कि ये पुरस्कार और आनन्ददायक पदार्थ हमें पहले भी मिले थे । जैसा कि अल्लाह तआला फ़रमाता है :-

وَبَشِّرِ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ اَنَّ لَهُمْ جَنّٰتٍ تَجْرِيْ
مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ ؕ كُلَّمَا رُزِقُوْا مِنْهَا مِنْ ثَمَرَةٍ رِّزْقًا ۙ قَالُوْا هٰذَا
الَّذِيْ رُزِقْنَا مِنْ قَبْلُ وَاُتُوْا بِهٖ مُتَشَابِهًا ؕ له

व बश्शेरिल्लज़ीना आमनू व अमिलुस्स्वालेहाते अन्नालहुम जन्नातिन तजरी मिन तहतेहलअनहारो कुल्लमा रोज़ेक़ू मिनहा मिन समरतिर्रिज़क़न कालू हाज़ल्लज़ी रोज़िक़्ना मिन क़ब्लो व ओतूबेही मुतशाबेहा ।

अर्थात् जो लोग दृढ़ विश्वासी और ईमान लाने वाले एवं सत्कर्म करने वाले हैं और जिन में लेशमात्र भी कमी नहीं, उन्हें शुभसूचना दे दो कि वे उस बहिश्त के वारिस हैं जिस के अन्दर नहरें बहती हैं । जब वे दूसरी दुनियां में

له البقرة : ٢٦،

उन वृक्षों के उन फलों में से जो इस सांसारिक जीवन में ही उन को मिल चुके थे, पायेंगे तो कहेंगे कि यह तो वे फल हैं जो हमें पहले ही दिये गये थे क्योंकि वे लोग उन फलों को उन पहले फलों के अनुरूप ही पायेंगे । अब यह धारणा कि पहले फलों से तात्पर्य संसार की भौतिक नेअमतें हैं, बड़ी भारी भूल है तथा आयत के स्पष्ट अर्थ तथा भाव के सर्वथा विपरीत है । अपितू अल्लाह का इस आयत में यह कथन है कि जिन्हों ने विश्वास को दृढ़ किया और ईमान लाये तथा सत्कर्म किए उन्होंने अपने हाथों से एक बहिश्त का निर्माण किया है, जिसके वृक्ष ईमान और विश्वास और जिसकी नहरें सत्कर्म हैं । इसी स्वर्ग का वे दूसरी दुनिया में भी फल भोगेंगे । और वह फल अधिक स्पष्ट तथा मीठा होगा । और चूंकि वे आध्यात्मिक क्षेत्र में इसी फल को इसी संसार में खा चुके होंगे इस लिए दूसरे जगत में उस फल को पहचान लेंगे और कहेंगे कि ये तो वही फल मालूम होते हैं जो कि पहले हमारे खाने में आ चुके हैं । वे इन फलों को उस पहले भोजन के अनूरूप पायेंगे । अत: यह आयत स्पष्ट रूप से बता रही है कि जो लोग संसार में अल्लाह के प्रेम का भोजन खाते थे, अब शारीरिक रूप में वही भोजन उन्हें मिलेगा और चूंकि वे लोग प्रेम का मज़ा चख चुके थे तथा इसकी वास्तविकता से परिचित थे इसलिए उनकी आत्मा को वह युग याद आ जाएगा जब वे एकांत में और अलग बैठ कर और रात्रि के अन्धकारमय नीरव और शांतमय क्षणों में प्रेम पूर्वक अपने परम प्रिय अल्लाह का स्मरण करते और उस स्मरण से आनन्द भोग करते थे । कहने का तात्पर्य यह कि इस स्थान पर शारीरिक या भौतिक स्थूल भोजनों की कोई चर्चा नहीं । यदि किसी के हृदय में यह विचार उत्पन्न हो कि जब कि आत्मिक रूप में आरिफ़ों (ख़ुदा की पहचान रखने वालों) को यह भोजन संसार में मिल चुका था तो फिर यह कहना कैसे उचित हो सकता है कि वे ऐसे पुरस्कार हैं कि जिन्हें न संसार में किसी ने देखा और न किसी ने सुना और न किसी के हृदय में उन का संचार हुआ । इस स्थिति में इन दोनों आयतों में विरोध पाया जाता है तो इस का उत्तर यह है कि विरोध उस दशा में होता कि जब इस आयत में संसार के

पदार्थ भौतिक पुरस्कार अभीष्ट होते । परन्तु इस स्थान पर सांसारिक भौतिक पदार्थ अभीष्ट नहीं है, जो कुछ आरिफ़ (ख़ुदा की पहचान रखने वाले को) ख़ुदा की पहचान के रूप में मिलता है, वह वास्तव में दूसरी दुनिया की नेमतें (वरदान) होती हैं जिसका कुछ नमूना उन्हें अधिक उत्तेजित और प्रोत्साहित करने के लिए पहले ही दिया जाता है ।

स्मरण रखना चाहिए कि ख़ुदा वाला इन्सान संसार के लोगों में से नहीं होता । इसीलिये तो संसार उस से ईर्ष्या रखता है, अपितु वह तो आसमान से होता है । इसीलिये आसमानी पुरस्कार उसे मिलते हैं । संसार का मनुष्य सांसारिक पुरस्कार पाता है और आसमानी व्यक्ति पारलौकिक पुरस्कारों को प्राप्त करता है । अत: यह सर्वथा सत्य है कि वे पदार्थ और पुरस्कार संसार के कानों और संसार के हृदयों तथा सांसारिक नेत्रों से गुप्त रखे गए हैं । किन्तु जिस के सांसारिक जीवन पर मृत्यु आ जाये और वह अमृत का प्याला उसे सूक्ष्म रूप (आध्यात्मिक रूप) में पिलाया जाए जो दूसरी दुनिया में स्थूल रूप में उसे पिलाया जायेगा । उस को यह अमृतपान उस समय याद आ जाएगा जब कि वही प्याला स्थूल में उसे दिया जाएगा । किन्तु यह भी सत्य है कि वह उस पुरस्कार से सांसारिक नेत्रों और कानों आदि को सर्वथा बे ख़बर समझेगा । चूंकि वह संसार में था, यद्यपि संसार से उस का कोई सम्बन्ध नहीं था, तथापित वह भी गवाही देगा कि संसार के पुरस्कारों में से वह पुरस्कार नहीं । न संसार में उसके नेत्रों ने ऐसा पुरस्कार देखा, न कानों ने सुना और न ही हृदय में उसका अनुभव हुआ परन्तु दूसरे जीवन में उस के नमूने देखे जो संसार में से नहीं थे बल्कि वह आने वाले संसार की एक सूचना थी और उसी से उसका सम्बन्ध था संसार से कुछ सम्बन्ध नहीं था ।

आलमे आख़रत (परलोक) के तीन क़ुर्आनी रहस्य

अब सैद्धान्तिक माप दण्ड के रूप में यह बात भी स्मरण रखनी चाहिए कि मृत्योपरांत जिन स्थितियों से सम्बन्ध पड़ता है, पवित्र क़ुर्आन ने उन्हें तीन

भागों में बांटा है । और आलमे आखरत (परलोक) के विषय में पवित्र क़ुर्आन ने तीन गूढ़ रहस्य बताए हैं जिन की चर्चा हम पृथक्-पृथक् करते हैं :-

पहला रहस्य

यह है जिस के विषय में पवित्र क़ुर्आन बार बार फरमाता है कि आलमे आख़रत कोई नवीन वस्तु नहीं है अपितु इस के सभी दृश्य इसी सांसारिक जीवन का प्रतिबिम्ब और प्रतिछाया हैं जैसा कि वहफरमाता है :-

وَكُلَّ اِنْسَانٍ اَلْزَمْنٰهُ طٰٓئِرَهٗ فِيْ عُنُقِهٖ وَنُخْرِجُ لَهٗ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ كِتٰبًا يَّلْقٰهُ مَنْشُوْرًا ○ [1]

वकुल्ला इन्सानिन अलज़म्नाहो ताएराहू फ़ी ओनोक़ेही । व नुख़रेजो लहू यौमल क़ियामते किताबय यलक़ाहो मनशूरा ।

अर्थात् हमने इसी संसार में प्रत्येक के कर्मों का प्रभाव उस की गर्दन से बांध रखा है और इन्हीं गुप्त प्रभावों को हम क़ियामत के दिन दर्शायें गे और एक स्पष्ट कर्म सूची के रूप में दिखा देंगे ।

इस आयत में जो 'तायर' का शब्द है उस के विषय में विदित होना चाहिये कि 'तायर' वास्तव में पक्षी को कहते हैं । इस के अतिरिक्त यह रूपक भी हैं । जिस का मतलब कर्म भी होता है क्योंकि प्रत्येक कर्म चाहे वह सत्कर्म हो अथवा दुष्कर्म वह सम्पन्न होने के पश्चात् पक्षी के प्रकार उड़ जाता है तथा उसका श्रम एवं आनन्द समाप्त हो जाता है और हृदय पर उसकी ग्लानता या प्रसन्नता शेष रह जाती है ।

यह क़ुर्आन का मत है कि प्रत्येक कर्म गुप्त रूप से अपना चिन्ह जमाता रहता है । मनुष्य का जिस प्रकार का कर्म होता है उस के अनुसार ख़ुदा तआला की ओर से एक प्रतिक्रिया होती है और वह प्रतिक्रिया उस पाप को अथवा उस के पुण्य को नष्ट नहीं होने देती ! अपितु उसके चिन्ह हृदय पर, मुख पर, नेत्रों पर कानों पर, हाथों पर और पैरों पर लिखे जाते हैं । और यही

---

[1] بنی اسرائیل: ۱۴
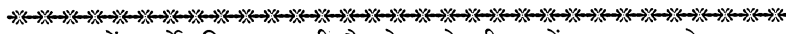
गुप्त रूप में कर्मों की एक सूची है जो दूसरे जीवन में स्पष्ट रूप से व्यक्त हो जाएगी ।

इस के अतिरिक्त एक अन्य स्थान पर जन्नती लोगों के विषय में फ़रमाता है :-

يَوْمَ تَرَى الْمُؤْمِنِينَ وَالْمُؤْمِنَاتِ يَسْعَىٰ نُورُهُم
بَيْنَ أَيْدِيهِمْ وَبِأَيْمَانِهِم [1]

यौमा तरलमोऽमीनीना वल मोऽमेनाते यसआ नूरोहुम बैना ऐदीहिम् व बे ऐमानेहिम् ।

अर्थात् उस दिन भी ईमान की ज्योति जो अव्यक्त रूप में मोमिनों को प्राप्त है व्यक्त रूप में उनके आगे और उन के दाएँ हाथ पर दौड़ती नज़र आएगी!

पुनः एक स्थान पर पथभ्रष्ट, और बदकारों को संबोधन करके फ़रमाता है :-

أَلْهَاكُمُ التَّكَاثُرُ ۝ حَتَّىٰ زُرْتُمُ الْمَقَابِرَ ۝ كَلَّا سَوْفَ
تَعْلَمُونَ ۝ ثُمَّ كَلَّا سَوْفَ تَعْلَمُونَ ۝ كَلَّا لَوْ تَعْلَمُونَ عِلْمَ
الْيَقِينِ ۝ لَتَرَوُنَّ الْجَحِيمَ ۝ ثُمَّ لَتَرَوُنَّهَا عَيْنَ الْيَقِينِ ۝
ثُمَّ لَتُسْأَلُنَّ يَوْمَئِذٍ عَنِ النَّعِيمِ ۝ [2]

अलहाकोमुत्कासोरो हत्ता ज़ुर्तुमुल् मक़ाबेरा । कल्ला सौफ़ातालमूना सुम्माकल्ला सौफ़ा तालमूना । कल्ला लौतालमूना इल्मुलयक़ीन । लतरवुन्नल् जहीम । सुम्मा ल तरवुन्ना हा ऐनल् यक़ीन । सुम्मा लतुसअलुन्ना यौम एज़िन अनिन्नईम ।

अर्थात् सांसारिक माया मोह की अधिकता ने तुम्हें आखरत (परलोक) की खोज से रोक रखा है । यहां तक कि तुम कब्रों में जा पड़े दुनिया से दिल

---

[1] الحديد : ۱۳ [2] التكاثر

मत लगाओ । तुम्हें शीघ्र ही विदित हो जाएगा कि संसार से मन लगाना अच्छा नहीं । पुनः मैं कहता हूं कि निकट के भविष्य में तुम्हें विदित हो जायेगा कि संसार से मन लगाना अच्छा नहीं । यदि तुम्हारे पास निर्णयात्मक ज्ञान-शक्ति है तो तुम नरक को इसी जीवन में देख लोगो । पुनः बरज़ख[1] में जाकर अपनी निश्चयात्मक दृष्टि से देख लोगे । पुनः कियामत में सूक्ष्म उत्पत्ति होने पर पूर्ण रूप से पकड़ में आ जाओगे ! तत्पश्चात् भयानक प्रकोप की मार तुम पर पड़ेगी। केवल मौखिक नहीं अपितु यथार्थ रूप में प्रत्यक्षरूप में तुम्हें दोज़ख का पूरा पूरा ज्ञान प्राप्त हो जाएगा ।

ज्ञान की तीन शाख़ायें

इन आयतों में अल्लाह तआला ने स्पष्ट रूप से फ़रमा दिया है कि दुष्टों के लिये इसी जगत में जहन्नमी जीवन अव्यक्त रूप में होता है और यदि वे इस पर विचार करें तो अपने जहन्नम को इसी लोक में देख लेंगे और इस स्थान पर अल्लाह तआला ने ज्ञान को निम्नलिखित तीन भागों में विभक्त किया है अर्थात

इल्मुल यक़ीन (अनुमान द्वारा निश्चय करना)

ऐनुल यक़ीन (आंख से साक्षात् देख कर निश्चय करना)

हक्कुल यक़ीन (स्वयं स्पर्श करके निश्चय करना) ।

और जन साधारण के समझने के लिये इन तीनों प्रकार के ज्ञानों के यह निम्नलिखित उदाहरण हैं :-

जैसे यदि एक व्यक्ति दूर से किसी स्थान पर एक बहुत बड़ा धुंआँ देखे तथा उस धुएँ से ध्यान हट कर आग की ओर परिवर्तित हो जाये, और अग्नि का होना निश्चय जाने और इस विचार से, कि धुआं और अग्नि में अटूट सम्बन्ध है (और आदि काल से यह सम्बन्ध चला आ रहा है,) कि जहां धुआं होगा वहां

[1] मरने और दुबारा जी उठने के बीच की स्तिथी ।

अग्नि अवश्य होगी । अत: इस ज्ञान का नाम 'इल्मुलयक़ीन' है (अर्थात् अनुमान द्वारा निश्चय करना) । तत्पश्चात् जब अग्नि के अंगारे और लपटें दिखाई देने लगें तो उस ज्ञान नाम 'ऐनुलयक़ीन' है (अर्थात् नेत्रों से देख कर निर्णय पर पहुंच जाना,) और जब उस अग्नि में प्रवेश करके उसकी उष्णता और जलन अनुभव करे तो उस ज्ञान का नाम 'हक़्क़ुलयक़ीन' (अर्थात् स्वयं स्पर्श करके और परीक्षण करके निश्चय प्राप्त करना कहलाता है ।)

अब अल्लाह तआला का कथन है कि जहन्नुम की सत्ता का अनुमानित ज्ञान तो इसी संसार में हो सकता है । फिर बरज़ख में नेत्रों से देख कर साक्षात् रूप से भी ज्ञान प्राप्त होगा तथा दूसरी दुनिया में वही ज्ञान हक्कुल यकीन के सम्पूर्ण दरज: तक पहुंचेगा ।

तीन लोक

इस स्थान पर विदित होना चाहिये कि पवित्र क़ुर्आन की शिक्षा के अनुसार तीन लोक सिद्ध होते हैं ।

प्रथम यह संसार जिसका नाम कर्मलोक है और जो सृष्टि का आदि है । इसी लोक में मनुष्य पुण्य अथवा पाप कमाता है और यद्यपि पारलौकिक जीवन में नेक लोगों के लिए उन्नतियां हैं किन्तु वह केवल ख़ुदा की कृपा से है । मानव कें कर्मों का उस में कोई अधिकार नहीं ।

दूसरे लोक का नाम ''बर्ज़ख़'' है । वास्तव में 'वर्ज़ख़' शब्द अरबी भाषा में उस वस्तु को कहते हैं जो दो वस्तुओं के मध्य में स्थित हो । चूंकि यह काल पारलौकिक जीवन काल तथा आदि सृष्टि के आरम्भ के मध्य में स्थित है । इस लिये इस का नाम 'बर्ज़ख' है । किन्तु यह शब्द प्राचीनकाल से जब से सृष्टि की नींव पड़ी, मध्य लोक के लिए प्रयुक्त हुआ है । अत: इस शब्द में मध्यलोक की सितित्व पर एक महान गवाही छुपी हुई है । हम 'मिननुर्रहमान' (लेखक की एक पुस्तक) में सिद्ध कर चुके हैं कि अरबी के शब्द वे शब्द हैं जो ख़ुदा के मुख से निकले हैं और विश्व में यही एकमात्र भाषा है जो पवित्र ख़ुदा की भाषा

तथा प्राचीन एवं समस्त ज्ञान-विज्ञान का स्रोत और समस्त भाषाओं की जननी और पवित्र ख़ुदा की वाणी का प्रथम और अन्तिम सिंहासन है । पवित्र ख़ुदा की वाणी का प्रथम सिंहासन इस लिये कि समस्त अरबी भाषा ख़ुदा की वाणी थी जो प्राचीन काल से ख़ुदा के साथ थी । पुन: वही पवित्रवाणी संसार में अवतरित हुई और संसार ने उस से अपनी बोलियां और भाषायें बनाईं । अन्तिम सिंहासन ख़ुदा का इस लिये अरबी भाषा ठहरी कि आख़री किताब ख़ुदा तआला की जो क़ुर्आन शरीफ़ है अरबी में उतरी ।

अत: 'बर्ज़ख' अरबी शब्द है जो 'ज़ख़' और 'बर' के संयोग से बना है । जिस का अर्थ यह है कि क्रमों के कमाने का ढंग समाप्त हो गया और एक गुप्त अवस्था में पड़ गया । 'वर्ज़ख़' की दशा वह दशा है जब कि यह नाशवान मानव पंजर अस्त-व्यस्त हो जाता है । शरीर और आत्मा पृथक्-पृथक् हो जाते हैं, तथा जैसा कि देखा गया है कि शरीर किसी गढ़े में डाल दिया जाता है और जीवात्मा भी एक प्रकार के गढ़े में पड़ जाती है ! जैसा कि 'ज़ख़' शब्द बतलाता है क्योंकि वह (जीवात्मा) सत्कर्म अथवा दुष्कर्म करने की उस प्रकार सामर्थ्य नहीं रखती जिस प्रकार शरीर के सम्पर्क के द्वारा उस से सम्पन्न हो सकते थे । यह तो स्पष्ट है कि हमारी आत्मा का उत्तम स्वास्थ्य शरीर पर निर्भर है । मस्तिष्क के एक विशेष भाग पर चोट लगने से स्मरण शक्ति जाती रहती है तथा दूसरे भाग पर चोट पड़ने से विचार और चेतना शक्ति चली आती है तथा समस्त होश-हवास समाप्त हो जाते हैं । और मस्तिष्क में जब किसी प्रकार की खिंचावट या तनाव आ जाए अथवा सूजन उत्पन्न हो जाए, रक्त अथवा अन्य पदार्थ रुक जाए और किसी कठोर अथवा नर्म ग्रन्थि को जन्म दे तो बेहोशी या मिर्गी अथवा मूर्छा आदि का शीघ्र ही आक्रमण हो जाता है अत: हमारा प्राचीन अनुभव हमें निश्चय रूप से सिखलाता है कि हमारी आत्मा बिना शारीरिक बन्धन के सर्वथा निकम्मी है । अत: हमारी यह सूझ और हमारी यह विचारण सर्वथा निस्सार और निरर्थक है कि किसी समय हमारी अकेली आत्मा जिस के साथ शरीर नहीं है, कोई आनन्नद भोग सकती है । यदि हम उसे कहानी के रूप

में स्वीकार करें तो करें किन्तु बुद्धि इस को कभी भी स्वीकार नहीं करेगी क्योंकि इस के साथ कोई बौद्धिक तर्क नहीं । हमारी समझ से यह तर्क सर्वथा बाहर है कि वह हमारी आत्मा जो शरीर के साधारण से साधारण विकारों से निकम्मी हो कर बैठ जाती है । वह उस दिन कैसे अपनी स्वस्थ और पूर्ण अवस्था में रहेगी जबकि शरीर के सम्बन्ध से वंचित कर दी जाए । क्या प्रतिदिन का अनुभव हमें नहीं बताता कि आत्मा के स्वास्थ्य के लिए शरीर का स्वस्थ होना आवश्यक है। जब हम में से एक व्यक्ति कपिल वृद्ध हो जाता है तो साथ ही उस की आत्मा भी वृद्ध हो जाती है । उस का समस्त ज्ञान बुढ़ापे का चोर चुरा कर ले जाता है। जैसा कि अल्लाहजल्ला शानोहू का पवित्र कथन है :-

لِكَيْلَا يَعْلَمَ مِنْ بَعْدِ عِلْمٍ شَيْئًا ۝ [1]

ले कैला याऽलमा मिम बादे इल्मिन शैअन ।

अर्थात् मनुष्य वृद्ध हो कर ऐसी अवस्था को पहुंच जाता है कि पढ़ लिख कर पुन: अज्ञानी बन जाता है । अत: हमारा अनुभव इस बात के लिये एक अकाट तर्क है कि आत्मा शरीर के बिना कोई चीज़ नहीं । यह विचार भी वास्तविक सत्यता की ओर मनुष्य का ध्यान अकर्षित कराता है कि यदि आत्मा शरीर के बिना कोई सत्ता रखती तो ख़ुदा तआला का यह कार्य व्यर्थ और निस्सार होता कि उसको अकारण ही फना होने वाले शरीर के साथ जोड़ देता । और यह भी विचारणीय है कि ख़ुदा तआला ने मनुष्य को असीम उन्नतियों के लिये उत्पन्न किया है । अत: जिस दशा में मनुष्य इस संक्षिप्त जीवन की उन्नतियों को बिना शारीरिक सम्बन्ध के प्राप्त नहीं कर सका तो किस प्रकार आशा करें कि असीम उन्नति को जो अपरिमित, और अपरम्पार है बिना शारीरिक सम्पर्क के स्वत: ही प्राप्त कर लेगा ।

अतएवं इन समस्थ तर्कों और प्रमाणों से यही सिद्ध होता है कि आत्मा के सम्पूर्ण कर्महोने के लिए इस्लामी सिद्धान्तों के अनुसार शरीर का सम्बंध रूह (आत्मा) के साथ सदा का है । यद्यपि मृत्यु (भौतिक देहावसान) के पश्चात् यह नाशवान् शरीर आत्मा से पृथक् हो जाता है तथापि बरज़ख़की दुनिया

---

[1] الحج: ٦

(परलोक) में प्रत्येक आत्मा को अपने कर्मों का यथोचित फल भोगने के लिये एक सूक्ष्म शरीर प्राप्त होता है। वह शरीर इस भौतिक शरीर की तरह नहीं होता बल्कि एक नूर से या अंधकार से जैसी कर्म की दशा हो शरीर तय्यार होता है। मानों उस संसार में पहुंच कर मनुष्य के कर्म ही शरीर का रूप धारण कर लेते हैं। एसा ही ख़ुदा की पवित्र वाणी क़ुर्आन में इसका अनेकों बार उल्लेख हुआ है। जहां कुछ शरीर नूरानी और कुछ अंधेरों से भरे हुए बताए गए हैं जो कर्मों की ज्योति अथवा कर्मो के अंधकार से तैयार होते हैं। यद्यपि यह एक अत्यन्त गूढ़ रहस्य है परन्तु अनुचित नहीं। पूर्णमानव इसी जगत में अपने भौतिक चोले में रहते हुए एक नूरानी अस्तित्व पा सकता है और कष्फ़ के संसार में इस की बहुत उदहारणें हैं। यह गूढ़ रहस्य ऐसे व्यक्ति को समझाना कठिन है जो केवल एक मोटी बुद्धि तक सीमित है परन्तु जिन को कष्फ़ के रूहानी संसार में से कुछ हिस्सा है। वे इस प्रकार के शरीर को जो कर्मों द्वारा निर्मित होता है- आश्चर्यजनक और बुद्धि से दूर नहीं समझेंगें अपितु इस विषय से उन्हें एक आनंद प्राप्त होगा।

अस्तु, वह शरीर जो कर्मों के अनुसार प्राप्त होता है वही बरज़ख़ की दुनिया में पुरस्कार अथवा दण्ड का कारण बन जाता है। मैं इस क्षेत्र का अनूभवी हूँ मुझे कष्फ़ी रूप की जाग्रतावस्था में कई बार कुछ मृतकों से भेंट करने का अवसर प्राप्त हुआ है और मैंने कुछ कुकर्मियों और पथभ्रष्टों का शरीर ऐसा काला देखा मानों उसका निर्माण धूम्र से हुआ है।

कहने का तात्पर्य यह कि मुझे स्वयं इस मार्ग की ज़ाती (व्यक्तिगत) जानकारी है और मैं स्पष्ट शब्दों में कहता हूँ कि जैसा कि ख़ुदा तआला ने फ़रमाया है वैसे ही मृत्यु के पश्चात् प्रत्येक को एक शरीर मिलता है। चाहे वह नूरानी हो अथवा अंधकारी। मनुष्य यदि इन गूढ़ रहस्यों को केवल अपनी बुद्धि के द्वारा साबित करना चाहे तो यह उसकी गल्ती होगी, बल्कि जानना चाहिए कि जिस प्रकार नेत्र किसी मिष्ठान का स्वाद नहीं बता सकते और न ही जिह्वा किसी वस्तु को देख सकती है। ठीक इसी प्रकार वह दूसरे संसार का ज्ञान जो

पवित्र कष्फ़ों से प्राप्त हो सकते हैं केवल बुद्धि के द्वारा उनकी समस्या हल नहीं हो सकती । ख़ुदा तआला ने इस जगत के ऐसे ही अनेकों रहस्यों को समझने के लिये नाना प्रकार के साधनों का निर्माण किया है । अतः प्रत्येक वस्तु को उसके उचित मार्ग और उसके उचित साधन से खोजो, तो तुम उस को पा लोगे।

एक और बात भी स्मरण रखने के योग्य है कि ख़ुदा ने उन लोगों को जो दुष्टता और पथभ्रष्टतामें पड़ गये, अपनी पवित्र वाणी में उन्हें मृतक की संज्ञा दी है और नेक लोगों को जीवित बताया है । इस में रहस्य यह है कि जो लोग ख़ुदा तआला से विमुख हो कर मरे हैं उनके जीवन के साधन जो खाना पीना और वासना की तृप्ति आदि थे समाप्त हो गए। चूंकि आध्यात्मिक भोजन का कोई भी अंश उन्होंने प्राप्त नहीं किया था । इस लिए उन पर आध्यात्मिक मौत आ गई । वे केवल दण्ड भोगने के लिये ज़िन्दा होंगे । इसी रहस्य की ओर अल्लाहजल्ला शानोहू ने संकेत किया है । जैसा कि उस का कथन है :-

مَنْ يَّأْتِ رَبَّهٗ مُجْرِمًا فَاِنَّ لَهٗ جَهَنَّمَ لَا يَمُوْتُ فِيْهَا
وَ لَا يَحْيٰى ۝ [1]

व मंय्याते रब्बाहू मुज्रेमन फ़ इन्ना लहू जहन्नमा ला यमूतो फ़ीहा व ला यह्या ।

अर्थात् जो व्यक्ति अपराधी बन कर अल्लाहजल्ला शानोहू के पास आयेगा तो उस का निवास नरक में होगा । वह उस में न मरेगा और न जीवित रहेगा । परन्तु जो लोग अल्लाहजल्ला शानोहू के प्रिय हैं वे मृत्यु से नहीं मरते क्योंकि उनका पानी और उनकी रोटी उनके साथ होती है । फ़िर बरज़ख के पश्चात् वह काल है जिस का नाम आलमे बअस (दोबारा जीवत करके उठाया जाना) उस काल में प्रत्येक जीवात्मा चाहे वह पापी हो अथवा नेक सत्कर्मी हो अथवा दुष्कर्मी एक सुस्पष्ट शरीर प्राप्त करेगी और यह दिन ख़ुदा के पूर्ण चमत्कार के लिये निश्चित किया गया है । जिस में प्रत्येक व्यक्ति अपनेपालन कर्ता के अस्तित्व से पूर्ण रूप से परिचित हो जाएगा । और प्रत्येक व्यक्ति अपने बदला के आख़री बिन्दु तक पहुँचेगा । इसमें आश्चर्य नहीं करना चाहिये कि

---

[1] طٰهٰ : ٧٥

ख़ुदा से यह कैसे हो सकेगा ? क्योंकि वह प्रत्येक शक्ति का स्वामी है जो चाहता है करता है । जैसा कि वह स्वंय फ़रमाता है:-

أَوَلَمْ يَرَ الْإِنْسَانُ أَنَّا خَلَقْنَاهُ مِنْ نُطْفَةٍ فَإِذَا هُوَ خَصِيمٌ مُبِينٌ ۝ وَضَرَبَ لَنَا
مَثَلًا وَنَسِيَ خَلْقَهُ قَالَ مَنْ يُحْيِي الْعِظَامَ وَهِيَ رَمِيمٌ ۝ قُلْ يُحْيِيهَا الَّذِي
أَنْشَأَهَا أَوَّلَ مَرَّةٍ وَهُوَ بِكُلِّ خَلْقٍ عَلِيمٌ ۝ [1]

أَوَلَيْسَ الَّذِي خَلَقَ السَّمَاوَاتِ وَالْأَرْضَ بِقَادِرٍ عَلَىٰ أَنْ يَخْلُقَ
مِثْلَهُمْ بَلَىٰ وَهُوَ الْخَلَّاقُ الْعَلِيمُ ۝ إِنَّمَا أَمْرُهُ إِذَا أَرَادَ شَيْئًا أَنْ يَقُولَ
لَهُ كُنْ فَيَكُونُ ۝ فَسُبْحَانَ الَّذِي بِيَدِهِ مَلَكُوتُ كُلِّ شَيْءٍ
وَإِلَيْهِ تُرْجَعُونَ ۝ [2]

अवलम यरल् इन्सानो अन्ना ख़लक़्नाहो मिन् नुत्फ़तिन फ़ इज़ होवा ख़सीमुम्मुबीन । व ज़रबलना मसलौं व नसेया ख़ल्कह । क़ाला मंय्योहयिल् एज़ामा व हेया रमीम । क़ुल योहयीहल्लज़ी अनशा अहा अव्वला मर्रतिन । वहोवा बेकुल्ले ख़ल्क़िन अलीम । अवलैसल्लज़ी ख़लक़स्मावाते वल् अर्ज़ा बेक़ादिरिन अला अंयख़लोक़ा मिस्लहुम, बला, वहोवल् ख़ल्लाक़ुल् अलीम । इन्नमा अमरोहू इज़ा अरादा शैयन अंयक़ूला लहू कुन फ़यकून । फ़ सुबहानल्लज़ी बे यदेही मलकूतो कुल्ले शैयिन, व इलैहि तुर्जऊन ।

अर्थात् क्या मनुष्य ने नहीं देखा कि हमने उसको पानी की एक बूंद से उत्पन्न किया जो गर्भ में डाली गयी थी । पुन: वह एक झगड़ने वाला व्यक्ति बन गया । हमारे लिये बातें बनाने लगा और अपना जन्म भूल गया और कहने लगा कि यह कैसे सम्भव है कि जबकि हड्डियां भी नहीं बचेंगी तो फिर मनुष्य पुन: जीवित हो जाएगा ऐसी शक्ति वाला कौन है जो इस को जीवित

---

[1] يٰس: ٧٨-٨٠، [2] يٰس: ٨٢-٨٤،

करेगा ? इन लोगों को कह दो कि वही जीवित करेगा जिसने पहले उसको उत्पन्न किया था वह हर प्रकार से और हर एक राह से जीवित करना जानता है । उस के हुक्म की यह शान है कि जब किसी चीज़ के होने का इरादा करता है तो केवल यही कहता है कि ''हो'' अतः वह चीज़ पैदा हो जाती है । वह सत्ता पवित्र है । जिसकी हर एक चीज़ पर बादशाही है और तुम सब उसी की ओर लौटोगे ।

इन पवित्र आयतों में अल्लाह ने कहा है कि ख़ुदा के सामने कोई चीज़ असम्भव नहीं । जिसने मनुष्य को पानी के एक तुच्छ क़तरे से उत्पन्न किया । क्या वह दूसरी बार पैदा करने में असमर्थ है ?

इस स्थान पर एक और प्रश्न अपरिचित व्यक्तियों की ओर से हो सकता है और वह यह है कि जिस दशा में तीसरा लोक जो परलोक है लंबे समय पश्चात् आयेगा तो उस स्थिति में प्रत्येक नेक और बुरे के लिये आलमे बरज़ख़ केवल बन्दीग्रह के रूप में हुआ जो एक व्यर्थ बात मालूम होती है । इसका उत्तर यह है कि ऐसा समझना भारी भूल है जो अज्ञानतावश पैदा होती है । अपितु ख़ुदा की किताब (क़ुरान) में पापियों और साधु-पुरुषों के बदले के लिये दो स्थान पाये जाते हैं । एक 'बर्ज़ख़' अर्थात् यमलोक जिसमें ना मालूम तौर पर प्रत्येक व्यक्ति अपना बदला पायेगा । बुरे लोग मृत्यु के उपरान्त ही जहन्नम में प्रवेश करेंगे नेक लोग मृत्यु के तुरन्त पश्चात् ही जन्नत में विश्राम करेंगे । अतः इस विषय से सम्बन्धित आयतें पवित्र क़ुर्आन में पर्याप्त मात्रा में मिलेंगी कि मृत्यु के पश्चात् प्रत्येक व्यक्ति अपने कर्मों का फल देख लेता है । जैसा कि ख़ुदा तआला एक स्वर्गीय के विषय में सूचना देता हुआ कहता है :-

قِيْلَ ادْخُلِ الْجَنَّةَ [1]

क़ीलद ख़ोलिल् जन्नतः ।

अर्थात् उसको कहा गया कि तू जन्नत में प्रविष्ट हो । इस प्रकार प्रत्येक नारकीय को सूचना देता हुआ फ़रमाता है :-

فَرَاٰهُ فِیْ سَوَآءِ الْجَحِیْمِ [2]

फ़रआहो फ़ी सवाइल् जहीम ।

---

[1] يٰس: ٢٧ [2] الصّٰفّٰت: ٥٦
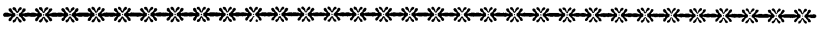
अर्थात् एक जन्नती का एक मित्र दोज़ख़ी था । जब वे दोनों मर गए तो जन्नती आश्चर्य में था कि मेरा मित्र कहां है ! अत: उसको दिखलाया गया कि वह जहन्नम के बीच में है ।

अतएंव पुरस्कार अथवा दण्ड देने की क्रिया तो बिना देरी के प्रारम्भ हो जाती है और नारकीय नरक में और स्वर्गीय स्वर्ग में जाते हैं । किन्तु इसके पश्चात् एक और बड़ी चमत्कार का दिन है जो ख़ुदा की एक बड़ी हिकमत ने उस दिन को ज़ाहिर करना चाहा है क्योंकि उसने मनुष्य को इस लिये पैदा किया ताकि वह (अल्लाह) सृष्टि कर्ता के स्वरूप में पहचाना जाये । और फिर वह सब का नाश करेगा ताकि वह अपनी प्रकोपित शक्ति के साथ पहचाना जाये तथा पुन: एक दिन सबको पूर्ण जीवन प्रदान करके एक मैदान में एकत्र करेगा ताकि वह अपनी सर्ब शक्तिमान् की सत्ता के साथ पहचाना जाये । अब जानना चाहिये कि बताए गए सूत्रों में से यह पहला मअरिफ़त (ख़ुदा की पहचान) का सूत्र था जिस का बयान हुआ है ।

ख़ुदा की पहचान का दूसरा सूत्र

ख़ुदा की पहचान का दूसरा सूत्र जिसका परलोक के विषय में पवित्र क़ुरान ने उल्लेख किया है वह यह है कि परलोक में वे सभी बातें जो संसार में रूहानी थे जिसमानी रूप में रूपान्तरित होंगे । चाहे परलोक में 'बर्ज़ख़' (यमलोक) की श्रेणी हो अथवा आलमे बअस (अर्थात् परलोक की श्रेणी हो जहां मनुष्य फिर जी उठेंगे) इस विषय में जो कुछ ख़ुदा तआला ने कहा है उस में से एक आयत यह है:-

مَنْ كَانَ فِىْ هٰذِهٖٓ اَعْمٰى فَهُوَ فِى الْاٰخِرَةِ اَعْمٰى وَاَضَلُّ سَبِيْلًا [1]

मन काना फ़ी हाज़ेही आऽमा फ़ होवा फिल आखेरते आऽमा व अज़ल्लो सबीला ।

अर्थात् जो व्यक्ति इस संसार में अन्धा होगा वह दूसरे संसार में भी अन्धा होगा । इस आयत का उद्देश्य यह है कि इस संसार की आध्यात्मिक दृष्टि उस संसार में शारीरिक रूप में दिखाई देगी तथा उस को महसूस होगी ।

---

[1] بنی اسرائیل : ۷۳

ऐसा ही दूसरी आयत में आया है :-

خُذُوْهُ فَغُلُّوْهُ ۝ ثُمَّ الْجَحِيْمَ صَلُّوْهُ ۝ ثُمَّ فِيْ سِلْسِلَةٍ ذَرْعُهَا سَبْعُوْنَ ذِرَاعًا فَاسْلُكُوْهُ ۝ ۱

ख़ोज़ूहो फ़गुल्लू हो सुम्मलजहीमा सल्लू हो सुम्मा फ़ी सिल सेला तिन ज़रओहा सबऊना ज़िराअन फ़स्लोकू हो ।

अर्थात् इस नारकीय व्यक्ति को पकड़ो । इस की गर्दन में तौक डालो । फिर दोज़ख़ में इसको जलाओ । पुन: ऐसी ज़ंजीर में जो नाप में सत्तर गज़ है उसे दाखिल करो । ज्ञात होना चाहिये कि इन आयतों में यह स्पष्ट कर दिया है कि संसार का रूहानी अज़ाब (प्रकोप) आख़िरत में शारीरिक तौर पर प्रकट होगा । अस्तु, संसार की इच्छाओं में (जकड़ी हुई) गर्दन का तौक जिस ने मनुष्य के मस्तक को पृथ्वी की ओर झुका रखा था और दूसरे जगत (परलोक) में व्यक्तिगत रूप में नज़र आ जाएगा इसी प्रकार सांसारिक बन्धनों की श्रृंखला पैरों में पड़ी हुई दिखाई देगी और सांसारिक इच्छाओं और आकांक्षाओं की ज्वाला प्रकट रूप में भड़की हुई दिखाई देगी । अवज्ञाकारी मनुष्य संसार के जीवन में मायामोह का एक नरक अपने भीतर रखता है । और असफलताओं में इस नरक की यातनाओं का अनुभव करता है । इस लिये जब कि अपनी फ़ना होने वाली वासनाओं से दूर फैंका जाएगा और सदैव की असफलतायें डेरा लगायेंगी तो ख़ुदा तआला इन हसरतों को शारीरिक आग के रूप में उस पर प्रकट करेगा : जैसा कि उसका कथन है :-

وَحِيْلَ بَيْنَهُمْ وَبَيْنَ مَا يَشْتَهُوْنَ ۲

व हीला बैनाहुम व बैना मा यश्ताहून ।

अर्थात् उन में और उनकी इच्छित वस्तुओं में अन्तर डाल दिया जाएगा । और यही अज़ाब की जड़ होगी और फिर यह जो फरमाया कि सत्तर गज़ की ज़ंजीर में उसको दाखिल करो यह इस बात की ओर संकेत है कि एक पापी बहुधा 70 वर्ष की आयु पा लेता है । बल्कि कई बार इस दुनिया में उस को

۱ الحاقة: ۳۱-۳۳ ۲ سبا: ۵۵

ऐसे सत्तर साल भी मिलते हैं बाल्यकाल और वृद्धावस्था वाले भाग को यदि निकाल भी दिया जाए तब भी उसे काम के 70 वर्ष ऐसे शुद्ध, स्वस्थ और सुस्पष्ट मिलते हैं जो बुद्धिमत्ता, परिश्रम तथा काम के योग्य होते हैं । किन्तु वह अभागा अपनी उत्तम आयु के सत्तर वर्ष संसार के बन्धनों में व्यतीत कर देता है और उस ज़ंजीर से स्वतन्त्र होना नहीं चाहता । अत: ख़ुदा तआला का इस आयत में कहना है कि वही सत्तर वर्ष जो उसने संसार के बन्धन में व्यतीत किए थे परलोक में एक ज़ंजीर के रूप में सामने आयेंगे जो सत्तर गज़ की होगी । प्रत्येक गज़ एक वर्ष के स्थान पर बोला गया है । इस स्थान पर स्मरण रखने योग्य बात यह है कि ख़ुदा तआला अपनी ओर से मनुष्य पर कोई कष्ट नहीं डालता । अपितु मनुष्य के दुष्कर्म ही उस के सम्मुख रख देता है । पुन: अपने इसी विधान के सम्बन्ध में एक स्थान पर ख़ुदा तआला फ़रमाता है :-

اِنْطَلِقُوْٓا اِلٰى ظِلٍّ ذِىْ ثَلٰثِ شُعَبٍ ۙ لَّا ظَلِيْلٍ وَّلَا
يُغْنِىْ مِنَ اللَّهَبِ ۞ [1]

इन्तलेक़ू इला ज़िल्लिनज़ी सलासे शोअबिल्ला ज़लीलियूं व ला युग़नी मिनल्लहब ।

अर्थात् हे दुष्टो और पथ भ्रष्टो ! त्रिकोणी छाया की ओर चलो जिसकी तीन शाखायें हैं । जिस में छाया का कोई तत्व नहीं तथा न ही वह गर्मी से बचा सकती हैं । इस आयत में तीन शाखाओं से अभिप्राय हिंस्र-बल, पशु-बल तथा भ्रम-जाल है । जो लोग इन तीनों शक्तियों को चरित्र के रंग में रंगीन नहीं करते तथा उन्हें चरित्र का रूप नहीं देते, उन की ये शक्तियां कियामत के दिन इस प्रकार प्रदर्शित होंगी मानों तीन शाखायें बिना पत्तों के खड़ी हैं जो गर्मी से नहीं बचा सकती तथा वे गर्मी से जलेंगे ।

पुन: इसी प्रकार ख़ुदा तआला अपने इसी विधान के लिये स्वर्गीय लोगों के प्रति फ़र्माता है :-

يَوْمَ تَرَى الْمُؤْمِنِيْنَ وَالْمُؤْمِنٰتِ يَسْعٰى نُوْرُهُمْ بَيْنَ
اَيْدِيْهِمْ وَبِاَيْمَانِهِمْ [2]

[1] المرسلات: ۳۱، ۳۲ [2] الحديد: ۱۳

यौमा तरलमोऽमेनीना वल्मोऽमेनाते यसआ नूरोहुम बैना ऐदीहिम व बे ऐमानेहिम।

अर्थात् उस दिन तू देखेगा कि मोमिनों का यह नूर जो संसार में गुप्त रूप में है, व्यक्त रूप में उन के आगे-आगे तथा उनकी दायीं ओर दौड़ता फिरेगा। और फिर एक और आयत में फरमाता है ।

يَوْمَ تَبْيَضُّ وُجُوْهٌ وَّتَسْوَدُّ وُجُوْهٌ [1]

यौमा तबयज़्ज़ो वुजुहुन व तसवद्दो वुजुहुन ।

अर्थात् उस दिन कुछ चेहरे काले होंगे तथा कुछ चेहरे श्वेत और नूरानी हो जायेंगे । और फिर एक और आयत में फ़रमाता है:-

مَثَلُ الْجَنَّةِ الَّتِيْ وُعِدَ الْمُتَّقُوْنَ ۚ فِيْهَآ اَنْهٰرٌ مِّنْ مَّآءٍ غَيْرِ اٰسِنٍ

وَاَنْهٰرٌ مِّنْ لَّبَنٍ لَّمْ يَتَغَيَّرْ طَعْمُهٗ ۚ وَاَنْهٰرٌ مِّنْ خَمْرٍ لَّذَّةٍ لِّلشّٰرِبِيْنَ ۚ

وَاَنْهٰرٌ مِّنْ عَسَلٍ مُّصَفًّى ۚ [2]

मसलुल् जन्नतिल्लती बोएदल् मुत्तक़ून । फ़ीहा अनहारुम्मिम्माइन ग़ैरे आसेनिन व अनहारुम्मिल्लबनिन् लम् यतग़य्यर तअमोहू व अनहारुम्मिन ख़मरिल्लज़्ज़तिल्लिश्शारेबीन व अनहारुम्मिन अ सलिम्मुसफ़्फ़ा ।

अर्थात् वह बहिश्त (स्वर्ग) जो परहेज़गारों को दिया जाएगा उसका उदाहरण यह है कि जैसे एक बाग़ (वाटिका) है उस में उस पानी की नहरे हैं जो कभी बदबू दार नहीं होता तथा उसमें उस दूध की नहरें हैं जिस का स्वाद कभी नहीं बदलता तथा उसमें उस मदिरा की नहरें हैं जो अतीव आनन्ददायक और सुरूर बख़्श है, जिस में नशा नहीं । इसी प्रकार उस में उस मधु की नहरें हैं जो अति स्वच्छ और निर्मल हैं और जिस में कोई विकार नहीं । इस स्थान पर स्पष्टतया बताया गया है कि उस स्वर्ग को उदाहरण के रूप में ऐसे समझ लो कि उन सम्पूर्ण वस्तुओं की ऐसी नहरें हैं जिन का कोई किनारा नहीं

---

[1] آل عمران: ١٠٧ [2] محمد: ١٦

वह जीवन का पानी जो एक आरिफ़ (ख़ुदा की पहचान रखने वाला) इस संसार में आध्यात्मिक रूप में पीता है उस में प्रकट रूप में विद्यमान है और वह रूहानी दूध जिस से दुधमूहें शिशु की प्रकार रूहानी रूप में संसार में उसका पालन पोषण होता है बहिश्त में प्रकट रूप में दिखाई देगा और वह ख़ुदा के प्रेम की शराब जिस से वह संसार में (आध्यात्मिकता के) रूहानी रूप में सदैव मस्त रहना था, अब स्वर्ग में प्रकट रूप में उसकी नहरें दिखाई देंगी और वह ईमान तथा विश्वास की मिठास का मधु जो संसार में रूहानी रूप में आरिफ़ के मुख में जाता था, वह स्वर्ग में व्यक्त रूप में स्पष्टतया नहरों की आकृति में दिखाई देगा । प्रत्येक स्वर्गीय अपनी नहरों और वाटिकाओं के साथ अपनी आध्यात्मिक अवस्था का निखरा हुआ स्पष्ट रूप दिखला देगा तथा ख़ुदा भी उस दिन स्वर्गीय लोगों के लिए पर्दे के बाहर आ जायेगा । सारांश यह है कि आध्यात्मिक अवस्थायें गुप्त रूप में नहीं रहेंगी । अपितु स्थूल रूप में नज़र आएंगी ।

मअरिफ़त (ख़ुदा की पहचान) का तीसरा सूत्र

मअरिफ़त का तीसरा रहस्यात्मक तत्व यह है कि परलोक में उन्नतियां असीमित होंगी । इस सम्बन्ध में अल्लाह तआला का कथन है :-

وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا مَعَهٗ نُوْرُهُمْ يَسْعٰى بَيْنَ اَيْدِيْهِمْ وَبِاَيْمَانِهِمْ
يَقُوْلُوْنَ رَبَّنَآ اَتْمِمْ لَنَا نُوْرَنَا وَاغْفِرْ لَنَا ۚ اِنَّكَ عَلٰى كُلِّ
شَيْءٍ قَدِيْرٌ [1]

वल्लज़ीना आमनू मअहू नूरोहुम यसआ बैना ऐदीहिम् व बे ऐमानेहिम् यक़ूलूना रब्बना अत्मिम लना नूरना वग़फ़िर लना । इन्नका अला कुल्ले शैयिन क़दीर ।

अर्थात् जो व्यक्ति संसार में विश्वास और ईमान की ज्योति रखते हैं उनका नूर कयामत के दिन उनके आगे और उन की दायीं ओर दौड़ता होगा । वे लोग सदैव यही कहते रहेंगे कि हे ख़ुदा ! हमारे नूर को पूर्णत्व प्रदान कर तथा अपनी क्षमा की छाया के नीचे हमें ले ले । तू सर्वशक्तिमान है । इस

[1] التحريم : ٩
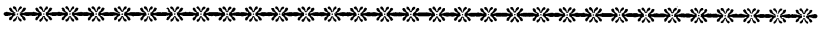
आयत में यह जो कहा गया है कि वह सदैव यही कहते रहेंगे कि हमारी ज्योति को पूर्णता प्रदान कर, यह अपरिसीम उन्नतियों की ओर संकेत है । अर्थात् उन्हें आत्मिक ज्योति का एक पूर्ण तत्व प्राप्त होगा । पुन: दूसरा पूर्ण तत्व उन्हें दिखाई देगा । उस को देख कर पहले पूर्णतत्व को कमतर समझेंगे । अत: द्वितीय पूर्ण दक्षता की उपलब्धि की प्रार्थना करेंगे और जब वह प्राप्त होगा तो एक तीसरी श्रेणी कमाल (पूर्णता) की उन पर प्रकट होगी पुन: उसे देखकर पहली दक्षता और पूर्णत्वको निकृष्ट समझेंगे और उस की इच्छा करेंगे । यही उन्नतियों की चरमसीमा की परम इच्छा है जो "अत्मिम्" शब्द से समझी जाती है ।

अस्तु, इसी प्रकार असीमित उन्नतियों का क्रम चलता जायेगा । अवनति कभी नहीं होगी और न कभी स्वर्ग से निकाले जायेंगे । अपितु प्रतिदिन आगे बढ़ेंगे और पीछे न हटेंगे । और यह जो फ़रमाया कि वह सदैव अपनी क्षमा चाहेंगे । इस स्थान पर प्रश्न यह उठता है कि जब स्वर्ग में प्रविष्ट हो गये तो फिर क्षमा में कौन सी न्यूनता शेष रह गई जब पाप और अपराध सब के सब क्षमा कर दिए गए तो फ़िर क्षमायाचना की क्या आवश्यकता ? इस का उत्तर यह है कि "मग़फिरत" (क्षमा) का वास्तविक अर्थ कठोर और त्रुटिपूर्ण स्थिति को नीचे दबाना और ढांकना है । अत: स्वर्गीय इस बात की इच्छा करेंगे कि उन्हें हर प्रकार की पूर्णता प्राप्त करें और वे ज्योति के स्रोत में लुप्त हो जाऐं वह दूसरी अवस्था को देख कर पहली अवस्था तुच्छ पाएंगे और वे इस बात की इच्छा करेंगे कि पहली अवस्था नीचे दबाई जाए । पुन: तृतीय श्रेणी को देख कर उन्हें इस बात की अभिलाषा होगी कि दूसरी श्रेणी की अपेक्षा मुक्तिदान तथा क्षमादान अधिक हो अर्थात् पहली तुच्छ अवस्था नीचे दबाई जाये और उसको छिपा दिया जाये । इस प्रकार अपरिसीम क्षमा के इच्छुक रहेंगे । यह क्षमा तथा क्षमायाचना का वही शब्द है जो कुछेक मूर्ख लोग आक्षेप के रूप में हमारे पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद सल्लाहो अलैहि वसल्लम के विषय में पेश करते हैं ।

सो दर्शकों ने इस विवरण से भली प्रकार समझ लिया होगा कि यही क्षमा याचना की इच्छा मानव का गर्व है । जो व्यक्ति स्त्री के गर्भ से जन्मा

और फिर क्षमायाचना को अपनी आदत नहीं बनाता वह मनुष्य न होकर एक कीड़ा है, तथा नेत्रों वाला न होकर अन्धा है, एवं पवित्र न होकर अपवित्र और भ्रष्ट है ।

कहने का तात्पर्य यह है कि पवित्र क़ुरान के अनुसार स्वर्ग और नरक दोनों वास्तव में मानव के जीवन का प्रतिबिम्ब और उस की प्रतिछाया है । कोई ऐसी नवीन भौतिक वस्तु नहीं हैं कि जो दूसरी जगह से आए यह सच है कि वह दोनों शारीरिक रूप से ज़ाहिर होंगे परन्तु वह वास्तविक रूहानी हालतों के प्रतिबिम्ब और प्रतिछाया होंगे । हम लोग ऐसे स्वर्ग पर आस्था नहीं रखते जिस में केवल स्थूल रूप में एक ज़मीन में पेड़ लगाये गये हों तथा न ही ऐसे नरक पर विश्वास रखते हैं जिस में सचमुच गन्धक के पत्थर हैं अपितु इस्लामी विश्वास और आस्था के अनुसार स्वर्ग और नरक उन्हीं कर्मों का प्रतिबिम्ब और प्रतिछाया हैं जो इस लोक में मनुष्य करता है ।

***

प्रश्न नं. 3

यह है कि संसार में जीवन के उद्देश्य क्या हैं? और उनकी प्राप्ति किस तरह होती है ?

इस प्रश्न का उत्तर यह है कि यद्यपि भिन्न-भिन्न स्वभाव के मनुष्य अपनी कम समझी या कम हिम्मती से नाना प्रकार के उद्देश्य अपनी ज़िन्दगी के लिए ठहराते हैं । और केवल सांसारिक उद्देश्यों और इच्छाओं तक चल कर आगे ठहर जाते हैं किन्तु वह परम लक्ष्य जो ख़ुदा तआला अपने पवित्र कलाम क़ुरान मजीद में बताता है वह यह है । अल्लाह तआला का कथन है :-

وَمَا خَلَقْتُ الْجِنَّ وَالْإِنْسَ إِلَّا لِيَعْبُدُوْنِ ○ [1]

"व मा ख़लक़्तुल जिन्ना वल् इन्सा इल्ला लेयअबोदून ।"

अर्थात् मैंने छोटे बड़े प्रत्येक मनुष्य को इस लिए पैदा किया है कि वह मुझे पहचाने और मेरी इबादत (उपासना) करे । अत: इस आयत के अनुसार मानव जीवन का वास्तविक उद्देश्य ख़ुदा की इबादत और ख़ुदा की पहचान और ख़ुदा के लिए हो जाना है ।

यह तो स्पष्ट है कि मनुष्य को यह पद प्राप्त नहीं है कि अपने जीवन का लक्ष्य अपने अधिकार से स्वयं ही निश्चित करे क्योंकि मनुष्य न अपनी इच्छा से आता है और न अपनी इच्छा से वापस जाएगा अपितु वह एक मख़लूक़ (सृष्टि) है और जिस ने उसे पैदा किया और समस्त जीव-धारियों की अपेक्षा अत्युत्तम और श्रेष्ठ शक्तियाँ प्रदान कीं, उसी ने उसके जीवन का एक लक्ष्य निश्चित कर रखा है । चाहे कोई मनुष्य इस लक्ष्य को समझे या न समझे, किन्तु मनुष्य के जन्म का लक्ष्य निस्सन्देह ख़ुदा की इबादत और उसकी मअरिफ़त (पहचान) एवं उसी में अपने को विलीन कर देना है । जैसा कि ख़ुदा तआला पवित्र क़ुरान में एक और स्थान पर फ़र्माता है :-

---

[1] الذّٰریٰت : ۵۷

إِنَّ الدِّيْنَ عِنْدَ اللّٰهِ الْإِسْلَامُ [1] فِطْرَتَ اللّٰهِ الَّتِيْ فَطَرَ
النَّاسَ عَلَيْهَا . . . . . ذٰلِكَ الدِّيْنُ الْقَيِّمُ [2]

इन्नद्दीना इन्दल्लाहिल् इस्लाम । फ़ितरतल्लाहिल्लती फ़तरन्नासा अलैहा ज़ालिकद्दीनुलक़य्यमो ।

अर्थात् वह दीन जिसमें ख़ुदा की शुद्ध पहचान और उसकी इबादत सब से ज़्यादा अच्छे तौर पर है वह इस्लाम है । और इस्लाम मानव प्रकृति में रमा हुआ है । और ख़ुदा ने मनुष्य को इस्लाम पर पैदा किया है और हस्लाम के लिए पैदा किया है अर्थात् यह चाहा कि मनुष्य अपनी ताकतों और सम्पूर्ण शक्तियों के साथ उस की उपासना, और आज्ञा और प्रेम में संलग्न हो जाए । इसी लिए उस सर्वशक्तिमान और करीम ने मनुष्य को समस्त शक्तियाँ इस्लाम की याचनानुसार प्रदान की हैं । इन आयतों की व्याख्या अति विस्तृत है । हम इस विषय में कुछ हद तक प्रथम प्रश्न के तीसरे भाग में लिख भी चुके हैं किन्तु अब हम संक्षेप में यह बताना चाहते हैं कि मनुष्य को जो कुछ अन्त: और बाह्य अंग दिये गए हैं अथवा जो कुछ शक्तियाँ प्रदान हुई हैं उनका वास्तविक उद्देश्य उनका ख़ुदा की पहचान और ख़ुदा की इबादत और ख़ुदा की मुहब्बत है इसी कारण मनुष्य संसार में हज़ारों कर्मों को अपना करके भी ख़ुदा के अतिरिक्त सच्ची खुशहाली किसी में नहीं पाता । बड़ा धनवान होकर, बड़ी पदवी पाकर, महान् व्यापारी बन कर, महान् साम्राज्य प्राप्त करके महान् दार्शनिक कहला कर भी अंत में सांसारिक कैदों से बड़े अफ़सोस के साथ जाता है और सदैव उस का हृदय संसार में डूबे रहने से उसको अपराधी ठहराता रहता है और उसके छलों, फ़रबों एवं अनुचित कर्मों में कभी उसका ज़मीर उस से सहमत नहीं होता ।

एक समझदार व्यक्ति इस समस्या को इस प्रकार भी समझ सकता है कि जिस वस्तु की शक्तियाँ अच्छे से अच्छे कर्म कर सकती हैं पुन: आगे जा कर ठहर जाती हैं, वही सर्वोत्तम कर्म उसकी उत्पत्ति का चरम लक्ष्य समझा जाता है । उदाहरणतया बैल का काम उत्तम विधि से हल चलाना अथवा

[1] آل عمران: ۲۰ [2] الروم: ۳۰-۳۱

सिंचाई करना या बोझ ढोना है । इस से अधिक उसकी शक्तियों में कुछ भी सिद्ध नहीं हुआ । अतः बैल के जीवन का उद्देश्य यही तीन बातें हैं । इस से अधिक कोई शक्ति उसमें नहीं पाई जाती । किन्तु जब हम मनुष्य की शक्तियों का पर्थवेक्षण करते हैं कि उन में सर्वोत्तम कौन सी शक्ति है तो यही सिद्ध होता है कि सर्वव्यापी ख़ुदा की उसमें खोज की जिज्ञासा विद्यमान है । यहाँ तक कि वह चाहता है कि ख़ुदा के प्रेम में विनम्र भाव से ऐसा लवलीन हो जाए कि उमका अपना कुछ भी शेष न रहे, सब ख़ुदा का हो जाए । वह खाने और सोने इत्यादि स्वाभाविक क्रियाओं में अन्य जानवरों के बहुत हद तक बराबरी रखता है । कला कौशल और दस्तकारी में कुछ पशु मनुष्यों से बहुत बड़े हुए हैं । अपितु मधुमक्खियां भी हर एक पुष्प का सार निकाल कर उससे इतना उत्तम मधु तैयार करती हैं कि अब तक इस दस्तकारी में मनुष्य को सफलता नहीं मिली । अतः स्पष्ट है कि मनुष्य की सर्वोच्च विशेषता ख़ुदा तआला का मिलन है । अतः उसके जीवन का परम लक्ष्य यही है कि ख़ुदा की ओर उसके दिल की खिड़की खुले ।

इंसानी ज़िन्दगी की प्राप्ति के साधन

हाँ यदि यह प्रश्न हो कि यह उद्देश्य किस प्रकार प्राप्त हो सकता है और किन साधनों से मानव उसको पा सकता है ?

इसके लिए स्मरण रखना चाहिए कि सर्वोत्तम साधन जो इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए शर्त है वह यह है ख़ुदा तआला को ठीक विधि से पहचाना जाए तथा सच्चे ख़ुदा पर ईमान लाया जाये क्योंकि यदि प्रथम पग ही अनुचित और अशुद्ध है - उदाहरण के रूप में यदि कोई व्यक्ति किसी पक्षी या पशु अथवा जल, वायु अग्नि आदि भूतत्वों को अथवा मानव के बच्चे को ही ख़ुदा समझ बैठा है - तो फिर उसके दूसरे पगों में सीधे और सरल मार्ग पर चलने की क्या आशा है । सच्चा ख़ुदा उसके खोजने वालों को सहायता देता है किन्तु एक मृतक दूसरे मृतक की क्या सहायता कर सकता है ? इस विषय में अल्लाह ज़ल्ला शानुहु ने जो रूपक बान्धा है वह यह है :-

لَهٗ دَعْوَةُ الْحَقِّ ؕ وَالَّذِيْنَ يَدْعُوْنَ مِنْ دُوْنِهٖ لَا يَسْتَجِيْبُوْنَ
لَهُمْ بِشَيْءٍ اِلَّا كَبَاسِطِ كَفَّيْهِ اِلَى الْمَآءِ لِيَبْلُغَ فَاهُ وَمَا هُوَ
بِبَالِغِهٖ ؕ وَمَا دُعَآءُ الْكٰفِرِيْنَ اِلَّا فِيْ ضَلٰلٍ ۝ [1]

लहू दावतुल हक़्क़े वल्लज़ीना यद्ऊना मिन् दूनेही ला यस्तजीबूना लहुम बेशैयिन इल्ला कबासेते कफ़्फ़ैहे इलल्माये लेयब्लोग़ा फ़ाहो वमा होवा बेबालेग़ेही । वमा दुआउल् काफ़िरीन इल्ला फ़ी ज़लालिन ।

अर्थात् दुआ करने के योग्य वही सच्चा ख़ुदा है जो सर्व-शक्तिमान है । और जो लोग उसके अतिरिक्त औरों को पुकारते हैं वे कुछ भी उनको जवाब नहीं दे सकते । उनकी अवस्था ऐसी ही है जैसे कोई जल की ओर हाथ फैलाए और कहे कि हे जल ! तू मेरे मुख में आ जा ! तो क्या वह जल उसके मुख में आ सकता है ? कदापि नहीं । अत: जो व्यक्ति सच्चे ख़ुदा से अपरिचित और अनभिज्ञ हैं उसकी समस्त दुआयें व्यर्थ हैं ।

दूसरा साधन :- दूसरा साधन ख़ुदा तआला के उस अलौकिक सौन्दर्य और उसके परम तत्व की जानकारी प्राप्त करना है जो सर्वाशत: उसमें विद्यमान है क्योंकि सौन्दर्य एक ऐसी वस्तु है जो स्वाभाविक रूप से हृदय उसकी ओर आकर्षित होता है और उसके देखने से स्वत: ही उससे प्रेम हो जाता है । अत: ख़ुदा तआला का सौन्दर्य उसकी वहदानियत (अद्वैत) और उसकी परम महानता, विराटता तथा अन्य अगणित विशेषताएं हैं जैसा कि क़ुरान करीम ने यह फ़र्माया है :-

قُلْ هُوَ اللّٰهُ اَحَدٌ ۝ اَللّٰهُ الصَّمَدُ ۝ لَمْ يَلِدْ ۙ وَلَمْ
يُوْلَدْ ۝ وَلَمْ يَكُنْ لَّهٗ كُفُوًا اَحَدٌ ۝ [2]

क़ुल हो वल्लाहो अहद् । अल्लाहुस्समद् । लम् यलिद् वलम यूलद् । वलम् यकुल्लहू कोफ़ोवन् अहद् ।

अर्थात् ख़ुदा अपनी सत्ता और अपनी विशेषता तथा अपनी चमत्कारिता

[1] الرعد:١٥ [2] الاخلاص: ٢،٥

में एक है । उसके समान अन्य कोई नहीं । सब उसके ज़रूरतमंद हैं । कण-कण उसी से जीवन प्राप्त करता है । वह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का स्रोत और उद्गम स्थान है किन्तु स्वयं किसी स्रोत से नहीं निकला, वह न किसी का पुत्र है न किसी का पिता है । और क्यों कर हो कि उसका सजातीय अन्य कोई नहीं पवित्र क़ुरान ने ख़ुदा तआला की चमत्कारिता और उसकी अनुपमता बारम्बार नाना प्रकार से उपस्थित करके मानव का ध्यान इस ओर आकर्षित किया है कि देखो ऐसा ख़ुदा हृदयों को पसंद है; न के कोई मृतक या दुर्बल या दया में कमी करने वाला अथवा अल्पशक्तिमान ।

तीसरा साधन :- तीसरा साधन, जो परम लक्ष्य की प्राप्ति के लिए दूसरे दर्जे की सीढ़ी है ख़ुदा तआला के उपकारों की जानकारी और उन से अवगत होना है क्योंकि प्रेम की प्रेरक दो ही वस्तुएं हैं, सौंदर्य अथवा उपकार । ख़ुदा तआला की उपकार-जन्य विशेषता: का सारांश सूरा: फातेहा के अन्तर्गत पाया जाता है । जैसा कि वह फ़रमाता है :-

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ ۙ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ ۙ
مٰلِكِ يَوْمِ الدِّيْنِ ۗ[1]

अल्हम्दो लिल्लाहे रब्बिल् आलमीन । अर्रहमानिर्रहीम मालेके योमिद्दीन ।

अर्थात् समस्त पवित्र प्रशंसाएं जो हो सकती हैं । उस ख़ुदा तआला के लिए हैं जो समस्त ब्रह्मांडों का स्रष्टा और पालनहार है । वही ख़ुदा जो हमारे कर्मों से पूर्व हमारे लिए कृपा और दया की सामग्री जुटाने वाला है और हमारे कर्मों के पश्चात् कृपा और दयाके साथ बदला देने वाला है । वह ख़ुदा जो निर्णय के दिन का अर्थात् प्रलय के दिन का एक मात्र स्वामी है किसी अन्य को वह दिन नहीं सौंपा गया क्योंकि यह बात निर्णीत है कि सर्वरूप से सम्पूर्ण उपकार इस में है कि ख़ुदा तआला अपने बंदों को केवल शून्य से उत्पन्न करे, पुन: उनका सदा ही पालन पोषण करे और वही प्रत्येक वस्तु का आधार और सहारा हो और फिर उसकी सर्वप्रकार की कृपाएं और दयाएं उसके बंदों के लिये प्रकट होती हों । उस के उपकार अपरिमित हों । इतने अधिक कि जिन

[1] الفاتحة : ٢/٢

की कोई गणना न कर सके । अतः ऐसे उपकारों को ख़ुदा तआला ने बार-बार स्मरण कराया है । जैसा कि एक स्थान पर फ़रमाता है :-

وَإِنْ تَعُدُّوا نِعْمَتَ اللّٰهِ لَا تُحْصُوهَا [1]

व इन तउद्दू नेअमतल्लाहे ला तोहसूहा ।

अर्थात् यदि ख़ुदा तआला के उपकारों (नेमतों) की गणना करना चाहो तो कदापि उन्हें गिन नहीं सकोगे ।

चौथा साधन :- चौथा साधन ख़ुदा तआला ने परम लक्ष्य की सिद्धि के लिए दुआ वताया है । जैसा कि उस का पवित्र कथन है :-

اُدْعُوْنِیْٓ اَسْتَجِبْ لَكُمْ [2]

उदऊनी अस्तजिब लकुम ।

अर्थात् तुम दुआ करो, मैं स्वीकार करूंगा । और दुआ करने के लिए इस ओर प्रेरित किया ताकि मनुष्य अपनी शक्ति से नहीं अपितु ख़ुदा को ख़ुदा की ही शक्ति से प्राप्त करे ।

पांचवा साधन :- परम लक्ष्य की प्राप्ति का पांचवां साधन ख़ुदा ने मुजाहदा (तपस्या) बताया है अर्थात् अपना धन ख़ुदा तआला की राह में व्यय करने से तथा अपनी शक्तियों को ख़ुदा तआला की राह में खर्च करने से और अपने प्राणों को ख़ुदा के मार्ग में न्यौछावर कर देने से तथा अपनी बुद्धि को ख़ुदा के मार्ग में खर्च करने आदि साधनों से उस की खोज की जाए जैसा कि उस का पवित्र कथन है :-

جَاهِدُوْا بِاَمْوَالِكُمْ وَاَنْفُسِكُمْ [3]
وَمِمَّا رَزَقْنٰهُمْ يُنْفِقُوْنَ [4] وَالَّذِيْنَ جَاهَدُوْا فِيْنَا
لَنَهْدِيَنَّهُمْ سُبُلَنَا [5]

जाहेदू बे अम्वाले कुम व अनफ़ोसेकुम फ़ी सबीलिल्लाह व मिम्मा रज़क़्ना हुम युन्फ़ेक़ून । वल्लज़ीना जाहदू फीना लनहदियन्नाहुम सोबोलना ।

---

 [1] ابراهيم : ٣٥ [2] المومن : ٦١ [3] التوبة : ٤١ [4] البقرة : ٤ ، [5] العنكبوت : ٧٠ ،
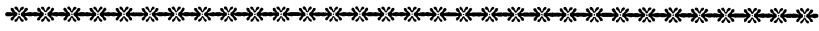
अर्थात् अपने धन वैभव, अपने प्राणों, अपने आपको तमाम ताक़तों के साथ ख़ुदा की राह में ख़र्च करो और जो कुछ हमने बुद्धि विद्या तथा विचारशक्ति तथा कलाकौशल आदि में से तुम को दिया है वह सब ख़ुदा के मार्ग में लगाओ । जो लोग हमारी राह में उपलब्ध साधनों द्वारा भरपूर प्रयत्न करते हैं, हम उन्हें अपना मार्ग (अर्थात् मानव का चरम लक्ष्य) दिखला दिया करते हैं ।

छटा साधन :- वास्तविक उद्देश्य और चरम लक्ष्य की प्राप्ति के लिए ख़ुदा ने छठा साधन इस्तक़ामत (दृढ़ता) बताया है । अर्थात् इस मार्ग में कमज़ोर और विवष न हो और थक न जाये और परीक्षा से डर न जाये जैसा कि अल्लाह तआला फ़रमाता है :-

إِنَّ الَّذِينَ قَالُوا رَبُّنَا اللَّهُ ثُمَّ اسْتَقَامُوا تَتَنَزَّلُ عَلَيْهِمُ
الْمَلٰٓئِكَةُ أَلَّا تَخَافُوا وَلَا تَحْزَنُوا وَأَبْشِرُوا بِالْجَنَّةِ الَّتِي كُنْتُمْ
تُوعَدُونَ ۝ نَحْنُ أَوْلِيَاؤُكُمْ فِي الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَفِي الْآخِرَةِ ۚ [1]

इन्नल्लज़ीना कालू रब्बोनल्लाहो सुम्मस्तकामू ततनज़्ज़लो अलैहिमुल मलाएकतो अल्ला तख़ाफ़ू वला तहज़नू व अबशेरू बिल्जन्नेतिल्लाती कुन्तुम तूअदूना । नहनो औलेयाओकुम फ़िल् हयातिद्दुनिया व फ़िल् आख़ेरते ।

अर्थात् वे लोग जिन्होंने कहा कि हमारा रब अल्लाह है । तथा झूठे ख़ुदाओं से अलग हो गये तदुपरांत अपनी इस बात पर कठोरता से दृढ़ रहे तथा नाना प्रकार की परीक्षाओं विपत्तियों और बाधाओं के समय दृढ़निश्चय रहे, उन पर फ़रिश्ते (ईश दूत) उतरते हैं और उन्हें धैर्य दिलाते हैं कि तुम भय मत करो, न ही शोक करो, न ही मन में खेद लाओ अपितु प्रसन्न मन रहो और प्रसन्नता से भरपूर रहो क्योंकि तुम उस सुखैश्वर्य के उत्तराधिकारी हो गये जिसका तुम्हें वचन दिया गया है। हम इस सांसारिक जीवन में तथा परलोक

---

[1] حٰمٓ السجدة: ٣١، ٣٢ ،

में तुम्हारे मित्र हैं ।

इस स्थान पर इन वाक्यों में यह संकेत है कि दृढ़ता और धैर्य से ख़ुदा तआला प्रसन्न होता है । यह एक तथ्य है कि दृढ़ता और धैर्य चमत्कार से भी ऊपर है । दृढ़ता का सम्पूर्ण रूप यह है कि अपने चारों ओर विपत्तियों के बादल देखे और ख़ुदा तआला के लिए अपने प्राणों तथा मान मर्यादा को घोर संकट में ग्रसित देखे तथा कहीं से धैर्य देने वाली कोई बात न दिखाई देती हो, यहां तक कि ख़ुदा तआला परीक्षा के रूप में धैर्य और आश्वासन देने वाले कष्फ़ स्वप्न, अथवा इल्हाम (ईशवाणी) आदि को बन्द कर दे तथा भयानक स्थिति में छोड़ दे । उस समय नपुंसकता न दिखावे तथा कायरों के समान पग पीछे न हटावे एवं आज्ञापालन में कोई अन्तर न आवे, और सत्यता और शुद्ध हृदयता में किसी प्रकार की न्यूनता न आने पावे । अपमान को सप्रसन्न स्वीकार करे । मृत्यु को सहर्ष गले से लगा ले । ऐसी विकट परिस्थितियों में दृढ़संकल्प रहने के लिये किसी मित्र की प्रतीक्षा न करे कि वह मेरी कुछ सहायता करे और न ही उस समय ख़ुदा की ओर से शुभसूचना का अभिलाषी हो कि समय और स्थिति विकट है । सर्वथा असहाय बेबस और दुर्बल होने पर भी तथा किसी के द्वारा धैर्य न मिलने पर भी प्रसन्न मन सीधा खड़ा हो जाए और ''जो कुछ भी हो'' कह कर मस्तक को बलिवेदी पर रख दे तथा ख़ुदा तआला की मर्ज़ी के सामने दम न मारे एवं चित्त में उद्विग्नता, घबराहट न आने दे, न ही चीत्कार और क्रन्दन करे और न ही किसी प्रकार का उपालम्भ वाणी पर लाए, जब तक परीक्षा पूरी न हो जाए । यही दृढ़ संकल्प है जिस से ख़ुदा मिलता है, यही वह वस्तु है जिस की अवतारों, पैग़म्बरों, ऋषियों मुनियों, सत्य के प्रेमियों और शहीदों की धूल से अब तक सुगन्धि आ रही है । इसी ओर अल्लाह ज़ल्ला शानुहु इस दुआ में संकेत फ़रमाता है :-

اِهۡدِنَا الصِّرَاطَ الۡمُسۡتَقِيۡمَۙ صِرَاطَ الَّذِيۡنَ اَنۡعَمۡتَ عَلَيۡهِمۡ[1]

एहदेनास्सिरातल् मुस्तकीमा सिरातल् लज़ीना अन्अम्ता अलैहिम ।

---

[1] الفاتحة: ٦،٧

अर्थात् ऐ हमारे ख़ुदा ! हमें दृढ़ता का मार्ग दिखा कि हम सत्यता पर अटल रहें, डिगें नहीं । वही मार्ग जिस पर तेरा पुरस्कार होता है और जिस पर तू प्रसन्न होता है । एक और पवित्र कथन में इसी तथ्य की ओर संकेत है :-

رَبَّنَآ اَفْرِغْ عَلَيْنَا صَبْرًا وَّتَوَفَّنَا مُسْلِمِيْنَ [1]

रब्बना अफ़रिग़ अलैना सबरौं व तवफ़्फ़ना मुस्लेमीन ।

ऐ ख़ुदा ! इस विपत्ति में हमारे हृदय में सन्तोष और शांति की वर्षा कर दे जिस से धैर्य आ जाए और ऐसा कर कि हमारी मृत्यु इस्लाम पर हो ।

ज्ञात होना चाहिये कि दु:खों और कष्टों के समय ख़ुदा तआला अपने प्रिय भक्तों के हृदय पटल पर एक ज्योति उतारता है जिस से शक्ति पाकर कष्टों के साथ संघर्ष करने में उन्हें सन्तोष मिलता है तथा वे विश्वास की मस्ती में उन बेड़ियों को चूमते हैं जो ख़ुदा तआला के मार्ग में उन के पैरों में डाली जाती हैं ।

जब ख़ुदा वाले आदमी पर विपत्तियों का आक्रमण होता है और मृत्यु अपना विकराल मुख खोल लेती है तो वे अपने कृपालू और दयालू ख़ुदा तआला से व्यर्थ की कलह प्रारम्भ नहीं करता कि हमें इन विपत्तियों से सुरक्षित रख । निश्चय ही उस समय कुशलता की प्रार्थना में आग्रह करना ख़ुदा से युद्ध करने के समान है तथा उस की आज्ञाकारिता के विरुद्ध है प्रत्युत सच्चा प्रेमी कष्टों और आपत्तियों के आने पर पग और भी आगे बढ़ाता है और उस समय प्राणों को तुच्छ समझ कर तथा प्राण की मोहब्बत को बिदा कह कर अपने ख़ुदा तआला की इच्छा के अधीन हो जाता है और उसी की प्रसन्नता का आकांक्षी रहता है । उसी के हक़ में अल्लाह तआला फ़रमाता है :-

وَمِنَ النَّاسِ مَنْ يَّشْرِيْ نَفْسَهُ ابْتِغَآءَ مَرْضَاتِ
اللّٰهِ وَاللّٰهُ رَءُوْفٌ بِالْعِبَادِ [2]

व मिनन्नासे मंय्यश्री नफ़्सहुब्तेग़ाअ मरज़ातिल्लाहे वल्लाहो रऊफ़ु म् बिल् इबाद ।

अर्थात् ख़ुदा का प्यारा बंदा अपने प्राणों की बलि ख़ुदा की राह पर देता

له الاعراف: ١٢٧ ٢ه البقرة ٢٠٨

है और उस के बदले में ख़ुदा की इच्छा और उस की प्रसन्नता ख़रीद लेता है । यही वे लोग हैं जिन पर ख़ुदा की विशेष दया और अनुग्रह है । तात्पर्य यह कि वह इस्तक़ामत (दृढ़ता) जिससे ख़ुदा मिलता है उसकी यही रूह है जो ब्यान की गई । जिसको समझना हो समझे ।

सातवां साधन :- परम लक्ष्य की प्राप्ति के लिये सातवां साधन नेक लोगों की संगति करना तथा उन के सम्पूर्ण आदर्शों को देखना और उन पर चलना है । अत: ज्ञात होना चाहिए कि नबियों की आवश्यकताओं में से एक यह भी आवश्यकता है कि मनुष्य स्वाभाविक रूप से सर्वरूप सम्पूर्ण आदर्श चाहता है । सर्वरूप सम्पूर्ण आदर्श मानव की रुचि को बढ़ाता है और उस की उत्सुकता में वृद्धि करता है और उत्साह को उन्नति देता है । जो आदर्श पर नहीं चलता वह मन्दगामी होकर पथभ्रष्ट हो जाता है । इसी की ओर अल्लाह जल्ला शानुहु इस पवित्र कथन में संकेत करता है :-

كُونُوا مَعَ الصّٰدِقِينَ ۝ ١

صِرَاطَ الَّذِينَ أَنْعَمْتَ عَلَيْهِمْ ٢

कूनू मअस्सादेक़ीन । सिरातल् लज़ीना अन्अमता अलैहिम ।

अर्थात् तुम उन व्यक्तियों की संगति में रहो जो सच्चे और सत्यव्रती हैं और उन लोगों के पथ के पथिक बनो जिन पर तुम से पहले कृपावृष्टि और अनुग्रह की वर्षा हो चुकी है ।

आठवां साधन :- आठवां उपाय चरम लक्ष्य को पाने के लिए ख़ुदा तआला की ओर से उस से पवित्र कश्फ़ (स्वप्न की उच्च श्रेणी) तथा पवित्र ईशवाणी और पवित्र स्वप्न प्राप्त करना है । चूंकि ख़ुदा तआला की ओर यात्रा करना एक अति गूढ़ रहस्य और कठिन मार्ग है । उसके साथ नाना प्रकार की विपत्तियाँ, दु:ख और कष्ट लगे हुए हैं । और सम्भव है कि मनुष्य इस अज्ञात मार्ग में पथ भ्रष्ट हो जाए अथवा निराश हो जाए तथा आगे क़दम बढ़ाना छोड़ दे । इस लिए ख़ुदा तआला की कृपा और उसकी अनुग्रह ने यही चाहा कि अपनी ओर से उस यात्रा में साथ साथ उसे धैर्य देती रहे और उसके हृदय को ढारस बन्धाती रहे, उसके उत्साह में वृद्धि और उसकी रुचि में तीव्रता उत्पन्न

---

 ١ التوبة : ١١٩ ٢ الفاتحة : ٧

करती रहे । अतएवं उसका विधान इस पथ के पथिकों के साथ इस प्रकार है कि समय समय पर अपनी पवित्र वाणी और अपने कलाम और इल्हाम (एकान्त ईश वाणी वार्तालाप) से उसको धैर्य देता है तथा यह उन पर प्रकट करता है कि मैं तुम्हारे साथ हूँ । तब वे लोग शक्तिवान होकर पूर्ण उत्साह के साथ और पूर्ण शक्ति लगा कर इस यात्रा को पूर्ण करते हैं । अतः इस सम्बन्ध में ख़ुदा तआला का फ़रमान है कि :-

لَهُمُ الْبُشْرٰى فِى الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَفِى الْاٰخِرَةِ [1]

लहोमुल् बुश्रा फ़िल् हयातिद्दुनिया व फ़िल् आख़िरते ।

अर्थात् उनके लिए इस संसार तथा मृत्योपरान्त परलोक दोनों स्थानों में शुभ-सूचना है ।

इसी प्रकार और भी कतिपय उपाय हैं जो पवित्र क़ुरान ने परम लक्ष्य को प्राप्ति के लिए बताए हैं किन्तु खेद है कि निबन्ध के अधिक विस्तृत हो जाने की आशंका से हम उन का वर्णन नहीं कर सकते ।

*****

---

[1] يونس : ٦٥

प्रश्न नं. 4

इस जीवन में तथा जीवन की समाप्ति के पश्चात् अमली शरीयत (क्रियात्मक धार्मिक विधान) की प्रतिक्रिया क्या है ?

इस प्रश्न का उत्तर वही है जिस का वर्णन हम पहले कर चुके हैं कि ख़ुदा के सच्चे और सर्वरूप सम्पूर्ण शरीअत (धार्मिक विधान) की प्रतिक्रिया जो इस जीवन में मनुष्य के हृदय पर होती है वह यह है कि उसको अमानुषिक स्थिति से मनुष्य बनावे और मनुष्य से सच्चरित्र मनुष्य बनावे, फिर चरित्रवान मनुष्य को ख़ुदा वाला मनुष्य बनावे । इसके अतिरिक्त इस जीवन में अमली शरीअत की एक प्रतिक्रिया यह भी है कि सत्य धर्म के सन्मार्ग पर स्थित हो जाने से ऐसे व्यक्ति का मानव समाज पर यह प्रभाव पड़ता है कि वह क्रमानुगत उनके अधिकारों को पहचानता है और न्याय उपकार तथा सहानुभूति की शक्तियों को अपने अपने अवसरों पर प्रयोग में लाता है तथा जो ख़ुदा ने उसको विद्या, ज्ञान, धन सुखैश्वर्य आदि में से दिया है, सभी को यथोचित इस वैभव में सांझीदार बनाता है । वह समस्त मानव समाज पर सूर्य के समान प्रकाश बरसाता है और चन्द्रमा की भांति अल्लाह से नूर लेकर वह नूर दूसरों तक पहुंचाता है । वह दिन की भांति प्रकाशित होकर पुण्य और कल्याण के मार्ग लोगों को दिखाता है । वह रात्रि की न्याईं प्रत्येक दुर्बल की दुर्बलताओं को छिपाता है तथा थके मान्दों को विश्राम देता है । वह आकाश की भांति प्रत्येक ज़रूरत मंद को अपनी छत्र छाया के नीचे शरण देता है तथा समय पर अपनी वृष्टि करता है । वह पृथ्वी की भांति नम्रता पूर्वक प्रत्येक को सुख देने के लिए एक सुख समृद्धि का रूप बन जाता है तथा सब को अपनी वात्सल्य (गोद) में ले कर तथा भांति-भांति के आध्यात्मिक मेवे और फल उन्हें खिलाता है । अत: यही सच्चे धर्म के सर्वरूप सम्पूर्ण सक्रिय विधान का प्रभाव है कि ऐसे सत्य धर्म पर चलने और उस पर आचरण करने वाला अल्लाह के प्रति, अपने कर्त्तव्यों के प्रति तथा जन समाज और अन्य सभी जीव

जन्तुओं के प्रति अपने कर्त्तव्यों की पालना में चरम सीमा को पहुंच जाता है और ख़ुदा में विलीन होकर सृष्टि का सच्चा सेवक बन जाता है ।

यह तो अमली शरीयत का इस जीवन में उस पर प्रभाव है परन्तु जीवन के पश्चात् जो प्रभाव है वह यह है कि ख़ुदा का रूहानी मिलन उस दिन स्पष्टतया दर्शन के रूप में उसे होगा तथा अल्लाह की सृष्टि की सेवा जो उसने ख़ुदा की मोहब्बत में डूब कर की, जिसका प्रेरक ईमान तथा सत्कर्मों की इच्छायें थीं, वे स्वर्ग के वृक्षों और नहरों के रूप में दिखाई देगी । इसमें ख़ुदा तआला का फ़रमान यह है :-

وَالشَّمْسِ وَضُحٰهَا ۝ وَالْقَمَرِ اِذَا تَلٰهَا ۝ وَالنَّهَارِ اِذَا جَلّٰهَا ۝
وَالَّيْلِ اِذَا يَغْشٰهَا ۝ وَالسَّمَآءِ وَمَا بَنٰهَا ۝ وَالْاَرْضِ وَمَا طَحٰهَا ۝
وَنَفْسٍ وَّمَا سَوّٰهَا ۝ فَاَلْهَمَهَا فُجُوْرَهَا وَتَقْوٰهَا ۝ قَدْ
اَفْلَحَ مَنْ زَكّٰهَا ۝ وَقَدْ خَابَ مَنْ دَسّٰهَا ۝ كَذَّبَتْ ثَمُوْدُ
بِطَغْوٰهَآ ۝ اِذِ انْۢبَعَثَ اَشْقٰهَا ۝ فَقَالَ لَهُمْ رَسُوْلُ اللّٰهِ
نَاقَةَ اللّٰهِ وَسُقْيٰهَا ۝ فَكَذَّبُوْهُ فَعَقَرُوْهَا ۝ فَدَمْدَمَ عَلَيْهِمْ
رَبُّهُمْ بِذَنْۢبِهِمْ فَسَوّٰهَا ۝ وَلَا يَخَافُ عُقْبٰهَا ۝ [1]

वश्शमसे व ज़ोहाहा । वल्क़मरे इज़ा तलाहा, वन्नहारे इज़ा जल्लाहा । वल्लैले इज़ा यग़शाहा । वस्माए व मा बनाहा । वल् अर्ज़े व मा तहाहा । वन्नफ़्से व मा सव्वाहा फ़ अलहमहा फ़ोजूरहा व तक़वाहा । क़द अफ़लहा मन ज़क्काहा । व क़द ख़ाबा मन दस्साहा । कज़्ज़बत समूदो बे तग़वाहा । इज़िम्बअसा अश्क़ाहा । फ़ क़ाला लहुम रसूलुल्लाहे नाक़तल्लाहे व सुक़्याहा । फ़कज़्ज़बूहो फ़ अक़रूहा । फ़ दमदमा अलैहिम रब्बोहम बे ज़म्बेहिम फ़ सव्वाहा । वला यख़ाफ़ो उक़्बाहा ।

अर्थात् शपथ है सूर्य तथा उस के प्रकाश की, और शपथ है चन्द्रमा की

[1] الشمس : ٢ تا ١٦ ،

जब सूर्य का अनुसरण करे अर्थात् सूर्य से प्रकाश प्राप्त करे तथा सूर्य के समान ही उस प्रकाश को दूसरों तक पहुँचावे । और शपथ है दिन की जब सूर्य पूर्णरूप से स्पष्ट दिखावे तथा मार्गों का निर्देशन करे । शपथ है रात्रि की जो अन्धकार फ़ैलाकर अपने अंधेरे के पर्दे में सब को ले ले और शपथ है आकाश की तथा उसके उद्देश्य की जो आकाश की इस बनावट का कारण हुआ और शपथ है पृथ्वी की और उस उद्देश्य की जो पृथ्वी के इस प्रकार बिछौने का कारण हुआ । और शपथ है प्राण की और उसके विकास की जिस ने इन सब पदार्थों के साथ उसको समान कर दिया । अर्थात् वे सम्पूर्णतायें जो नाना रूप में इन पदार्थों में पाई जाती हैं । सिद्ध और पूर्ण मानव की आत्मा इन सब को अपने भीतर एकत्र रखती है और जैसे यह समस्त वस्तुएं पृथक्-पृथक् मानव समाज की सेवा कर रही हैं, पूर्ण मानव इन समस्त सेवाओं को अकेला बजा लाता है । जैसे कि मैं अभी लिख चुका हूँ । और फिर फ़रमाता है कि उस व्यक्ति को मोक्ष मिल गया और मृत्यु से सुरक्षित हो गया, जिस ने इस प्रकार ख़ुद को पवित्र किया अर्थात् सूर्य, चन्द्र और पृथ्वी आदि के समान, ख़ुदा में लीन होकर ख़ुदा की सृष्टि का सेवक बना ।

स्मरण रहे कि जीवन से तात्पर्य अनन्त जीवन है जो कभी समाप्त न हो, जो आगे चल कर पूर्ण मानव को प्राप्त होगा । यह इस बात की ओर संकेत है कि धर्म के क्रियात्मक विधान का फल अगले जीवन में अमर जीवन है जो ख़ुदा के दर्शन रूपी भोजन से सदैव जीवित रहेगा ।

पुनः कहा है कि वह व्यक्ति मिट गया और जीवन से निराश हो गया जिस ने अपनी आत्मा को विनष्ट कर दिया और जिन सम्पूर्णताओं की इस को सामर्थ्य दी गई थी उन सम्पूर्णताओं को प्राप्त न किया तथा अशुद्ध और अपवित्र जीवन व्यतीत करके चला गया । पुनः उदाहरण के रूप में कहा कि "समूद" की घटना उस बदकिस्मत की घटना के समान है । उन्होंने उस ऊंटनी को घायल किया जो ख़ुदा की ऊंटनी कहलाती थी और उसे अपने जलाशय से पानी पीने से रोका। अतः उस व्यक्ति ने निश्चय ही ख़ुदा की ऊंटनी को घायल किया और उस को उस के जलाशय से वंचित रखा। यह इस बात की ओर संकेत है कि मनुष्य की आत्मा ख़ुदा की ऊंटनी है जिस पर वह

सवार होता है अर्थात् मनुष्य का हृदय ख़ुदा के चमत्कारों का स्थान है तथा इस ऊंटनी का पानी ख़ुदा का प्रेम और उस का ज्ञान है जिस से वह जीवित है। पुनः कहा है कि "समूद" ने जब ऊंटनी को घायल किया और उसको उस के पानी से रोका तो उन पर प्रकोप भड़का और ख़ुदा ने इस बात की तनिक भी परवाह न की कि उन की मृत्यु के पश्चात् उन के बच्चों और विधवाओं की क्या दशा होगी । अतः इसी प्रकार जो व्यक्ति इस ऊंटनी अर्थात् आत्मा को घायल करता है और उसे पूर्ण विकसित नहीं होने देता तथा पानी पीने से रोकता है, वह भी विनाश देखेगा ।

पवित्र क़ुरान में आई हुई विभिन्न वस्तुओं की शपथों की फ़्लास्फ़ी

इस स्थान पर यह भी स्मरण रहे कि ख़ुदा का सूर्य, चन्द्र आदि की शपथ खाना एक अति गूढ़ रहस्यात्मक तत्व पर आधारित है जिस पर हमारे अधिकांश विरोधी अनभिज्ञ होने के कारण आक्षेप लगा बैठते हैं कि ख़ुदा को शपथ खाने की क्या आवश्यकता पड़ी और उसने अपनी बनाई हुई वस्तुओं की शपथें क्यों खाईं ? किन्तु चूँकि उनकी सूझ-बूझ पार्थिव और भौतिक है, अपार्थिव एवं आध्यात्मिक नहीं, अतः वे ब्रह्मज्ञान के इन गूढ़ रहस्यों को समझ नहीं सके ।

ज्ञात होना चाहिये कि शपथ खाने से वास्तविक उद्देश्य यह होता है कि शपथ खाने वाला अपने दावा के प्रति एक साक्षी उपस्थित करना चाहता है क्योंकि जिसके दावा पर कोई दूसरा साक्षी नहीं देता तो वह साक्षी के स्थान पर ख़ुदा की शपथ खाता है । इसलिए कि ख़ुदा गुप्त रहस्यों को भी जानने वाला है और प्रत्येक भूमिका में वह प्रथम साक्षी है । मानों ख़ुदा की साक्षी इस प्रकार उपस्थित करता है कि यदि उस क़सम के पश्चात् ख़ुदा मौन रहा और उस पर प्रकोप न भड़काया तो मानों उस व्यक्ति के वर्णन पर साक्षियों की तरह मोहर लगा दी । अतः संसार के किसी व्यक्ति को यह कदापि उचित नहीं कि सृष्टि में से किसी अन्य की शपथ खाए क्योंकि मनुष्य गुप्त ज्ञान नहीं रखता और न ही उसमें झूठी शपथ पर दण्ड देने की सामर्थ्य है । किन्तु ख़ुदा
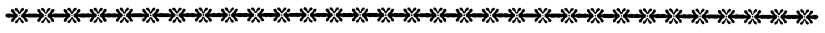
की शपथ इन पवित्र आयतों में इन अर्थों में नहीं जैसा कि ख़ुदा की अन्य सृष्टि की शपथ में समझा जाता है अपितु इस सम्बन्ध में अल्लाह का विधान दो प्रकार की क्रियाओं में विभक्त है । एक वे क्रियाएं जो पूर्ण स्पष्ट हैं जो सब की समझ में आ सकती हैं और उनमें किसी को विरोध नहीं और दूसरे वे काम जो आनुमानित हैं जिसमें संसार के लोग धोखा खा जाते हैं और परस्पर लड़ते झगड़ते हैं । अत: ख़ुदा तआला ने चाहा कि स्पष्ट कार्यों की साक्षी से आनुमानित कार्यों को लोगों की दृष्टि में सिद्ध करे ।

अस्तु, यह तो स्पष्ट है कि सूर्य और चन्द्र, दिन और रात्रि, आकाश एवं पृथ्वी में वे विशेषताएं वस्तुत: पाई जाती हैं जिनका हम उल्लेख कर चुके हैं । किन्तु इस प्रकार की जो विशेषताएं और गुण मानव जीवन में विद्यमान हैं, उनमें प्रत्येक व्यक्ति अवगत नहीं । अत: ख़ुदा तआला ने अपने स्पष्ट कार्यों को आनुमानित कार्यों के अभिव्यक्त करने के लिए साक्षी रूप में उपस्थित किया है । मानो उसका कहना है कि यदि तुम इन विशेषताओं के प्रति सन्देह में हो जो मानव स्वभाव में पाई जाती हैं तो चन्द्र, सूर्य आदि पर विचार करो कि उनमें स्पष्टतया यह गुण विद्यमान हैं, । तुम जानते हो कि मनुष्य एक लघु संसार है जिसके मानस-पटल पर समस्त जगत का मानचित्र सूक्ष्म रूप में अंकित है फिर जब यह सिद्ध है कि विराट् विश्व के बड़े-बड़े नक्षत्र ये गुण अपने भीतर रखते हैं और इसी प्रकार सृष्टि को लाभान्वित कर रहे हैं तो मनुष्य जो इन सब से महान् कहलाता है सर्वश्रेष्ठ सृष्टि के रूप में इसका जन्म हुआ है वह किस प्रकार इन गुणों से वञ्चित होगा ? नहीं, अपितु इसमें भी सूर्य की न्याईं एक ज्ञान और बुद्धि का प्रकाश है जिसके द्वारा वह सभी को प्रकाशित कर सकता है तथा चन्द्रमा के समान वह अपने अल्लाह से उसका दीदार और इल्हाम और वही का (आकाश वाणी) नूर पाता है और दूसरों तक जिन्होंने मानवीय कौशल अभी तक प्राप्त नहीं किया उस ज्योति को पहुँचाता है । फिर किस प्रकार कह सकते हैं कि ''नबुव्वत'' (अवतारवाद) निरर्थक है और समस्त, धर्म-ग्रन्थ, धर्म-विधान और धर्म-शास्त्र मानव की मक्कारी तथा उसका प्रपञ्च और उसकी स्वार्थपरता का फल हैं ? यह भी देखते हो कि किस प्रकार दिन के उदय होने से समस्त मार्ग स्पष्ट दिखाई देने
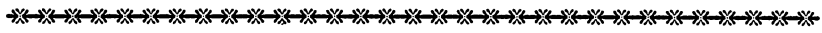
लगते हैं और समस्त ऊबड़ खाबड़ भूमि दृष्टिगोचर होने लगती है । अतः पूर्ण मानव आध्यात्मिक प्रकाश का दिन है । उसके उदय होने से प्रत्येक मार्ग स्पष्ट हो जाता है । वह सत्य मार्ग का पथ प्रदर्शन करता है कि कहाँ और किधर है क्योंकि सत्य, तथा सच्चाई का वही निखरा हुआ दिवस है । इसी प्रकार यह भी हो कि रात्रि किस प्रकार थके मान्दों को विश्राम देती है । दिन भर के हैरान-परेशान और थके मान्दे श्रमिक रात्रि की सुख शय्या पर प्रसन्न मन सोते और विश्राम करते हैं । रात्रि प्रत्येक के लिए एक पर्दे का भी काम देती है । इसी प्रकार ख़ुदा के पूर्ण भक्त और सिद्ध पुरुष संसार को सुख तथा आराम पहुँचाने के लिए आते हैं । ख़ुदा से इल्हाम पाने वाले समस्त बुद्धिमानों को जीवन की कटुताओं और कष्टों से विश्राम देते हैं । उनके द्वारा बड़े बड़े ज्ञान बड़ी सरलता से सुलझ जाते हैं । इसी प्रकार ख़ुदा की वही मानवीय बुद्धि की त्रुटियों को छिपाती है । जैसा कि रात छुपाती है । उस की अपवित्र गल्तियों को दुनिया पर ज़ाहिर नहीं होने देती क्योंकि बुद्धिमान वही (आकाशवाणी) की अलौकिक ज्योति को पाकर भीतर ही अपनी ग़ल्तियों का सुधार कर लेते हैं और ख़ुदा के पवित्र इल्हाम की बरकत में अपने आपको ऐबों से बचा लेते है । यही कारण है कि प्लेटो की भांति इस्लाम के किसी दार्शनिक ने किसी मूर्ति पर मुर्ग़े की बलि नहीं चढ़ाई । चूँकि प्लेटो इल्हाम के अलौकिक प्रकाश और उसके पुण्य प्रताप से वञ्चित रहा इसलिए धोखा खा गया और इतना बड़ा दार्शनिक कहला कर इस प्रकार की घृणित एवं अज्ञानता की क्रिया उससे हो गई । किन्तु इस्लाम के तत्ववेत्ताओं और दार्शनिकों को ऐसे अपवित्र और अज्ञानता के दोषपूर्ण कर्मों से हमारे परम प्रिय सरदार पैग़म्बरे इस्लाम हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहो अलैहि वसल्लम के अनुसरण ने बचा लिया । अब देखो किस प्रकार सिद्ध हुआ कि इल्हाम बुद्धिमानों के लिए रात्रि के समान पर्दे का काम करती है ।

यह भी आप लोग जानते हैं कि ख़ुदा के कामिल बंदे आकाश की तरह प्रत्येक थके मांदे को अपनी छत्रछाया के नीचे लेते हैं, विशेष कर उस पावन सत्ता ख़ुदा के नबी और इल्हाम पाने वाले साधारणतया आकाश की भांति कृपावृष्टि करते हैं । इसी प्रकार पृथ्वी के गुण भी अपने भीतर रखते हैं ।

उनके अस्तित्व से नाना प्रकार के पवित्र ज्ञान के वृक्ष उगते हैं जिनकी शीतल छाया तथा मधुर फल और फूलों से लोग लाभ उठाते हैं । अत: यह स्पष्ट रूप से प्राकृतिक विधान जो हमारी दृष्टि के सम्मुख है उसी छिपे हुए विधान की एक साक्षी है जिस की साक्षी को शपथों के रूप में ख़ुदा ने इन पवित्र कथनों में उपस्थित किया है ।

सो देखो कितनी रहस्मय वाणी है जो पवित्र क़ुरान में पाई जाती है । यह पवित्र वाणी उसके मुख से निकली जो एक अनपढ़ और जंगल का निवासी था । यदि यह ख़ुदा का कलाम न होता तो इस प्रकार जनसाधारण तथा बड़े-बड़े पढ़े लिखे शास्त्री और ज्ञानी लोग उसके इस सूक्ष्म तथ्य और गूढ़ रहस्य को समझने में विवश होकर आक्षेप और ऐतिराज़ के रूप में उसे न देखते। यह एक सीधी सी बात है कि मनुष्य जब एक बात को किसी प्रकार से भी अपनी कम-बुद्धि से नहीं समझ सकता तब उस सूक्ष्म तत्व और रहस्य की बात पर आरोप लगा देता है । उसका वह आक्षेप और आरोप इस बात का साक्षी हो जाता है कि वह गूढ़ तत्व साधारण बुद्धि स्तर से महान् था । तभी तो बुद्धिमानों ने अपने को बुद्धिमान कहला कर, फिर भी उस पर आरोप लगा दिया किन्तु अब जो यह गूढ़ रहस्य खुल गया तो अब इस के बाद कोई बुद्धिमान इस पर शंका नहीं करेगा अपितु इस से आनन्द उठाएगा ।

स्मरण् रहे कि पवित्र क़ुरान ने वही और इल्हाम के आदिकालीन विधान पर प्राकृतिक विधान से साक्षी उपस्थित करने के लिए एक अन्य स्थान पर भी इसी प्रकार की शपथ खाई है और वह यह है :-

وَالسَّمَآءِ ذَاتِ الرَّجْعِ ۙ وَالْاَرْضِ ذَاتِ الصَّدْعِ ۙ
اِنَّهٗ لَقَوْلٌ فَصْلٌ ۙ وَّمَا هُوَ بِالْهَزْلِ ؕ [1]

वस्समाये ज़ातिर्रजए । वल् अर्ज़े ज़ातिस्सद्ये । इन्नहू लक़ौलुन फ़स्लुन । व मा होवा बिल् हज़्ले ।

अर्थात् उस आकाश की शपथ है जिस की ओर से वर्षा आती है और उस पृथ्वी की शपथ है जो वर्षा से नाना प्रकार की सब्ज़ियां और तरकारियां निकालती है, कि यह पवित्र क़ुरान ख़ुदा का कलाम है और उस की पवित्र वाणी है । और वह सत्य और असत्य में निर्णय करने वाला है । व्यर्थ और

---

[1] الطارق : ١٢ تا ١٥

निरर्थक नहीं अर्थात् असमय पर नहीं आया अपितु ऋतु के मेंह के समान आया है ।

अब ख़ुदा ने पवित्र क़ुरान के प्रमाण के लिए, जो उस का कलाम है एक सुस्पष्ट प्राकृतिक विधान को शपथ के रूप में उपस्थित किया है अर्थात् प्राकृतिक विधान में सदैव यह बात पाई जाती है कि आवश्यकतानुसार समय पर वर्षा होती है और पृथ्वी की सम्पूर्ण हरियाली का एक मात्र आधार आकाश से आने वाली वर्षा ही है । यदि आकाश से वर्षा न हो तो शनैः शनैः कुएं भी सूख जाते हैं । अतः यह बात निर्णीत है कि पृथ्वी के जल का अस्तित्व भी आकाश के जल पर ही आश्रित है । यही कारण है कि जब कभी आकाश से जल की वर्षा होती है तो पृथ्वी के कुओं का भी जल ऊपर चढ़ आता है । क्यों चढ़ आता है ? इस का यही कारण है कि आकाश का जल पृथ्वी के जल को ऊपर की ओर खींचता है । यही सम्बन्ध और यही नाता अल्लाह की वही (ईश वाणी) और बुद्धि में है । अल्लाह की वही अर्थात् इलाही वाणी आसमानी पानी है बुद्धि ज़मीनी पानी है । यह जल सदैव आकाश के जल से जो इल्हाम है (इलाही वाणी) प्रशिक्षण पाता है । यदि आकाश का जल अर्थात् वही होना बन्द हो जाए तो यह ज़मीनी पानी भी शनैः शनैः शुष्क हो जाता है । क्या इस के लिए यह सुबूत पर्याप्त नहीं कि जब एक लम्बा ज़माना बीत जाता है और कोई इल्हाम पाने वाला ज़मीन पर पैदा नहीं होता तो बुद्धिमानों की बुद्धियाँ गंदी और खराब हो जाती हैं । जैसे ज़मीनी पानी शुष्क हो जाता है और सड़ जाता है ।

इस के समझने के लिए उस युग पर एक दृष्टि डालना पर्याप्त है जो हमारे नबी सल्लल्लाहो अलैहि वसल्लम के आगमन से पूर्व अपना रंग समस्त संसार पर दिखला रहा था । चूंकि उस समय हज़रत मसीह अलैहिस्सलाम के युग को छः सौ वर्ष बीत चुके थे और इस अवधि में कोई इल्हाम लाने वाला पैदा नहीं हुआ था । इसलिये समस्त संसार ने अपनी हालत को ख़राब कर दिया था । प्रत्येक देश का इतिहास पुकार-पुकार कर कह रहा है कि आँज़रत सल्लल्लाहो अलैहि वसल्लम के समय में मगर आप के प्रादुर्भाव से पूर्व-समस्त संसार के विचारों में भयानक विकार आ चुका था। ऐसा क्यों हुआ था ? और
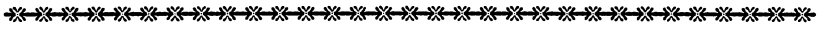
उस का क्या कारण था ? यही तो था कि इल्हाम का क्रम दीर्घकाल तक बंद हो गया था । आकाशीय शासन केवल अक़ल के हाथ में था । अत: इस कम अक़्ली ने किन-किन ख़राबियों में लोगों को डाला । क्या इस से कोई ना वाकिफ़ भी है ? देखो इल्हाम का पानी जब दीर्घकाल तक नहीं बरसा तो सब अक़्लों का पानी कैसा शुष्क हो गया !

अत: इन शपथों में यही प्राकृतिक विधान अल्लाह तआला उपस्थित करता है और फ़रमाता है कि तुम विचार कर के देखो कि क्या ख़ुदा का यह दृढ़ और अटल प्राकृतिक नियम नहीं कि पृथ्वी की सम्पूर्ण हरियाली का आधार आकाश का जल है ? अतएव इस गुप्त प्राकृतिक नियम के लिए जो इलाही इल्हाम का क्रम है, यह प्रत्यक्ष प्राकृतिक विधान एक साक्षी के रूप में है । अत: इस गवाह से लाभ उठाओ और केवल बुद्धि को अपना पथ-प्रदर्शक मत बनाओ क्योंकि वह ऐसा जल नहीं जो आकाशीय जल के बिना स्थिर रह सके। जिस प्रकार आकाश के जल की यह विशेशत: है कि चाहे उस का जल किसी कुएं में पड़े या न पड़े । वह अपने स्वाभाविक गुणों से समस्त कुओं के जल को ऊपर चढ़ा देता है । इसी प्रकार जब ख़ुदा से एक इल्हाम पाने वाला संसार में प्रकट होता है तो चाहे कोई बुद्धिजीवी उस का अनुकरण करे या न करे; किन्तु उस इल्हाम पाने वाले के युग में स्वयमेव बुद्धिजीवियों में ऐसी ज्योति और निखार आ जाता है जो उस से पूर्व नहीं था । लोग यूँ ही सत्यता की खोज में लग पड़ते हैं तथा परोक्ष से एक हरकत उनकी विचारशक्ति में पैदा हो जाती है । अत: यह समस्त बौद्धिक उन्नति और हार्दिक उत्साह उस इल्हाम पाने वाले के मुबारक चरणों से पैदा हो जाता है । और अपने स्वाभाविक गुण से ज़मीनी पानी को ऊपर उठा देता है । जब तुम देखो कि धार्मिक खोज-बीन में प्रत्येक व्यक्ति खड़ा हो गया है और ज़मीनी पानी में कुछ ज्वार आ गया है तो उठो तथा सचेत और सावधान हो जाओ एवं निश्चित समझो कि आकाश से ज़ोर का मेंह बरसा है और किसी हृदय पर इल्हामी वर्षा हो गई है ।

*****

※※※※※※※※※※※※※※※※※※※※※※※※※※※※※※

प्रश्न नं. 5

इलाही मअरिफ़त (ख़ुदा की पहचान) के साधन

इस प्रश्न के उत्तर में विदित होना चाहिए कि इस विषय को जितना क़ुरान शरीफ़ ने स्पष्ट किया है उस का पूर्ण रूप से यहां वर्णन नहीं हो सकता किन्तु उदाहरण के रूप में कुछ तथ्यों का उल्लेख किया जाता है।

स्मरण रहे कि क़ुरान शरीफ़ ने ज्ञान तीन प्रकार का बताया है इल्मुल यक़ीन अर्थात् (अनुमानित ज्ञान), ऐनुलयक़ीन अर्थात् (दृष्टिगत ज्ञान) तथा हक़्क़ुल यक़ीन अर्थात् (प्रयोगात्मक ज्ञान)

जैसा कि इस से पूर्व हम सूर: ''अल्हाकोमोत्कासुर'' की व्याख्या में उल्लेख कर चुके हैं कि आनुमानित ज्ञान वह है कि जिस चीज़ को प्राप्त करना हो उसे किसी साधन के बिना नहीं अपितु साधन के द्वारा पता लगाया जाए । जैसा कि हम धुएं से अग्नि के अस्तित्व का अनुमान कर लेते हैं । हमने अग्नि को नहीं, अपितु धुएं को देखा है जिस से हमें अग्नि के अस्तित्व पर विश्वास हुआ । अत: यह इल्मुल यक़ीन (आनुमानित ज्ञान) है और हम ने यदि अग्नि को ही देख लिया है तो यह पवित्र क़ुरान अर्थात् सूर: ''अल्हाकोमोत्कासुर'' के अनुसार ज्ञान की श्रेणियों में से अैनुल यक़ीन (दृष्टिगत ज्ञान) के नाम से जाना जाएगा । यदि हम उस अग्नि में प्रविष्ट भी हो गए तो ज्ञान के इस रूप का नाम क़ुरान शरीफ़ के अनुसार हक़्क़ुलयकीन (प्रयोगात्मक ज्ञान) है । सूर: ''अल्हाकोमोत्कासुर'' के पुन: लिखने की आवश्यकता नहीं । पाठक गण उस स्थल से इसकी व्याख्या स्वंय देख लें ।

अब ज्ञात होना चाहिए कि प्रथम प्रकार का ज्ञान जिसे इल्मुल यकीन (आनुमानित ज्ञान) कहते हैं उस का साधन बुद्धि तथा श्रुतियां हैं । अल्लाह तआला नारकीय लोगों को एक हिकायत के रूप में फ़रमाता है :-

قَالُوْا لَوْ كُنَّا نَسْمَعُ اَوْ نَعْقِلُ مَا كُنَّا فِيْٓ اَصْحٰبِ السَّعِيْرِ ۝ ¹

---

¹ الملك : ١١

"क़ालू लौ कुन्ना नस्मओ औ नअकिलो मा कुन्ना फ़ी असहाबिस्सईर ।"

अर्थात् दोज़खी (नारकीय) कहेंगे कि यदि हम बुद्धिमान होते और धर्म तथा विश्वास को उचित प्रकार से आज़माने अथवा समपूर्ण बुद्धिमानियों व और खोजियों के लेखों और उनके व्याख्यानों को ध्यानपूर्वक पढ़ते या सुनते तो आज दोज़ख में न पड़ते ।

यह आयत इस दूसरी आयत की पुष्टि करती है जहाँ अल्लाह तआला फ़र्माता है :-

لَا يُكَلِّفُ اللّٰهُ نَفْسًا اِلَّا وُسْعَهَا ۔ ؎

लायुकल्लेफ़ुल्लाहो नफ़्सन इल्ला वुसअहा

अर्थात् ख़ुदा तआला इनसानों को उनके ज्ञान की शक्ति से अधिक किसी बात को स्वीकार करने के लिए बाध्य नहीं करता और वही सिद्धान्त उपस्थित करता है जिनका समझना मानव की ताकत में है ताकि उसके आदेश मनुष्य की शक्ति के बाहर और असह्य न हों । और इन आयतों में इस बात की ओर संकेत है कि मनुष्य कानों के द्वारा भी इल्मुल यकीन (आनुमानित ज्ञान) प्राप्त कर सकता है । उदाहरणतया हमने लंडन तो नहीं देखा । केवल देखने वालों से उस शहर का अस्तित्व सुना है किन्तु क्या हम सन्देह कर सकते हैं कि कदाचित् इन सबने झूठ बोल दिया होगा ? अथवा जैसे हमने सम्राट् आलमगीर का समय नहीं पाया और न आलमगीर का मुख देखा है किन्तु क्या हमें इस बात में तनिक भी सन्देह हो सकता है कि आलमगीर चुग़ताई शासकों में से एक शासक था । अत: ऐसा विश्वास कैसे प्राप्त हुआ ? इस का उत्तर यही है कि बार बार सुन्ने से अस्तु, इसमें सन्देह नहीं कि सुनना भी आनुमानित ज्ञान तक पहुँचाता है । नबियों की किताबें यदि सुनने सुनाने की श्रृखला में कुछ बाधा न डालें तो वे भी श्रवण किए हुए ज्ञान का एक साधन हैं किन्तु यदि एक पुस्तक आसमानी पुस्तक कहला कर फिर उदाहरणतय उसकी पचास साठ प्रतियाँ उस की पाई जाएं तथा वे प्रतियाँ परस्पर एक दूसरे की विरोधी हों तो यद्यपि किसी संगठन ने विश्वास भी कर

؎ البقرة : ۲۸۷

लिया हो कि उनमें से केवल दो चार शुद्ध और यथार्थ हैं और शेष बनावटी हैं। किन्तु एक खोजी या तहकीक करने वाले के लिए ऐसा ज्ञान जो किसी भी दृष्टि से सम्पूर्ण और शुद्ध खोज पर आधारित नहीं, व्यर्थ होगा । परिणाम इसका यह होगा कि वे सभी किताबें परस्पर एक दूसरे में समानता न होने के कारण रद्दी तथा अविश्वसनीय ठहरेंगी तथा यह कदापि उचित नहीं होगा कि ऐसे परस्पर विरोधी सिद्धान्तों को किसी ज्ञान का साधन समझा जाए क्योंकि शुद्ध ज्ञान की परिभाषा यह है कि एक विश्वस्त और सूक्ष्म तत्व अथवा मअरिफ़त का निर्धारण करे, परन्तु मत-भेद पाए जाने वाली किताबों में किसी प्रकार का निश्चित और यकीनी ज्ञान का पाया जाना सम्भव नहीं ।

इस स्थान पर स्मरण रखना चाहिए कि क़ुरान शरीफ़ केवल सुनने की सीमा तक सीमित नहीं है क्योंकि उसमें मनुष्य को समझाने के लिए बड़े-बड़े अकाट्य तर्क और उक्तियाँ हैं तथा उसने जितने भी सिद्धान्त और नियम तथा उपनियम उपस्थित किए हैं उनमें से कोई भी ऐसा नहीं जिसमें ज़बर दस्ती और बलप्रयोग किया गया हो । जैसा कि उसने स्वयं कहा है कि समस्त नियम-उपनियम मनुष्य की प्रकृति में प्राचीन काल से अंकित हैं और क़ुरान शरीफ़ का नाम ''ज़िक्र'' रखा है जैसा कि फ़रमाता है

هٰذَا ذِكْرٌ مُّبَارَكٌ[1]

हाज़ा ज़िक्रुम्मुरबारकुन ।

अर्थात् यह पवित्र क़ुरान कोई नवीन वस्तु नहीं लाया प्रत्युत जो कुछ मानव प्रकृति और सृष्टि में भरा पड़ा है उसे स्मरण कराता है । पुनः एक अन्य स्थान पर फ़रमाता है :-

لَآ إِكْرَاهَ فِي الدِّيْنِ[2]

ला इकराहाफ़िद्दीन ।

अर्थात् यह दीन कोई बात ज़बरदस्ती से मनवाना नहीं चाहता अपितु प्रत्येक बात के ठोस प्रमाण उपस्थित करता है । इसके अतिरिक्त पवित्र, क़ुरान में मानव-हृदय में ज्योति का प्रसार करने का रूहानी गुण भी है । जैसा कि वह फ़रमाता है :-

[1] الانبیاء : ۵۱ ، [2] البقرة : ۲۵۷ ،

شِفَآءٌ لِّمَا فِى الصُّدُوْرِ ۙ[1]

शिफ़ाउल्लिमा फ़िस्सुदूर ।

अर्थात् पवित्र क़ुरान अपने अलौकिक अद्भुत गुणों से समस्त रूहानी रोगों को दूर करता है अतः उसको मनकूली (दूसरी किताबों से नकल की जाने वाली) पुस्तक नहीं कह सकते अपितु वह सर्वोच्च अकली तर्कों को अपने साथ रखता है और एक उज्जवल ज्योति उसमें पाई जाती है । इसी प्रकार बौद्धिक तर्क जिनकी आधारशिला शुद्ध और सरल पृष्ठभूमि पर हो, निस्सन्देह आनुमानित ज्ञान तक पहुंचाते हैं । इसी की ओर अल्लाह जल्ला शानुहु निम्नांकित पंक्तियों में संकेत करता है । जैसे कि उसका कथन है :-

اِنَّ فِىْ خَلْقِ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ وَاخْتِلَافِ الَّيْلِ وَالنَّهَارِ
لَاٰيٰتٍ لِّاُولِى الْاَلْبَابِ ۝ الَّذِيْنَ يَذْكُرُوْنَ اللّٰهَ قِيَامًا
وَّقُعُوْدًا وَّعَلٰى جُنُوْبِهِمْ وَيَتَفَكَّرُوْنَ فِىْ خَلْقِ السَّمٰوٰتِ
وَالْاَرْضِ ۚ رَبَّنَا مَا خَلَقْتَ هٰذَا بَاطِلًا ۚ سُبْحٰنَكَ فَقِنَا
عَذَابَ النَّارِ ۝ [2]

इन्न फ़ी ख़लक़िस्समावाते वल अर्ज़े वख़्तिलाफ़िल्लैले वन्नहारे ल आयातिल्ले उलिल् अल्बाब । अल्लज़ीना यज़्कोरूनल्लाहा क़यामौं व क़ोऊदौं व अला जुनूबेहिम व यतफ़क्करूना फ़ी ख़लक़िस्समावाते वल अर्ज़े । रब्बना मा ख़लक़्ता हाज़ा बातिला । सुबहानका फ़ क़ेना अज़ाबन्नार ।

अर्थात् जब विचारवान् और प्रतिभावान् पुरुष पृथ्वी और आकाश के नक्षत्रों की बनावट में गौर करते हैं तथा रात्रि और दिन के घटने बढ़ने के कारणों और उसकी प्रेरक शक्तियों को सूक्ष्म दृष्टि से देखते और उस पर गम्भीर चिन्तन करते हैं तो उन्हें इस ब्रह्माण्ड की रचना पर दृष्टिपात करने से ख़ुदा तआला की सत्ता पर एक मज़बूत प्रमाण मिलता है । अतः वह

---

[1] یونس : ۵۸ [2] اٰل عمران : ۱۹۱ و ۱۹۲

अधिक खोज बीन के लिए ख़ुदा तआला से मदद चाहते हैं । वे लोग उसको खड़े होकर और बैठ कर और करवट पर लेट कर स्मरण करते हैं । जिस से उनकी बुद्धियाँ बहुत साफ़ हो जाती है । अतः जब वे अपनी इन अकलों के द्वारा सौर मण्डल के अगणित ग्रहों और उनकी क्रियाओं तथा पृथ्वी की अति सुन्दर बनावट पर विचार करते हैं तो सहसा उनकी वाणी से यही निकलता है कि यह विश्व-चक्र जो सर्व प्रकार से सम्पूर्ण और अपने भीतर एक दृढ़ व्यवस्था रखता है, कदापि व्यर्थ और अनुपयोगी नहीं प्रत्युत उसमें सानेअ-हक़ीक़ी (विश्वकर्मा) की प्रतिछाया दिखाई दे रही है । वह उस बनाने वाले की ख़ुदाई का इकरार करके यह दुआएं करते हैं हे अल्लाह तू इस से पवित्र है कि कोई तेरे अस्तित्व से इन्कार कर के अनुचित और अयोग्य दुर्गुण से तुझे संम्बधित करे तू इन से बहुत दूर है, यह आक्षेप तेरे तक कभी नहीं पहुंच सकते । अतः तू हमें दोज़ख की आग से बचा अर्थात् तेरी सत्ता का इनकार सर्वथा नरक है तथा हर प्रकार का सुख, चैन तथा सन्तोष तेरे पहचानने में है । जो व्यक्ति तेरी पावन सत्ता को पहचानने से वञ्चित रहा वे निश्चय ही इसी संसार में अग्नि में हैं ।

मानवीय नेचर की वास्तविकता

इसी प्रकार ज्ञान का एक साधन मानवीय अन्तरात्मा भी है । जिस का नाम ख़ुदा की किताब में इन्सानी स्वभाव रखा है । जैसा कि अल्लाह तआला फ़रमाता है :-

فِطْرَتَ اللّٰهِ الَّتِیْ فَطَرَ النَّاسَ عَلَیْهَا ۖ

फ़ितरतल्लाहिल्लती फ़तरन्नासा अलैहा ।

अर्थात् अल्लाह तआला की प्रकृति और उस का स्वभाव जिस पर मानव की उत्पत्ति हुई हैं, वह प्रकृति का स्वरूप क्या है यही कि ख़ुदा को वाहिद ला शरीक (अकेला और जिस का कोई साथी नहीं) समझना ख़ालिकुल कुल (सबका पैदा करने वाला) जन्म-मरण से पवित्र और उच्च समझना और हम मानव अन्तरआत्मा को आनुमानित ज्ञान के स्तर पर इसलिए रखते हैं कि यद्यपि प्रत्यक्ष रूप में इस में एक ज्ञान से दूसरे ज्ञान की ओर हमारा ध्यान

ؐ الروم : ٣١

परिवर्तित नहीं होता । जैसा कि धुएं के ज्ञान से अग्नि के ज्ञान की ओर हमारा ध्यान परिवर्तित हो जाता है तथापि एक प्रकार के सूक्ष्म स्थानान्तरण से यह श्रेणी खाली नहीं और वह यह है कि प्रत्येक वस्तु में ख़ुदा ने एक अज्ञात गुण रखा है जिस का मौखिक रूप में वर्णन करना कठिन है । किन्तु उस वस्तु पर दृष्टि डालने और उस का अनुमान करने से शीघ्र ही उस गुण की ओर ध्यान परिवर्तित हो जाता है । इस का तात्पर्य यह है कि वह गुण उसके अस्तित्व के साथ ऐसा जुड़ा हुआ है जैसा कि अग्नि के साथ धुएं का सम्बन्ध जुड़ा हुआ है । उदाहरणतया जब हम ख़ुदा की सत्ता पर विचार करते हैं कि कैसी होनी चाहिए ? क्या वह ऐसा होना चाहिए कि हमारे समान जन्म ले और हमारे समान दुःख उठावे तथा हमारे समान ही मरे तो तुरन्त इस विचार से हमारे हृदय और हमारी अन्तरआत्मा थर्राने और पीड़ा का अनुभव करने लगती है और इतना वेग प्रदर्शित करती है कि मानों उस विचार को धक्के देती है और कहती है कि वह ख़ुदा जिस की शक्तियों पर समस्त आशाओं का आधार खड़ा है वह सर्व प्रकार की त्रुटियों से पवित्र, सम्पूर्ण तथा सबल चाहिये। और जब ही ख़ुदा की कल्पना हमारे हृदय पर ज़ाहिर होता है तो शीघ्र ही ख़ुदा और तौहीद में अग्नि और धुएं की भांति अपितु उस से भी बढ़ कर सम्पूर्ण एकता अखंडता का भाव हामरे मन में जाग उठता है ।

अतएव जो ज्ञान हमें हमारी अन्तरआत्मा के द्वारा प्राप्त होता है वह इल्मुल यकीन (आनुमानित ज्ञान) के प्रकार में सम्मिलित है किन्तु इसके आगे एक और श्रेणी है जो ऐनुल यकीन (दृष्टिगत अर्थात् नेत्रों द्वारा देखा हुआ ज्ञान है) और इस श्रेणी के ज्ञान से वह ज्ञान अभीष्ट है कि जब हमारे विश्वास तथा उस वस्तु में जिस पर किसी प्रकार का विश्वास किया गया है इन में कोई संबन्ध न हो । जैसे जब हम सूंघने की शक्ति के द्वारा सुगन्ध अथवा दुर्गन्ध का ज्ञान प्राप्त करते हैं अथवा स्वाद चखने की शक्ति से मीठे या नमकीन स्वाद का पता लगाते हैं, अथवा स्पर्श करने की शक्ति द्वारा शीत या गर्मी का अनुभव करते हैं । अतः यह सभी प्रकार का ज्ञान देखे हुए ज्ञान के भाग में आता है । किन्तु दूसरी दुनिया के बारे में हमारा रूहानी इल्म उस समय दृष्टिगत ज्ञान की सीमा तक पहुँचता है जब कि स्वयं हम स्वतन्त्र रूप

से इल्हाम (अल्लाह का कलाम) प्राप्त करें, ख़ुदा की आवाज़ को अपने कानों से सुनें और ख़ुदा के साफ़ और शुद्ध कशफ़ों को अपनी आंखों से देखें यह बात असन्दिग्ध है कि हमें पूर्ण रूप से ख़ुदा की पहचान और मअरिफ़त की प्राप्ति के लिए स्वतन्त्र रूप से इल्हाम की आवश्यकता है तथा हम उस पूर्ण ब्रह्म-ज्ञान की अपने हृदय में भूख और तृष्णा भी अनुभव करते हैं । यदि ख़ुदा तआला ने हमारे लिए पहले से इस मअरिफ़त (ख़ुदा की पहचान) की सुव्यवस्था नहीं की तो यह तृष्णा और भूख हमें क्यों लगा दी है ? क्या हम इस जीवन में जो हमारे परलोक की पूँजी के लिये यही एक माप दण्ड है, इस बात पर सहमत हो सकते हैं कि हम उस सच्चे सम्पूर्ण सर्वशक्तिमान और सजीव ख़ुदा पर केवल मात्र कहानियों और काल्पनिक कथाओं के रूप में विश्वास रखें अथवा केवल बौद्धिक ज्ञान को ही पर्याप्त समझ लें जो अब तक त्रुटि-पूर्ण और अपूर्ण ज्ञान है ? क्या ख़ुदा तआला के सच्चे प्रेमियों और आशिकों का हृदय नहीं चाहता कि उस परमप्रिय की पवित्र वाणी का आनन्द प्राप्त करें ? क्या वे लोग जिन्होंने ख़ुदा के लिए समस्त संसार को ठोकर से मार दिया, हृदय और प्राण सभी कुछ समर्पित कर दिए; वे इस बात पर सहमत हो सकते हैं कि केवल एक अस्पष्ट और धुन्धले प्रकाश में खड़े रह कर मरते रहें और उस सच्चाई के सूर्य के दर्शन न करें ? क्या यह सत्य नहीं है कि उस सजीव ख़ुदा का "अनल् मौजूद" अर्थात् "मैं मौजूद हूँ" कहना वह ज्ञान-ज्योति प्रदान करता है कि यदि विश्व के समस्त दार्शनिकों और मीमांसकों की स्वरचित पुस्तकें एक ओर रखें और एक ओर "अनल्मौजूद" अर्थात् ("मैं मौजूद हूँ") ख़ुदा का कहना रखें तो इस के सम्मुख वे सभी पुस्तकों के ढेर तुच्छ और नगण्य हैं ? अस्तु, जो दार्शनिक कहला कर आप अन्धे रहे वे हमें क्या शिक्षा देंगे ? कहने का तात्पर्य यह है कि यदि ख़ुदा ने सत्य के जिज्ञासुओं को पूर्ण मअरिफ़त देने का निश्चय किया है तो अवश्य उसने बात चीत करने और बन्दो को सम्बोधन करने का रास्ता खुला रखा है, इस सम्बन्ध में अल्लाह जल्ला शानहु क़ुर्आन शरीफ़ में यह फ़रमाता है :-

اِهْدِنَا الصِّرَاطَ الْمُسْتَقِيْمَ ۙ صِرَاطَ الَّذِيْنَ

اَنْعَمْتَ عَلَيْهِمْ [1]

एहदिनस्सिरात्वल् मुस्तक़ीमा सिरात्वल्लज़ीना अनअमता अलैहिम् ।

अर्थात् हे अल्लाह ! हमें दृढ़ विश्वास का वह सीधा मार्ग बतला जो उन लोगों का मार्ग है जिन पर तेरा पुरस्कार हुआ । इस स्थान पर पुरस्कार से तात्पर्य अल्लाह की ईशवाणी तथा अल्लाह का साक्षात्कार और आध्यात्मिक सूक्ष्म ज्ञान है जो मानव को अल्लाह की ओर से निर्बाध रूप से मिलता है ।

इसी प्रकार एक अन्य स्थान पर फ़रमाता है :-

اِنَّ الَّذِيْنَ قَالُوْا رَبُّنَا اللّٰهُ ثُمَّ اسْتَقَامُوْا تَتَنَزَّلُ عَلَيْهِمُ
الْمَلٰٓئِكَةُ اَلَّا تَخَافُوْا وَلَا تَحْزَنُوْا وَاَبْشِرُوْا بِالْجَنَّةِ الَّتِيْ
كُنْتُمْ تُوْعَدُوْنَ [2]

इन्नल्लज़ीना क़ालू रब्बोनल्लाहो सुम्मस्तक़ामू ततनज़्ज़लो अलैहिमुल् मलाएकतो अल्ला तख़ाफ़ू व ला तहज़नू व अबशेरू बिलजन्नतिल्लती कुन्तुम तूअदून ।

अर्थात् जो लोग अल्लाह पर समुचित रूप से पूर्ण विश्वास करके दृढ़ निश्चयी और दृढ़ संकल्प रहते हैं उन पर अल्लाह के फ़रिश्ते (ईशदूत) उतरते हैं तथा उन्हें इल्हाम द्वारा यह शुभ सूचना देते हैं कि तुम किसी प्रकार का भय अथवा किसी प्रकार का खेद मत करो । जिस स्वर्ग की तुम्हारे साथ प्रतिज्ञा की गई वह तुम्हें अवश्य मिलेगा ।

अस्तु, इस पवित्र कथन में स्पष्ट रूप से बता दिया गया है कि अल्लाह के भक्त दु:ख और भय के समय अल्लाह से सुवार्ता और ईशवाणी प्राप्त करते हैं और अल्लाह की ओर से फ़रिश्तों द्वारा उन्हें प्रोत्साहन दिया जाता है । इसके अतिरिक्त एक अन्य आयत में फ़रमाता है कि :-

لَهُمُ الْبُشْرٰى فِي الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَفِي الْاٰخِرَةِ [3]

---

 [1] الفاتحة : ۶، ۷ ، [2] حٰم السجدة : ۳۱ ، [3] یونس : ۶۵ ،
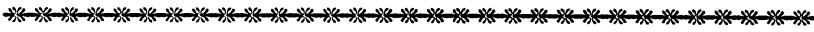
लहुमुल् बुशरा फ़िल् हयातिद्दु नियां व फ़िल आख़ेरते ।

अर्थात् ख़ुदा के प्रिय मित्रों और भक्त जनों को इल्हाम तथा सुवार्ता द्वारा इस संसार में शुभ-सूचना मिलती है और अगली ज़िन्दगी में भी मिलेगी ।

इल्हाम (ईशवाणी) और सुवार्ता क्या है ?

स्मरण रहे कि इल्हाम के शब्द से यहाँ पर यह तात्पर्य नहीं कि अपने सोच व बिचार से कोई बात हृदय में पड़ जाये उदाहरणतया जब कवि कोई दोहा रचने का यत्न करता है अथवा एक पद रचकर दूसरे के लिए विचार करता है तो सहसा दूसरा पद उसके हृदय में पड़ जाता है इस प्रकार से कोई बात हृदय में पड़ जाना इल्हाम नहीं है अपितु यह क्रिया तो प्राकृतिक विधान के अनुसार अपनी विचारधारा का एक परिणाम है । जो व्यक्ति अच्छी अथवा बुरी किसी भी बात केलिए विचार करता है, उसके प्रयत्न और खोज के अनुसार कोई न कोई बात उसके हृदय में अवश्य पड़ जाती है । उदाहरणतया एक व्यक्ति नेक और सत्यव्रती है जो सत्यता और कल्याण के पक्ष में कुछ दोहों का सृजन करता है और दूसरा व्यक्ति जो नीच और कमीना है वह अपनी कविता में अनृत और झूठ का पक्षपात करता है और सत्य प्रेमियों के प्रति अपशब्द बकता है तो निस्सन्देह ये दोनों व्यक्ति कुछ न कुछ दोहों की अवश्य रचना कर लेंगे। अपितु इसमें भी कोई आश्चर्य नहीं कि वह सत्यप्रेमियों का शत्रु जो सदैव असत्य का पक्षपाती रहा है हमेशा के अभियास के कारण उस की कविता अच्छी हो अत: यदि केवल दिल में पड़ जाने का नाम इल्हाम है तो एक दुश चरित्र कवि जो सच्चों का दुश्मन और सदैव हक की मुखालफ़त के लिए कलम उठाता है और झूठ से काम लेता है ख़ुदा की ओर से इल्हाम पाने वाला कहलाएगा । संसार में उपन्यासों इत्यादि में अद्भुत् जादू और चमत्कारमय वर्णन पाये जाते हैं, और तुम देखते हो कि इस प्रकार सरासर झूठे लेकिन लगातार निबन्ध लोगों के हृदयों में पड़ते हैं अत: क्या हम उनको इल्हाम कह सकते हैं ?

बल्कि यदि इल्हाम केवल दिल में कुछ बातें पड़ने का नाम है तो एक चोर भी इल्हाम वाला कहला सकता है क्योंकि वह बहुधा चिन्तन करके सेन्ध

लगाने के बड़े अचछे ढंग निकाल लेता है तथा डाका डालने की उत्तम विधियां तथा वध करने के अद्भुत साधन उसके दिल में गुज़र जाते है तो क्या यह उचित है कि हम इन सभी अपवित्र और घृणित साधनों का नाम इल्हाम और सुवार्ता रख दें ? कदापि नहीं, अपितु यह उन लोगों का विचार है जिनको अब तक उस सच्चे ख़ुदा का पता नहीं जो स्वयं अपने पवित्र कथनों और मधुर वचनों से हृदयों को ढारस बन्धाता है, सन्तोष देता है तथा इस सूक्ष्म ज्ञान से अनभिज्ञ लोगों को आध्यात्मिक सूक्ष्म ज्ञान तथा रूहानी ज्ञान की ज्योति प्रदान करता है ।

इल्हाम क्या चीज़ है ? वह पाक और क़ादिर ख़ुदा का एक ख़ुदा की ओर से चुने हुए बन्दा के साथ या उस के साथ जिसको चुनना चाहता है एक ज़िंदा और शक्ति वाले कलाम के साथ वाणी करना है । यह मधुर सुवार्ता जब पर्याप्त और सन्तोषजनक क्रम से प्रारम्भ हो जाए तथा उसमें दूषित विचारों और विकारों का अंधेरा सम्मिलित न हो तथा न ही अधूरे और अपूर्ण निरर्थक शब्द हों अपितु वह सुवार्ता आनन्द प्रद वाक्यों, हिकमत से पुर और प्रभाव से भरा हुआ हो शब्दों तथा प्रभावोत्पादक शैली में हो तो वह ख़ुदा का कलाम है जिस के द्वारा वह अपने बंदा को प्रोत्साहन और सन्तोष देना चाहता है तथा पर्दे से बाहर आकर अपने को उस के सम्मुख प्रकट कर देता है । स्मरण रहे कि कभी कभी सुवार्ता परीक्षा के रूप में भी होती है । ऐसी सुवार्ता पूर्णरूप से कल्याणमयी सामग्री अपने साथ नहीं रखती अपितु उसके द्वारा ख़ुदा तआला के भक्त को उसकी प्रारम्भिक अवस्था में परखा जाता है ताकि वह उस इल्हाम की सुवार्ता के एक कण का स्वाद लेकर, अपने क्रिया-कलाप वास्तविक रूप में सच्चे इल्हाम पाने वालों के समान बना ले अथवा यदि वह उसके योग्य नहीं तो ठोकर खाकर पतित हो जाए । यदि वह व्यक्ति इल्हाम पाने वाले सत्यव्रती लोगों की न्याई अपने को नहीं बनाता और उस पुरस्कार की सम्पूर्ण प्राप्ती से वंचित रह जाता है और उसके पास केवल व्यर्थ की डींग और शेख़ी रह जाती है । करोड़ों नेक बंदों को इल्हाम का पुरस्कार मिलता रहा है किन्तु उनकी पदवी ख़ुदा तआला के निकट एक श्रेणी की नहीं बल्कि ख़ुदा के पाक नबी जो पहले दरजा पर कमाल सफ़ाई से ख़ुदा का इल्हाम पाने वाले हैं वह भी मरतबा में

बराबर नहीं ख़ुदा तआला फ़रमाता है :-

تِلْكَ الرُّسُلُ فَضَّلْنَا بَعْضَهُمْ عَلٰى بَعْضٍ ۘ¹

तिलकर्रोसोलो फ़ज़्ज़लना बाज़हुम अला बाज़िन ।

अर्थात् कुछ नबियों को कुछ दूसरे नबियों पर महानता और बड़ाई प्राप्त है ! इस से सिद्ध होता है कि इल्हाम केवल अल्लाह की देन और कृपा है । इस के द्वारा महानता और बड़ाई प्राप्त नहीं हो जाती अपितु बड़ाई उस सत्यता आज्ञाकारी और सेवाभाव के अनुसार है जिसे ख़ुदा जानता है । यदि इल्हाम अपनी शुभ और पुण्य शर्तों के साथ हो तो वह भी उन का एक फल है । इस में कोई सन्देह नहीं कि यदि इल्हाम इस रूप में हो कि भक्त एक प्रश्न करता है और ख़ुदा उस का उत्तर देता है । इसी प्रकार क्रमानुसार प्रश्नोत्तर का क्रम चलता रहे और इलाही प्रताप तथा अलौकिक प्रकाश इल्हाम में पाया जाए तथा भावी ज्ञान के रहस्य अथवा शुद्ध ब्रहमज्ञान पर आधारित हो तो वह ख़ुदा का इल्हाम है । ख़ुदा के इल्हाम में यह आवश्यक है कि जिस प्रकार एक मित्र दूसरे मित्र से मिल कर परस्पर वार्तालाप करता है । जब भक्त किसी बात के विषय में ख़ुदा से प्रश्न करे तो उस के उत्तर में एक स्वादिष्ट और आनन्दप्रद शब्द ख़ुदा की ओर से श्रवण करे जिसमें अपनी आत्मा, मन या सोच-विचार का लेशमात्र भी अंश न हो और वह वार्तालाप उसके लिए ख़ुदा की देन है । ऐसा भक्त ख़ुदा के निकट अति प्रिय है । ....किन्तु इस श्रेणी का इल्हाम जो ख़ुदा की ओर से अलौकिक दान हो और सजीव सशक्त और पावन सुवार्ता का क्रम अपने भक्त को ख़ुदा की ओर से प्राप्त हो । यह पुरस्कार किसी को नहीं मिलता, सिवाय उन लोगों के जो ईमान, विश्वास सेवाभाव एवं शुद्ध सत्कर्मों में उन्नति करें तथा उस चीज़ में जिसको हम वर्णन नहीं कर सकते । सत्य और पावन इल्हाम इलाही (ख़ुदाई) शक्ति के बड़े-बड़े चमत्कार दिखलाता है । प्राय: देखा गया है कि पहले एक अति तीव्र प्रकाश पैदा होता है और उसके साथ ही एक सशक्त प्रतापवान चमत्कार इल्हाम आता है । इससे बढ़कर और क्या होगा कि इल्हाम पाने वाला उस परमसत्ता ख़ुदा से वार्तालाप करता है कि जो पृथ्वी और

¹ البقرة : ٢٥٤

आकाश का निर्माता है । संसार में ख़ुदा का दर्शन यही है कि ख़ुदा से बातें करें । किन्तु हमारे इस वर्णन में मनुष्य की वह अवस्था सम्मिलित नहीं है जो किसी की वाणी पर कोई ऊलजलूल शब्द या वाक्य अथवा दोहा आ जाए और उस के साथ कोई वार्तालाप न हो । स्मरण रखना चाहिये कि ऐसा व्यक्ति ख़ुदा की परीक्षा में गिरिफ़तार है, क्योंकि ख़ुदा इस विधि से भी आलसी और उपेक्षावृत्ति रखने वाले बन्दों की परीक्षा लेता है कि कभी कोई वाक्य या इबारत किसी के हृदय पर अथवा जिह्वा पर उतारी जाती है और वह अन्धे की भांति हो जाता है । वह नहीं जानता कि वह इबारत कहां से आई ? ख़ुदा की ओर से अथवा शैतान की ओर से ? अत: ऐसे वाक्यों के पश्चात् ख़ुदा से क्षमा याचना करना अत्यन्त आवश्यक है । किन्तु यदि एक पावन विभूति एवं साधु पुरुष को प्रत्यक्ष रूप से ख़ुदा से सुवार्ता प्रारम्भ हो जाए तथा सुवार्ता के रूप में एक प्रकाशमय, आनन्दप्रद, सार्थक, तथा प्रतापवान् वाणी उस को सुनाई दे तथा बार-बार ऐसी सुवार्ता के सुनने का उसको अवसर मिला हो कि ख़ुदा तथा उस के मध्य में नितांत जाग्रतावस्था में कम से कम दस बार प्रश्नोत्तर हुआ हो । उसने प्रश्न किया, ख़ुदा ने उसका उत्तर दिया पुन: उसी समय सर्वथा जाग्रतावस्था में उस ने कोई और निवेदन किया और ख़ुदा ने उस का भी उत्तर दिया । पुन: विनम्र निवेदन किया, ख़ुदा ने उस का भी उत्तर दिया । इसी प्रकार दस बार तक उस में और ख़ुदा में वार्तालाप होता रहा हो तथा ख़ुदा ने कई बार इस सुवार्ता में उस की दुआएँ स्वीकार की हों । श्रेष्ठ ज्ञान तत्वों की उस को सूचना दी हो, भावी घटनाओं से उसे अवगत किया हो और अपने सुस्पष्ट और प्रत्यक्ष वार्तालाप से बारम्बार प्रश्नोत्तर का पुरस्कार उसे प्रदान किया हो, तो ऐसे व्यक्ति को ख़ुदा का अति धन्यवादी होना चाहिये तथा अपने को सब से अधिक ख़ुदा के मार्ग में न्योछावर करना चाहिये क्योंकि ख़ुदा ने अपनी विशेष अनुग्रह से अपने समस्त भक्तों में से उसे चुन लिया तथा उन सत्यप्रिय लोगों का उसको उत्तराधिकारी बना दिया जो उस से पूर्व गुज़र चुके हैं । यह पुरस्कार यदाकदा मिलने वाला एवं सौभाग्य की बात है । जिस को यह पुरस्कार मिल गया, उस के लिए उस के पश्चात् जो कुछ है तुच्छ और हेय है ।

इस्लाम की विशेषता

इस पदवी और इस श्रेणी के लोग इस्लाम में सदैव जन्म लेते रहे हैं, यह इस्लाम की ही विशेषता है जिसमें ख़ुदा अपने भक्त के निकट हो कर उस से बातें करता है और उस के भीतर बोलता है । वह उसके हृदय में अपना आसन बनाता है तथा उस के भीतर से उसे आकाश की ओर (अर्थात् उच्चता की ओर) खींचता है और उस को वह सभी पुरस्कार प्रदान करता है जो पहलों को दिए गए । खेद है कि अन्धा संसार नहीं जानता कि मनुष्य निकट होते होते कहां तक पहुँच जाता है । वे स्वयं तो पग नहीं उठाते और यदि जो पग उठाए तो या तो उस को काफ़िर कहा जाता है अथवा उस को उपास्य कह कर ख़ुदा का स्थान दे दिया जाता है । यह दोनों ही कृत्य अत्याचार और सीमा की उल्लंघना हैं । एक न्यूनता की सीमा के पार जाकर तथा दूसरा अधिकता की सीमा का उल्लंघन कर के पैदा हुआ । किन्तु अकलमंद व्यक्ति को चाहिये कि वह निरुत्साहित न हो और उस स्थान एवं उस श्रेणी का इन्कार न करे तथा उस श्रेणी और उस स्थान वाले की शान को भंग न करे, तथा न ही उस की पूजा प्रारम्भ कर दे। ऐसे अवसर पर ख़ुदा वह संबन्ध उस बंदे पर प्रकट करता है मानों अपनी उलूहिय्यत की चादर उस पर डाल देता है। और ऐसा व्यक्ति ख़ुदा को देखने का दर्पण बन जाता है । यही रहस्य है जो हमारे नबी सल्लल्लाहो अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया कि जिसने मुझे देखा उसने ख़ुदा के दर्शन कर लिए । तात्पर्य यह कि यह भक्तों के लिए कड़ी चेतावनी है। और इस पर रूहानिय्यत की सब राह ख़त्म हो जाती है और पूर्ण तसल्ली मिलती है । तथा उसे पूर्ण सन्तोष दिलाया जाता है ।

वक्ता को इलाही वार्तालाप का पुरस्कार तथा पदवी मिलना

मैं मानव जाति से अन्याय करूँगा यदि मैं इस समय ज़ाहिर न करूँ कि वह पदवी जिस की परिभाषा का उल्लेख मैं ने अभी किया है तथा वह इलाही वार्तालाप जिसकी व्याख्या मैंने अभी ऊपर की है वह ख़ुदा की अपार कृपा ने

मुझे प्रदान की है ताकि मैं नेत्रहीनों को नेत्र प्रदान करूं और खोजने वालों को उस के खोए हुए का पता बताऊं एवं सत्य के जिज्ञासुओं को उस पवित्र स्रोत से अवगत करूं जिस की चर्चा बहुतों में है और पाने वाले थोड़े हैं । मैं श्रोताओं को विश्वास दिलाता हूँ कि वह ख़ुदा जिस के मिलने से मानव की मुक्ति तथा सदैव का सुख और मोक्ष मिलता है वह पवित्र क़ुरान के अनुसरण के अतिरिक्त कदापि नहीं मिल सकता । काश ! जो मैं ने देखा है लोग देखें ! जो मैं ने सुना है, वह सुने ! और मन गढ़त कथाओं को छोड़ दें और तथ्य की ओर दौड़ें !! वह सम्पूर्ण ज्ञान का साधन जिस से ख़ुदा दिखाई देता है, वह मैल उतारने वाला जल जिस से समस्त सन्देह दूर हो जाते हैं, वह दर्पण जिस से उस सर्वश्रेष्ठ सत्ता के दर्शन होते हैं, ख़ुदा का वह वार्तलाप तथा सुवार्ता ही है जिस का मैं अभी उल्लेख कर चुका हूँ । जिस की आत्मा में सत्य की जिज्ञासा और तड़प है, वह उठे और ढूँढे । मैं सत्य कहता हूँ कि यदि रूहों में वास्तविक खोज की लगन उत्पन्न हो जाए और हृदयों में वास्तविक प्यास लग जाये तो लोग इस मार्ग की खोज करें और इस राह को ढूण्ढने लगें । किन्तु यह मार्ग किस प्रकार खुलेगा और यह पर्दा किस उपचार से उठेगा ? मैं समस्त जिज्ञासुओं को विश्वास दिलाता हूँ कि केवल इस्लाम ही है जो इस मार्ग की शुभसूचना देता है । दूसरी जातियां तो ख़ुदा के इल्हाम पर प्राचीनकाल से ही मुहर लगा चुकी है । अतः यह निश्चय कर लो कि यह ख़ुदा की ओर से अवरोध नहीं प्रत्युत दुर्भाग्यवश उस से वञ्चित रहने के कारण मनुष्य एक बहाना बना लेता है । निश्चय पूर्वक विश्वास करो कि जिस प्रकार यह सम्भव नहीं कि हम बिना नेत्रों के देख सकें अथवा बिना कानों के सुन सकें या बिना वाणी के बोल सकें, उसी प्रकार यह भी सम्भव नहीं कि बिना क़ुरान के उस परम प्रिय का दर्शन कर सकें । मैं जवान था, अब बूढ़ा हुआ, किन्तु मैं ने कोई न पाया, जिस ने इस पावन अलौकिक स्रोत के बिना उस सुस्पष्ट प्रत्यक्ष मअरिफ़त (ब्रह्म-ज्ञान) का प्याला पिया हो ।

पूर्ण ज्ञान का साधन ख़ुदा तआला का इल्हाम है !

प्रिय बन्धुओ ! कोई व्यक्ति ख़ुदा के निर्णयों तथा उसकी इच्छाओं में

उससे युद्ध नहीं कर सकता । निश्चय जानो कि पूर्ण ज्ञान का साधन ख़ुदा तआला का इल्हाम है । जो ख़ुदा के पवित्र नबियों और पैग़म्बरों को प्राप्त हुआ । तदुपरान्त उस ख़ुदा ने जो कृपा का दरिया है, यह कदापि न चाहा कि भविष्य में इस इल्हाम के पुरस्कार पर प्रतिबन्ध लगा दे तथा इस प्रकार संसार को विनाश के गढ़े में डाल दे प्रत्युत उसकी इल्हाम तथा उस की सुवार्ता के द्वार सदैव खुले हैं । यह आवश्यक है कि उनको उन के मार्गों से ढूंढो तब वे सुगमता से तुम्हें मिल जाएंगे । वह ज़िन्दगी का पानी आकाश से बरसा तथा उचित स्थान पर ठहरा । अब तुम्हें क्या करना चाहिये, ताकि तुम उस पानी को पी सको । यही करना चाहिये कि गिरते पड़ते उस स्रोत तक पहुँचो और अपना मुख उस स्रोत के सम्मुख रख दो, ताकि उस जीवन के पानी से तृप्त हो जाओ । मनुष्य का समस्त कल्याण इसी में है कि जहां उस नूर (जयोति) का पता मिले उसी ओर दौड़े और जहां उस खोए हुए मित्र का चिन्ह मालूम पड़े, उसी मार्ग को ग्रहण करे । देखते हो कि सदैव आकाश से प्रकाश आता है और पृथ्वी पर पड़ता है उसी प्रकार पथ प्रदर्शन और सत्य मार्ग का सच्चा नूर आकाश से ही उतरता है । मनुष्य की अपनी ही बातें तथा अपनी ही अटकले उसे सत्य मार्ग तथा वास्तविक ज्ञान नहीं दे सकतीं । क्या तुम ख़ुदा को उसकी ज्योति के बिना पा सकते हो ? क्या तुम बिना उस आसमानी रौशनी के घोर अंधेरे में देख सकते हो ? यदि देख सकते हो तो शायद इस स्थान पर भी देख लोगे ! किन्तु हमारी आंखों में चाहे देखने की शक्ति विद्यमान हो तथापि आकाशीय प्रकाश की उन्हें आवश्यकता है । हमारे कानों में यद्यपि सुन्ने की शक्ति विद्यमान है फिर भी उन्हें वायु की आवश्यकता है, जो ख़ुदा की ओर से चलती है । वह ख़ुदा सच्चा ख़ुदा नहीं है जो मौन है और सब कुछ हमारी अटकलों पर है प्रत्युत पूर्ण और सजीव ख़ुदा वह है जो अपनी सत्ता का स्वयं पता देता है और अब भी उसने यही चाहा कि स्वयं अपनी सत्ता का प्रदर्शन करे । आकाश की खिड़कियां खुलने को हैं, निकट के भविष्य में प्रातः होने वाली है । सौभाग्य शाली है वह जो उंठ बैठे और अब सच्चे ख़ुदा की खोज करे । वही ख़ुदा जिस पर कोई आपत्ति, कोई कष्ट नहीं आता। जिस का प्रताप किसी भी दुर्घटना से मन्द नहीं पड़ता । क़ुरान शरीफ़ में

अल्लाह तआला फ़रमाता है :-

اَللّٰهُ نُوْرُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ [1]

अल्लाहोनूरुस्समावाते वल् अर्ज़े

अर्थात् ख़ुदा ही है, जो सदैव आकाश और पृथ्वी का नूर है । उसी से प्रत्येक स्थान पर प्रकाश पहुँचता है । सूर्य का वही सूर्य है, पृथ्वी की सभी जीवों का वही प्राण है । सच्चा और सजीव ख़ुदा वही है । भाग्यवान है वह व्यक्ति जो उस को स्वीकार करे ।

ज्ञान का तीसरा साधन :- ज्ञान का तीसरा साधन वह तथ्य हैं जो हक्कुल यकीन (प्रयोगात्मक और परीक्षणात्मक) ज्ञान के स्तर पर हैं तथा वे समस्त दु:ख, कष्ट, और विपत्तियां हैं जो ख़ुदा के पैगम्बरों और सत्यपुरुषों को विरोधियों के द्वारा अथवा ख़ुदाई कज़ा व कदर (इलाही फैसले) से पहुंचती है तथा इस प्रकार के कष्टों और विपत्तियों से वे सभी धार्मिक निर्देश जो केवल ज्ञान के रूप में मनुष्य के दिल में थे, उस पर लागू होकर क्रियात्मक रूप में आ जाते हैं तत्पश्चात् क्रियाशीलता के क्षेत्र से विकसित होकर पूर्णत्त्व को पहुँच जाते हैं । उन निर्देशों और आदेशों पर आचरण करने वालों का अपना ही अस्तित्त्व ख़ुदा के आदेशों का एक पूर्ण संग्रह बन जाता है और वह सभी आचरण, क्षमा, प्रतिकार तथा धैर्य एवं दया इत्यादि जो केवल बुद्धि और हृदय में भरे हुए थे अब सभी अंगों को क्रियाशीलता के वरदान द्वारा उन से हिस्सा मिलता है और वे समस्त शरीर पर आकर अपने चिन्ह और प्रभाव अंकित कर देते हैं । जैसा कि अल्लाह जल्ला शानुहु फ़रमाता है :-

وَلَنَبْلُوَنَّكُمْ بِشَيْءٍ مِّنَ الْخَوْفِ وَالْجُوْعِ وَنَقْصٍ مِّنَ
الْاَمْوَالِ وَالْاَنْفُسِ وَالثَّمَرٰتِ ۗ وَبَشِّرِ الصّٰبِرِيْنَ ۙ الَّذِيْنَ
اِذَآ اَصَابَتْهُمْ مُّصِيْبَةٌ ۙ قَالُوْٓا اِنَّا لِلّٰهِ وَاِنَّآ اِلَيْهِ رٰجِعُوْنَ ؕ
اُولٰٓئِكَ عَلَيْهِمْ صَلَوٰتٌ مِّنْ رَّبِّهِمْ وَرَحْمَةٌ ۟ وَاُولٰٓئِكَ هُمُ
الْمُهْتَدُوْنَ [2] لَتُبْلَوُنَّ فِيْٓ اَمْوَالِكُمْ وَاَنْفُسِكُمْ ۟ وَلَتَسْمَعُنَّ

[1] النور: ٣٦ [2] البقرة: ١٥٦-١٥٨

مِنَ الَّذِينَ أُوتُوا الْكِتَابَ مِنْ قَبْلِكُمْ وَمِنَ الَّذِينَ أَشْرَكُوا أَذًى
كَثِيرًا ۚ وَإِنْ تَصْبِرُوا وَتَتَّقُوا فَإِنَّ ذَٰلِكَ مِنْ عَزْمِ الْأُمُورِ ٦

व ल नब्लोवन्नाकुम बेशैइम्मिनलख़ौफ़े वल जूए व नक़सिम्मिनल् अमवाले व लअनफ़ोसे वस्समराते । व बश्शेरिस्साब्रेरीन । अल्लज़ीना इज़ा असाबतहुम्मुसीबतुन क़ालू इन्ना लिल्लाहे व इन्ना इलैहे राजेऊन । उलाएका अलैहिम सलवातुम्मिर्रब्बेहिम व रहमतुन । व उलाएका होमुल मोहतदून । ल तुब्लावुन्ना फ़ी अमवालेकुम व अनफ़ोसेकुम व ल तस्मउन्न मिनल्लज़ीना ऊतुल् किताबा मिन क़ब्लेकुम । व मिनेल्लज़ीना अशरकू अज़न कसीरा । व इन तसबेरू व तत्तक़ू फ़ इन्ना ज़ालेका मिन अज़मिल उमूर ।

अर्थात् हम तुम्हें भय, भूख तथा धन की हानि, प्राणों की हानि, और प्रयत्न के निष्फल हो जाने तथा सन्तान की मृत्यु हो जाने आदि से आज़मायेंगे अर्थात् यह समस्त विपत्तियां कज़ा व कदर की ओर से अथवा शत्रु के हाथ से तुम पर आयेंगी । किन्तु उन लोगों को शुभ सूचना है जो कष्टों के समय सिर्फ़ यह कहते हैं कि हम ख़ुदा के हैं और उसी की ओर जायेंगे । उन व्यक्तियों पर ख़ुदा का दरूद (कृपा) और रहमत है । यही वे लोग हैं जो सन्मार्ग की चरम सीमा तक पहुंच गए हैं । अर्थात् केवल उस ज्ञान में कोई बड़ाई और महानता नहीं जो केवल बुद्धि और हृदय में भरा हुआ हो । अपितु वास्तविक ज्ञान वह है जो बुद्धि से उतर कर सम्पूर्ण प्रभावित अंग उससे अदब सीखें और रंगीन हो जायें तथा स्मरण शक्ति की स्मृतियां क्रियात्मक रूप में प्रदर्शित होने लगें । अत: ज्ञान को परिपक्व करने और उसमें दृढ़ता लाकर उसे उन्नति देने का यह उत्कृष्ट साधन है कि अपने शरीर के प्रत्येक अवयव पर स्पष्टतय: क्रियात्मक रूप में उसके चिन्ह अंकित कर लें । कोई साधारण ज्ञान भी बिना क्रियाशीलता के अपनी पूर्णता और दक्षता को प्राप्त नहीं हो सकता । उदाहरणतया दीर्घकाल से हम जानते हैं कि रोटी पकाना अति साधारण तथा

---

٦ آل عمران : ١٨٦ ،

सरल है, उसमें कोई सूक्ष्म तत्त्व छिपा हुआ नहीं है । केवल इतना ही है कि आटा गून्ध कर तथा उससे एक रोटी के योग्य पेड़े बनावें और उनको दोनों हाथों के परस्पर मिलाने से चौड़े करके तवा पर डाल दें और इधर-उधर घुमाकर और आग पर सेंक कर रख लें । रोटी पक जाएगी । यह तो केवल ज्ञानजन्य मौखिक जमा खर्च है किन्तु जब हम अभ्यास के बिना तथा क्रियात्मक रूप में सीखे बिना पकाने लगेंगे तो सर्वप्रथम हमारे सम्मुख यही कठिनाई आएगी कि आटे को उचित रूप से कितना गून्धे ? प्राय: या तो वह पत्थर की भांति कठोर रहेगा अथवा पतला होकर गुलगुलों के योग्य हो जाएगा; और यदि मर-मर कर और थक-थक कर गून्ध भी लिया जाए तो रोटी की यह दशा होगी कि कुछ जलेगी और कुछ कच्ची रहेगी, मध्य में टिकिया रहेगी और कई तरफ से कान निकले हुए होंगे । यद्यपि पचास वर्ष तक हम रोटी पकती हुई देखते रहे केवल ज्ञान के कारण जो अभ्यास के अधीन नहीं आया कई सेर आटे का नुकसान करेंगे । अस्तु जब छोटी-छोटी और साधारण सी बातों में हमारे ज्ञान की यह दशा है तो बड़ी-बड़ी बातों और बड़ी-बड़ी समस्याओं में क्रियाशीलता और अभ्यास को छोड़कर केवल कोरे ज्ञान और विद्या पर भरोसा क्योंकर रखें ? अतएवं ख़ुदा तआला इन पवित्र आयतों में यह सिखाता है कि जो कष्ट मैं तुम पर डालता हूँ, वे भी ज्ञान और अनुभव प्राप्ति के साधन हैं अर्थात् उनसे तुम्हारा ज्ञान पूर्ण होता है।

पुन: आगे फ़रमाता है कि तुम अपने धन और जान तथा प्राणों की हानि के द्वारा भी परीक्षा लिये जाओगे । लोग तुम्हारे धन को लूट लेंगे । और तुम्हारी हत्या करेंगे । और तुम यहूदियों और ईसाइयों तथा मुशरिकों (ख़ुदा को छोड़ कर किसी और की इबादत करने वाले) के द्वारा बहुत ही सताये जाओगे, वे तुम्हारे प्रति बहुत सी कष्ट-दायक बातें कहेंगे । अत: यदि तुम धैर्य धारण करोगे और अनुचित बातों से बचोगे तो यह बड़े उत्साह और वीरता का कार्य होगा । इन सब आयतों का तात्पर्य यह है कि शुभ तथा पुण्य ज्ञान वही होता है जो क्रियात्मक क्षेत्र में अपने जौहर दिखावे तथा निकृष्ट और अशुभ ज्ञान वह है जो कवेल ज्ञान की सीमा तक रहे, उसे कभी क्रियात्मक क्षेत्र की ओर जाने की सामर्थ्य ही न मिले ।
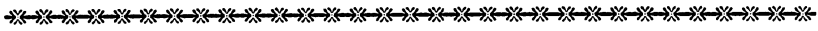
ज्ञात होना चाहिए कि जिस प्रकार धन व्यापार से बढ़ता और फलता फूलता है उसी प्रकार ज्ञान क्रियात्मक क्षेत्र में पहुंच कर अपने आध्यात्मिक पूर्णत्व और उत्कृष्ट को प्राप्त होता है । अतः ज्ञान को उत्कृष्ट सीमा पर ले जाने का बड़ा साधन क्रियाशीलता और सतत अभ्यास है । क्रियाशीलता से ज्ञान में नूर उत्पन्न होता है । यह भी ज्ञात होना चाहिए कि ज्ञान का "हक़्क़ुलयक़ीन" (अर्थात् प्रयोगात्मक और क्रियात्मक ज्ञान) के स्तर तक पहुँचना क्या है ? यही तो है कि क्रियात्मक रूप में उसका प्रत्येक कोना आज़माया जाए । इस्लाम में ऐसा ही हुआ । जो कुछ ख़ुदा तआला ने क़ुरान के द्वारा लोगों को शिक्षा दी उनको यह अवसर दिया कि क्रियात्मक रूप में उस ज्ञान को विकसित करें और उसके नूर से पुर हो जाऐं ।

आंहज़रत सल्लल्लाहो अलैहि वसल्लम के जीवन के दो युग

इसी लिए ख़ुदा ने हमारे नबी सल्लल्लाहो अलैहि वसल्लम के जीवन को दो भागों में विभक्त कर दिया । एक भाग दुःखों और कष्टों तथा विपत्तियों का तथा दूसरा भाग सफलताओं विजयों का, ताकि विपत्तियों के समय उन आचरणों का प्रदर्शन हो जो कष्टों के समय व्यक्त हुआ करते हैं तथा विजय और अधिकार के समय में वे आचरण प्रकट हों जो बिना विजय और अधिकार प्राप्त कर लेने के साबित नहीं होते अतः ऐसा ही आँहज़रत सल्लल्लाहो अलैहि व सल्लम के दोनों प्रकार के आचरण दोनों समय और दोनों अवस्थायें आ जाने से पूर्ण रूप से अभिव्यक्त हो गए । अस्तु वह विपत्तियों का समय जो हमारे नबी सल्लल्लाहो अलैहि वसल्लम पर तेरह वर्ष तक मक्का में रहा । उस समय की आप की जीवनी का अध्ययन करने से स्पष्टतया विदित होता है कि आंहज़रत सल्लल्लाहो अलैहि वसल्लम ने वे आचरण जो विपत्तियों के समय एक पूर्ण सत्यव्रती को दिखलाने चाहिये - अर्थात् ख़ुदा पर भरोसा रखना और ग़म से न घबराना, और अपने कार्यक्रम में आलस्य न दिखाना, किसी के आतंक से आंतकित न होना आदि - इस प्रकार दिखला दिए कि इन्कार करने वाले ऐसी दृढ़ता को देखकर ईमान ले आए और साक्षी दी कि जब तक किसी

का ख़ुदा पर पूर्ण भरोसा न हो उस समय तक उस में इस प्रकार की दृढ़ता और ऐसी सहन-शीलता नहीं आ सकती ।

जब दूसरा समय आया - अर्थात् विजय और शक्ति तथा धन दौलत का समय, जो उस युग में आँ हज़रत (स.अ.व.) के महान् आचरण जैसे क्षमादान, मुक्तिदान, वीरता आदि ऐसे उत्कृष्ट रूप में प्रदर्शित हुए कि इन्कार करने वालों का एक बहुत बड़ा ग्रोह उन्हीं आचरणों को देख कर ईमान लाया । कष्ट पहुँचाने वालों को क्षमा किया, नगर से निर्वासित करने वालों को अमन दिया उनके निर्धनों को धन दौलत से धनवान कर दिया तथा अपने बड़े-बड़े शत्रुओं को अपने अधिकार में आ जाने पर क्षमा कर दिया । अत: अधिकांश व्यक्तियों ने आप के इन उत्कृष्ट महान् आचरणों को देखकर साक्षी दी कि जब तक कोई ख़ुदा की ओर से वास्तविक रूप में सच्चा न हो यह सदाचार कदापि नहीं दिखला सकता । यही कारण है कि आपके शत्रुओं की पुरानी छुपी हुई दुश्मनियाँ एक दम दूर हो गयीं । आपका सब से महान् आचरण जिसको आपने सिद्ध कर के दिखला दिया, वह यह था जिस का क़ुरान शरीफ़ में इन शब्दों में उल्लेख किया गया है :-

قُلْ اِنَّ صَلَاتِیْ وَنُسُکِیْ وَ مَحْیَایَ وَمَمَاتِیْ لِلّٰہِ رَبِّ الْعٰلَمِیْنَ ۱

क़ुल इन्ना सलाती व नोसोकी व मह्याया व ममाती लिल्लाहे रब्बिल् आलमीन ।

अर्थात् उनको कह दे कि मेरी इबादत मेरा बलिदान और मेरा मरना तथा मेरा जीवित रहना सभी कुछ ख़ुदा के लिए है अर्थात् उसका जलाल (प्रताप) प्रदर्शित करने के लिये तथा उसके बन्दों को विश्राम और सुख देने के लिए है - ताकि मेरे मरने से उनको जीवन मिले । इस स्थान पर जो ख़ुदा के रास्ते में और बन्दों के कल्याण के लिये मरने की बात बताई गई है, उस से कोई यह न समझे कि आपने नऊज़ोबिल्लाह (हम अल्लाह की शरण में आते हैं) जाहिलों या दीवानों के समान आत्महत्या का इरादा कर लिया था इस ख़्याल से कि ख़ुद को किसी हथियार के द्वारा हलाक कर देना औरों को लाभ देगा । अपितु आप इन कमीनी बातों के कट्टर विरोधी थे । पवित्र क़ुरान ऐसी

۱ الانعام: ۱۶۳
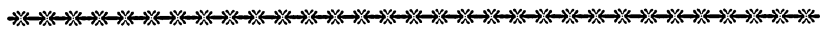
आत्म हत्या के अपराधी को दण्डनीय ठहराता है । जैसे कि कहा है :-

وَلَا تُلْقُوْا بِاَيْدِيْكُمْ اِلَى التَّهْلُكَةِ [1]

वला तुलक़ू बे ऐदीकुम इलत्तहलुकते ।

अर्थात् आत्म हत्या न करो और अपने हाथों से अपनी मृत्यु का कारण न बनो ।

यह बात सर्व विदित है कि यदि खालिद (नाम व्यक्ति) के पेट में पीड़ा हो और ज़ैद (नाम व्यक्ति) उस पर दया करके अपना सर फोड़ना प्रारम्भ कर दे तो ज़ैद ने खालिद के लिए कोई भलाई नहीं की अपितु अपने मस्तक को बेवक़ूफ़ी की क्रिया से व्यर्थ ही फोड़ा । भलाई का काम तब होता जब कि ज़ैद, ख़ालिद की सेवा में समुचित विधि से तत्पर रहता और उसके लिए उत्तम औषधियां जुटाता तथा वैद्यक सिद्धान्तानुसार उस की चिकित्सा और उपचार करता किन्तु उसके सर फोड़ने से ज़ैद को तो कोई लाभ न पहुंचा, व्यर्थ ही अपने शरीर के एक उत्कृष्ट अवयव को कष्ट पहुंचाया ।

अस्तु, इस आयत का तात्पर्य यह है कि आंहज़रत सल्लल्लाहो अलैहि वसल्लम ने निश्चय ही वास्तविक और सच्चे अर्थों में सहानुभूति तथा परिश्रम करके मानव समाज के कल्याण और मुक्ति के लिए अपने प्राणों को समर्पित कर दिया था और दुआ तथा प्रचार के द्वारा, कठिनाइयाँ और विपत्तियां सहन करके और प्रत्येक उचित एवं अनुकूल विधि द्वारा अपने प्राण तथा विश्राम को उस राह में न्यौछावर कर दिया था । जैसा कि अल्लाह जल्ला शानुहु फ़रमाता है :-

لَعَلَّكَ بَاخِعٌ نَّفْسَكَ اَلَّا يَكُوْنُوْا مُؤْمِنِيْنَ [2]

فَلَا تَذْهَبْ نَفْسُكَ عَلَيْهِمْ حَسَرٰتٍ [3]

लअल्लका बाख़िउन्नफ़सका अल्ला यकूनू मोऽमेमीन
फ़ला तज़हब नफ़्सुका अलैहिम हसरातिन ।

अर्थात् क्या तू इस दुःख और कठोर परिक्षा में जो लोगों के लिए उठा रहा है अपने आप को मिटा डालेगा और क्या उन लोगों के लिये जो सत्यको स्वीकार नहीं करते तू उनके लिए चिन्ता करके अपने प्राण दे देगा ? अतः

[1] البقرة : ١٩٦ [2] الشعرآء : ٤ [3] فاطر : ٩

क़ौम के लिए प्राण देने का उचित ढंग यही है कि क़ौम की भलाई के लिए प्राकृतिक विधान के लाभदायक मार्गों के अनुसार प्राणों को संकट में डाले और उचित प्रयत्न करते हुए अपने प्राणों की आहुति दे दे । यह कदापि उचित नहीं कि जाति को भयंकर परिस्थिति में अथवा उसे पथभ्रष्ट और भयानक दशा में देख कर अपने मस्तक पर पत्थर मार ले अथवा दो तीन रत्ती संखिया खा कर इस संसार से चल बसे और फिर समझे कि हमने अपनी इस अनुचित क्रिया से जाति को मुक्ति दे दी । इसको पुरुषत्व नहीं कहा जा सकता । यह सर्वथा नपुंसकता है । बे होसला लोगों का सदा से यही नियम है कि अपने को कठिनाई के सहन करने के योग्य न पाकर झट पट आत्महत्या की ओर दौड़ते हैं । इसके पश्चात् ऐसी आत्महत्या के कुछ भी अर्थ निकाले जाएं किन्तु यह क्रिया निस्सन्देह बुद्धि और बुद्धिमानों के लिए एक कलंक और निर्लज्जता है । स्पष्ट है कि ऐसे व्यक्ति का धैर्य और शत्रु का मुकाबला न करना विश्वसनीय नहीं है जिसे बदला लेने का अवसर ही न मिला । इस सम्बन्ध में कुछ नहीं कहा जा सकता कि यदि उसे प्रतिकार और प्रतिहिन्सा की अग्नि निकालने का अवसर मिलता तो क्या कुछ करता ? जब तक मनुष्य पर वह समय न आवे जो एक कठिनाइयों, विपत्तियों का समय हो तथा एक शक्तिवान होने एवं शासक और धनवान होने का समय हो । उस समय तक उसके वास्तविक आचरण कदापि प्रकट नहीं हो सकते ।

स्पष्ट है कि जो व्यक्ति केवल दुर्बलता, निर्धनता तथा अधीनता की अवस्था में लोगों की मारें खा खा कर मर जाए और शक्ति सम्पन्नता, राज्य सत्ता तथा धन दौलत का समय न पावे उसके आचरण में से कुछ भी सिद्ध न होगा और यदि किसी युद्ध क्षेत्र में नहीं गया तो यह भी प्रमाणित न होगा कि वह वीर था अथवा कायर । उसके आचरण के विषय में हम कुछ नहीं कह सकते क्योंकि हम नहीं जानते हमें क्या मालूम है कि यदि वह अपने शत्रुओं पर अधिकार कर लेता और उन्हें अधीन कर लेता तो उनसे क्या व्यवहार करता और यदि वह दौलतमंद हो जाता तो उस धन को कोष में एकत्र करता अथवा लोगों को देता । यदि वह किसी युद्ध क्षेत्र में आता तो दुम दबा कर भाग जाता अथवा वीरों की भांति हाथ दिखाता किन्तु ख़ुदा की कृपा और फ़ज़ल ने

हमारे नबी सल्लल्लाहो अलैहि वसल्लम को उन आचरणों को प्रदर्शित करने का अवसर दिया । उदाहरण के रूप में दान-वीरता, धैर्यता, क्षमा, न्याय अपने अपने अवसर पर ऐसी पूर्णता से प्रकट हुए कि उसका उदाहरण संसार में खोजना व्यर्थ है । आप ने दोनों युगों दुर्बलता और सबलता तथा निर्धनता और अमीरी में समस्त संसार को दिखला दिया कि वो पवित्र सत्ता कैसी महान और सर्वश्रेष्ठ आचरणों की स्वामी थी कोई ऐसा मानवीय उच्च आचरण नहीं जिसको प्रदर्शित करने के लिए ख़ुदा तआला ने आपको अवसर न दिया हो । शूरवीरता, दानवीरता, दृढ़ता, धैर्य, क्षमाशीलता, विशाल हृदयता तथा सहिष्णुता इत्यादि समस्त सदाचार इस प्रकार सिद्ध हो गए कि संसार में उसकी मिसाल ढूंढना असम्भव है । हां यह सच है कि जिन्होंने अत्याचारों को चरमसीमा तक पहुँचा दिया और इस्लाम का समूल विनाश करना चाहा, ख़ुदा ने उन्हें भी दण्ड दिए बिना नहीं छोड़ा क्यों कि उन्हें बिना दण्ड के छोड़ना मानों सत्यव्रत लोगों और सच्चे लोगों का उनके पैरों के नीचे कुचल कर नाश करना था ।

आँहज़रत सल्लल्लाहो अलैहि वसल्लम के युद्धों के उद्देश्य

आँहज़रत सल्लल्लाहो अलैहि वसल्लम के युद्धों का यह उद्देश्य कदापि न था कि अकारण ही लोगों का रक्त बहाया जाए । वह अपने पूर्वजों के देश से निर्वासित किए गये थे तथा कई मुसलमान स्त्रियां और पुरुष बेकसूर अकारण ही शहीद कर दिए गए । यही नहीं अपितु दुष्ट अपनी दुष्टता में बढ़ते जा रहे थे और इस्लाम की शिक्षा में बाधाएं डालते चलें जा रहे थे अतएवं ख़ुदा के रक्षाविधान ने यह चाहा कि निरपराध पीड़ितों का इस प्रकार से नरसंहार होने से बचा ले इसलिए जिन्होंने तलवार उठाई उन्हीं के साथ तलवार का मुकाबला हुआ। सारांश यह कि हत्या-कांड रचने वालों का उपद्रव ठंडा करने लिए और शरारत को दूर करने के लिए वह युद्ध थे और उस समय हुए जबकि अत्याचारी लोग सच्चों का नाश करना चाहते थे उस अवस्था में यदि इस्लाम रक्षात्मक युद्ध न करता तो सहस्रों निरपराध बच्चे और

स्त्रियां क़तल हो जाते और इस्लाम का नाम ही मिट जाता ।

स्मरण रहे कि हमारे विरोधियों का यह विचारना सर्वथा अन्यायपूर्ण है कि इल्हामी हिदायत ऐसी होनी चाहिए जिस के किसी भी स्थान और किसी भी अवसर पर शत्रुओं के मुकाबला की शिक्षा न हो और सदैव सहिष्णुता और दया के रूप में प्रेम और सहानुभूति प्रदर्शित होती रहे । ऐसे लोग अपने विचार में ख़ुदा तआला की बड़ी प्रतिष्ठा कर रहे हैं कि जो उस के सम्पूर्ण गुणों और पूर्ण विशेषताओं को केवल नर्मी, दया, द्रवता तक ही सीमित रखते हैं । किन्तु इस विषय में ध्यानपूर्वक विचारने और चिन्तन करने वालों को भली प्रकार विदित हो सकता है कि यह लोग बड़ी मोटी और भारी भूल में पड़े हुए हैं । ख़ुदा के प्राकृतिक विधान पर दृष्टि डालने से यह स्पष्ट सिद्ध होता है कि वह ख़ुदा संसार के लिए दया का सागर अवश्य है परन्तु वह दया सदैव और प्रत्येक दशा में नर्मी तथा द्रवता के रूप में अभिव्यक्त नहीं होती अपितु वह दया और कृपा की याचना के अनुरूप एक माहिर वैद्य की तरह कभी मधुर रस हमें पिलाता है और कभी कटु औषधि भी देता है । उस की दया और रहमत मानव समाज पर उसी रूप में उतरती है जैसे हम में से एक व्यक्ति अपने सम्पूर्ण शरीर पर दयालु होता है । इस बात में किसी को सन्देह नहीं हो सकता कि हम में से प्रत्येक व्यक्ति अपने पूर्ण शरीर से प्यार रखता है । यदि कोई हमारे शरीर का एक बाल उखाड़ना चाहे तो हम उस पर क्रोध करने लगते हैं । किन्तु ऐसा गुण होते हुए भी कि हमारा प्रेम - जो हम अपने शरीर से रखते हैं हमारे पूर्ण शरीर में विभक्त है यद्यपि शरीर के समस्त अंग हमें प्रिय हैं तथा हम किसी भी अंग की हानि नहीं चाहते परन्तु फिर भी यह बात प्रत्यक्ष है कि हम अपने समस्त अंगों से एक जैसा प्यार नहीं रखते । अपितु बड़े और महत्वपूर्ण प्रधान अंगों जिन पर बहुधा हमारी इच्छा और उद्देश्य आधारित हैं का प्यार हमारे हृदयों पर छाया रहता है । इसी प्रकार हमारी दृष्टि में एक अंग के प्यार की अपेक्षा बहुत से अंगों का प्यार अधिक होता है । अत: जब कभी हमारे लिये कोई ऐसा अवसर आ पड़ता है कि एक प्रधान महत्वपूर्ण अंग की रक्षा का आधार छोटे दर्जे के अंग के ज़ख़्मी करने या काटने या तोड़ने पर हो तो हम प्राणों की रक्षा के लिये निस्संकोच उस अंग

को आहत करने अथवा काटने के लिए तय्यार हो जाते हैं । यद्यपि उस समय हमारे हृदय में दुःख होता है कि हम अपने एक प्यारे अंग को घायल करते अथवा काटते हैं किन्तु इस विचार से कि इस अंग का दूषित प्रभाव किसी अन्य प्रधान और महत्वपूर्ण अंग को भी साथ ही नष्ट कर सकता है हम उसे काटने के लिए विवश हो जाते हैं । अस्तु, इसी उदाहरण से समझ लेना चाहिए कि ख़ुदा भी जब देखता है कि उस के सत्यप्रिय झूठे लोगों के हाथ से हलाक होते हैं तथा कलह और अशान्ति बढ़ रही है तो सच्चे लोगों की जान के बचाव और कलह को दूर करने के लिये उचित उपाय और साधन अपनाता है । चाहे आकाश से चाहे ज़मीन से, इसलिए कि वह जैसा रहीम (कृपालू) है वैसा ही हकीम (तत्वज्ञानी) भी है ।

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ ○

अल्हम्दो लिल्लाहे रब्बिल आलमीन

(अर्थात्:- सब पवित्र प्रशंसायें जो हो सकती हैं उस अल्लाह के लिये हैं जो तमाम जहानों का पालने वाला है ।)

*****

***

*